पाक्षिक
सारिका
वर्ष:२१, अंक:२९२
लू शुन की
जन्म शताब्दी
पर विशेष

सारिका

कहानियों और कथा-
जगत की जीवंत पाक्षिकी

वर्ष : २१, अंक : २६३, १६ से ३० सितंबर, १९८१

लू शुन की जन्म शताब्दी पर विशेष

चीनी कहानी विशेषांक

आवरण : चेन चिफो
तथा एक अन्य चीनी चित्रकार

कहानियां

15. आ क्यू की सच्ची कहानी
24. नव वर्ष की पूजा
29. गुजरे जमाने का दर्द
35. औषधि

एकांकी

41. राहगीर

लघु रचनाएं

32. परछाईं की बिदाई
34. गर्मी की तीन बलाएं
34. चीन की महान दीवार
43. समाधि-लेख
62. साबुन
63. अजनबी पुकार

लू शुन-स्मरण

10. हमें भागना नहीं, संघर्ष करना चाहिए : एग्निस स्मेडली
13. आदमी में गुण किस प्रकार पैदा होते हैं : जॉन व स्टीव मैकिनॉन
44. लू शुन ने कहा है. . . : ये ईछ्युन

अन्य चीनी लेखकों की कहानियां

47. दादी मां : चओ शी
52. दोबारा चुनाव : शि जोंगशिंग
56. दयालु : चांग श्येन-ई
59. किताब न लिखने के कुछ कारण : छिन शनयान
60. हथियारविहीन गुरिल्ला दस्ता : काओ लांगथिंग
64. समुद्र : वांग जुंगहान

चीनी लघुरचनाएं

17. खरगोश की वापसी का इंतजार
49. पहाड़ खोदने वाला बेवकूफ बूढ़ा
50. चिड़िया और सीप
50. ड्रेगनप्रेमी लॉर्ड
58. घंटी की चोरी
65. शेर और लोमड़ी

धारावाहिक आयोजन

66. सफरनामा जापान (तीसरी किस्त) : मुज्तबा हुसैन
70. इतिवृत्त (चौथी किस्त) : जगदंबा प्रसाद दीक्षित

स्थायी स्तंभ

6. पाठकों का पन्ना
39. तस्वीर बोलती है

संपादक :
कन्हैयालाल नंदन

मुख्य उप-संपादक :
अवधनारायण मुद्गल

उप-संपादक :
रमेश बत्तरा, सुरेश उनियाल, बलराम, अरुण वर्द्धन

सज्जा : रवि शर्मा

खामोशी की जबान
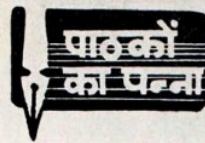
'प्रेम कथा विशेषांक' की तरह 'जब्तशुदा कहानी विशेषांक' ने भी आम आदमी की जिंदगी में एक बार फिर हलचल मचा दी. लगता है सारिका जवान हो चली है, क्योंकि मेरे छोटे से गांव में सारिका की इन दिनों काफी चर्चा है.

सारिका की आंखों में अब की बार एक खास चमक थी. ये आंखें थीं 'सरदार जी' और 'लोलिता'! इनकी चमक से उठे रोंगटे आप आज भी मेरे हाथ पर देख सकते हैं. इन दोनों कहानियों के बारे में बहुत कुछ कहना चाहता हूं पर न जाने क्यों खामोश हूं.

▣ सुरेश अरोड़ा, झज्जर (रोहतक)

विशेष

हमें प्रसन्नता है कि 'सारिका' के 'जब्तशुदा कहानियां विशेषांकों' को हमारे पाठकों ने बहुत सराहा और पसंद किया, लेकिन 1 जुलाई, 1981 अंक में प्रकाशित ख्वाजा अहमद अब्बास की कहानी—'सरदारजी' के खिलाफ गोरेगांव, बंबई की गुरु नानक सभा ने कुछ आपत्तियां उठाते हुए एक प्रस्ताव पारित किया है. प्रस्ताव में सभा की ओर से यह कहा गया है कि "ख्वाजा अहमद अब्बास ने 'सारिका' में प्रकाशित अपनी रचना (सरदारजी) में सिक्खों के खिलाफ आपत्तिजनक भाषा का प्रयोग किया है और सिक्ख संप्रदाय का अपमान किया है." और यह भी कहा कि "उनकी भाषा ने सिक्ख संप्रदाय को चुनौती दी है." प्रस्ताव में "ऐसे अशोभनीय कृत्य की निंदा" और हमारी प्रधानमंत्री या दूसरे संबंधित अधिकारियों से यह प्रार्थना की गयी है कि "ऐसे प्रकाशनों पर प्रतिबंध लगाया जाये, जो राष्ट्र की शांति के लिए खतरनाक हों."

हम विश्वासपूर्वक यह कहना चाहते हैं कि किसी भी रचना के प्रकाशन में 'सारिका' की लेशमात्र भी यह मंशा नहीं रहती कि किसी भी व्यक्ति, समुदाय, धर्म अथवा संप्रदाय की भावना को ठेस पहुंचे. हमें खेद है कि सभा ने इस रचना को सही अर्थों में पकड़ने की कोशिश नहीं की. किसी भी साहित्यिक कृति को उसकी संपूर्णता के साथ सही परिप्रेक्ष्य में न देखने का परिणाम अक्सर गलत और खतरनाक हो जाता है. सभा की भावनाओं का सम्मान करते हुए हम कहना चाहते हैं कि इस कहानी में एक वृद्ध सरदारजी का अतिमानवीय और बलिदानी चरित्र ही विकसित और रूपायित किया गया है. जिससे पढ़ने वाले के मन में उस चरित्र के प्रति सम्मान भाव ही पैदा होता है. रचनात्मक साहित्य की किसी भी विधा में मान और अपमान को उस रचना की संपूर्णता और उसकी अन्विति में ही देखा जाना चाहिए, टुकड़ों-टुकड़ों में किसी रचना को जांचना अर्थ को अनर्थ में बदल देने में सहायक होता है. 'सारिका' सामाजिक बुराइयों के खिलाफ लड़ने, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव पैदा करने, तथा विश्वजनीन भाईचारे को बढ़ावा देने का एक व्यापक मंच है. यह सभी धर्मों का सम्मान करती है. फिर भी अगर इससे किसी व्यक्ति या समुदाय की धार्मिक भावना को जरा भी ठेस पहुंची है तो हमें खेद है.

—सं.

ऐसे भी खत आते हैं!

हमारे दोस्त और आपके आशिक (कलम के अर्थ में) विजय मलिक का आरोप है कि आपका नारीयोग है. उनकी चिट्ठी मेरे स्केच के साथ है.

▣ चंचल, वाराणसी,

मैं लंबे अरसे से 'सारिका' को पढ़ रहा हूं. सांगोपांग पढ़ता हूं, मुतवातिर तौर पर पढ़ता हूं. 'सारिका' स्त्रीलिंग की सार्थकता है, ऐसा मानने लगा हूं. कमोबेश यही स्थिति आपकी भी है (यहां पर स्पष्ट कर दूं कि यह आप पर नहीं, आपकी पसंद पर टिप्पणी है, क्योंकि मुख-पृष्ठ पर 'स्त्री' ही रहती है.) 'सारिका' से संबद्ध लेखक, कलाकार अधिकतर इसी लिंग के हैं. मुझे इस जाति से विरोध नहीं है, लेकिन रचनाओं का चरित्र यदि 'मादा' हो जाये तो मजा नहीं आता. कुछ लोगों की रचनाएं इन दिनों पढ़ने को नहीं मिलीं, जो वाकई स्त्री चरित्र को उजागर करती हैं. अमृता प्रीतम, सूर्यबाला, कृष्णा सोबती वगैरह-वगैरह. यहां आपका नाम नहीं लिख रहा हूं. (पत्र को न छापने का डर है) एक विशेषांक विश्वविद्यालयीय चरित्र पर छापें तो कैसा रहेगा? यहां भी कहानियां उगती हैं और अधिक मात्रा में.

▣ विजय मलिक, वाराणसी

'नंदन जी का नारी योग' शीर्षक से भेजा गया श्री चंचल का कार्टून

जड़ों से कट कर

जुगनू जी का लेख पढ़ रहा था तो जरिया नजरिया के चित्र पर भी ध्यान खिंचा चला गया और यह चार लाईनें लिख बैठा—

सोचते हैं कि हम चांद को पा जायेंगे
पांव से निकली हुई जड़ों से बंधे बैठे हैं,
है वही जोश, वही शान अपने सीने में मगर
सैकड़ों घात निशाने पे सधे बैठे हैं.

यह सच है और हमें स्वीकारना होगा कि चांद को पाने के लिए पांव से निकली जड़ों को काटकर आगे बढ़ना होगा और मात्र खून के गर्म प्रवाह में बहकर नहीं वरन् प्रत्येक घात-प्रतिघात से अपने को बचाते हुए जीवन का मार्ग तय करना होगा. पता नहीं मेरी बात शारदेय जी को कहां तक उचित लगेगी!

▣ इबादुर रहमान, बरहज, देवरिया

इन्हें कुछ न कहो

'सारिका' बिलाशुब्हा बुलंदी की तमामतर मंजिलें तय कर चुकी है. मैंने जब्तशुदा कहानियों के दोनों अंक पढ़े.

कल इन कहानियों पर पाबंदियां आमेद की गयी थीं, इस सिलसिले में मैं क्या कहूं, मिर्जा गालिब बहुत पहले ही कह चुके हैं:—

"अगले वक्तों के हैं ये लोग
इन्हें कुछ न कहो."

इस विशेषांक की कुछ कहानियां तो मेरी पढ़ी हुई थीं, फिर भी इन्हें मैंने दुबारा पढ़ा और महसूस किया कि इन कहानियों का यकजा होना बहुत जरूरी था. इन कहानियों को यकजा करने में आपको जिन दिक्कतों का सामना करना पड़ा होगा, मैं उससे भी अच्छी तरह वाकिफ हूं; बहरहाल, आप अपनी कोशिश में बहुत कामयाब हैं, आपको मुबारकबाद.

▣ खुर्शीद सहर, आरा

सारिका; अंक : २६१

तस्वीर बोलती है

विजेताओं को बधाई!

प्रथम पुरस्कार : ३० रुपये

आज दौलत है, दीन है रोटी,
सारा इल्मो यकीन है रोटी.
डाल रक्खा है इसलिए घंघट,
मुझसे ज्यादा हसीन है रोटी.

▣ महादेव प्रसाद गुप्त,
8, नदीपुरा, ललितपुर (उ.प्र.)

द्वितीय पुरस्कार : २० रुपये

राहत तलाश कीजिए,
आटे को बेल कर.
अब तो समय है,
वन में लगी आग की तरह.

▣ क्षमा शर्मा,
87, रघुनाथपुर, जम्मू

कुछ प्रशंसनीय शीर्षक

▣ शिखा, रांची (बिहार)
▣ तुलसी नीलकंठ,
मुजफ्फर नगर (उ. प्र.)

एक आदमी
रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है,
न खाता है
वह सिर्फ रोटी से खेलता है
मैं पूछता हूं—
यह तीसरा आदमी कौन है?
मेरे देश की संसद मौन है!

—धूमिल

▣ विमल कुमार, पटना (बिहर)

तेरे माथे पे यह आंचल
बहुत ही खूब है लेकिन
तू इस आंचल से इक
परचम बना लेती तो अच्छा था.

—मजाज

▣ राजा दुबे, देवास (म. प्र.)

चुक गया है,
छतो-दीवार मकां का वो भरम,
खुली गिरस्ती में
इक बंद शिगूफा है बचा.

जिन चिरागों की लौ बीमार है.

'सारिका' के 287 वें अंक में आपके विचार 'कड़ी धूप और कांच के शामियाने' के अंतर्गत मालूम हुए और उसके बाद जुगनू शारदेय जी की कैफियत भी पढ़ी (सारिका : 288 अंक) दरअसल आपकी आशा के लिए सिर्फ लोगों के हवा में उछलते वायदे और कागजी बयानात की जरूरत नहीं, बल्कि ठोस इरादों की रोशनी की जरूरत है. जिन चिरागों को जलते हुए बहुत वक्त हो गया है, उनकी ही लौ बीमार है, वरना अब भी नये चिराग जलने को तैयार बैठे हैं और जल भी रहे हैं.

▣ राज किशोर शर्मा, बंबई

उग्रवादियों के कान पर जनेऊ

जब्तशुदा. . .अंकों के लिए मेरी बधाई पुनः स्वीकारिए. सचमुच ये अंक जिसके हाथ पड़े, उसीने जब्द कर लिये. मुझे व्यक्तिगत रूप से सामग्री बेहद रुची. इस दौर की नजाकत से अलग होने का आरोप मेरे कुछ मित्र लगा रहे हैं, उन्हें मैं ही उत्तर देने भर को काफी हूं कि मुद्रा की तरह के संन्यासी/ब्रह्मचारी हैं वे जो बालिका से कहते हैं—"चल झूठी कहीं की!" आपने तो दिल्ली रह कर ऐसे बहुत से मुखौटे देखे और उतारे होंगे, जो कहीं अति उग्रवादी होते हैं, वे घर में कान पर जनेऊ चढ़ाये घूमते हैं.

▣ शतदल, कानपुर

यह अंक

पहले हमारा इरादा लू शुन जन्म शताब्दी पर सिर्फ लू शुन की रचनाएं ही प्रकाशित करने का था और उसी विचार के तहत हमने लू शुन की बहुत-सी रचनाएं तैयार कर ली थीं. फिर हमने सोचा कि लू शुन हिंदी पाठकों के लिए अनजाने नहीं हैं, लेकिन चीनी कथा साहित्य काफी कुछ अनजाना है. इसलिए लू शुन के साथ अन्य चीनी कथाकारों की रचनाओं की तलाश शुरू की. इस तलाश में हमारे चीनी मित्र श्री मा वीग्वांग ने विशेष सहायता की. हम उनके आभारी हैं.

रचनात्मक धरातल पर पांचवीं शताब्दी ईसा पूर्व से आज तक के चीनी विचारक्रम की पड़ताल हमने अपनी सीमा में करने की पूरी कोशिश की है. सामंतशाही और चीनी राजघरानों के खिलाफ 1911 की असफल क्रांति, सांस्कृतिक और वैचारिक क्रांति, राजनीतिक क्रांति, उस क्रांति के बाद की स्थिति और आज की स्थिति का सीमित लेखा-जोखा भी अगर यह विशेषांक हमारे पाठकों के सामने स्पष्ट कर सका और भारत-चीन-मित्रता की नयी पहल के संदर्भ में आपसी समझ के सेतु-निर्माण में सहायक हो सका, तो हम अपना श्रम सार्थक समझेंगे. —सं.

'लोग लोहे की दीवारों वाले मकान में कैद हैं!'

▣ लू शुन

शाओशिंग. होस्टल में तीन कोठरियां थीं. आंगन में एक बबूल का पेड़ था. लोग कहते थे कि उस मकान में कोई औरत रहती थी, जो आंगन के पेड़ की डाल से फांसी लगाकर मर गयी थी अब पेड़ इतना ऊंचा हो गया था कि उसकी डालियों को छू पाना आसान नहीं था. मगर मकान खाली पड़ा था. कुछ वर्षों तक मैं इसी मकान में रहा और पुराने शिलालेखों की प्रतिलिपियां बनाता रहा. बहुत कम लोग मुझसे मिलने आते. उन पुराने शिलालेखों में राजनीतिक समस्याओं अथवा मामलों का कोई प्रसंग नहीं हो सकता था. बस, यही इच्छा थी कि शेष जीवन इसी प्रकार चुपचाप बीत जाये. गर्मियों में रात के समय इतने मच्छर हो जाते कि उनसे बचने के लिए एक पंखा हाथ में लेकर बबूल के पेड़ के नीचे बैठ जाता और घने पेड़ के बीच जहां-तहां दिखाई देते आकाश की ओर टकटकी लगाये रहता. पेड़ की डालियों और पत्तियों से बरफ जैसी ठंडी सूंडियां सहसा मेरी गर्दन पर टपक पड़ती थीं.

चिन-शिन-ई, जो मेरा पुराना मित्र था, कभी-कभी मिलने या बातचीत करने आ जाता. चिन आता तो अपना बड़ा-सा बस्ता टूटी मेज पर रख देता और अपना लंबा चोगा उतारकर मेरे सामने बैठ जाता. पीछा करते कुत्तों के भय से उसकी सांस उखड़ी-उखड़ी लगती थी.

एक दिन शाम के वक्त पुराने शिलालेखों की मेरी बनायी प्रतिलिपियों को देखकर चिन कौतूहलवश पूछ बैठा, "ये प्रतिलिपियां बनाने से लाभ क्या है?"

"कुछ भी नहीं."

"तो फिर इसमें समय क्यों बर्बाद करते हो?"

"समय काटने के लिए."

"इससे तो अच्छा है, तुम स्वयं कुछ लिखो. . ."

चिन का अभिप्राय मैं समझ गया. वह कुछ लोगों के साथ मिलकर एक पत्रिका 'नया नौजवान' निकाल रहा था. पत्रिका की ओर लोगों ने विशेष ध्यान नहीं दिया था, न उसका समर्थन किया था, न विरोध. मुझे लगा कि वे लोग भी एकाकीपन अनुभव कर रहे हैं, सहयोग चाहते हैं. कुछ सोचकर मैंने कहा, "कल्पना करो, लोहे की मोटी दीवारों वाला मकान है. न कोई दरवाजा है और न खिड़की या रोशनदान. हवा आने के लिए कोई रास्ता नहीं है. दीवारें बेहद मजबूत हैं. मकान में बहुत से लोग बेसुध सोये हुए हैं. निश्चय ही वे लोग घुटकर मर जायेंगे. परंतु बेसुधी से मरेंगे, इसलिए उन्हें कोई कष्ट अनुभव नहीं होगा. तुम चीख-चिल्लाकर उन्हें जगाना चाहो, तो संभव है कुछ एक की नींद उचट भी जाये. दम घुटने से उनकी मृत्यु निश्चित है. यदि कुछ अभागे जाग जायें और निश्चित मृत्यु की यातना अनुभव करें तो इससे उनका क्या भला होगा?"

"अगर अभेद्य दुर्ग में बाहरी आवाज से कुछ की नींद उचट सकती है, तो यह कैसे कहा जा सकता है कि उस लौह-कारागार को तोड़ने की कोई आशा नहीं है?"

यह सच है कि मैं आशा छोड़ चुका था, परंतु यह कैसे कह देता कि आशा थी ही नहीं! आशा तो भविष्य होती है, उसके विषय में कैसे इनकार कर देता? अपनी निराशा का उदाहरण देकर उसकी आशा पर कुठाराघात नहीं कर सका. मान लिया, लिखूंगा. परिणाम हुआ मेरी पहली कहानी 'पागल की डायरी'. तब से लिखता ही गया. जब भी मित्र कहते, छोटी-मोटी कहानी लिख डालता. . . □

लू शुन की जन्म-शताब्दी पर विशेष
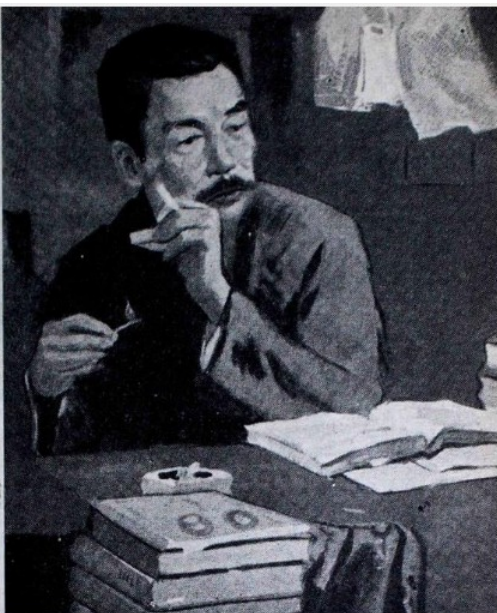
लू शुन—जन्म : २५ सितंबर, १८८१; मृत्यु : ११ अक्तूबर, १९३६

"लू शुन चीन की सांस्कृतिक क्रांति के मुखिया थे. वे सिर्फ एक महान साहित्यकार ही नहीं, महान विचारक और क्रांतिकारी भी थे. उनके इरादे पक्के होते थे. खुशामद और चापलूसी उन्हें छू भी नहीं गयी थी. आमतौर पर उपनिवेशीय गुलामी झेल रहे लोगों में ऐसी खासियत कम पायी जाती है. वे एक सच्चे, ईमानदार और बहादुर आदमी थे. हमारे इतिहास में उनके मुकाबले का दूसरा राष्ट्रनायक नहीं है. जो रास्ता उन्होंने चुना वही चीन की नयी कौमी तहजीब का रास्ता था."

—माओ त्सेतुंग.

अपने समय की तेज-तर्रार अमरीकी पत्रकार, लेखिका एवं क्रांतिकारी एग्निश स्मेडली (1892-1950) लू शुन की गहरी मित्र और सहयोगी थीं. अमरीका तथा भारत के क्रांतिकारी संगठनों में सक्रिय रहने के बाद वह चीन पहुंचीं, जहां लू शुन और उनका परस्पर सहयोग निरंतर प्रगाढ़ होता गया तथा वे सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में आमूलचूल परिवर्तन लाने के लिए एकजुट हो गये. उन्होंने क्या-क्या किया और किस प्रकार उनकी मैत्री विचार के स्तर पर परवान चढ़ी, इन सबका विस्तृत विवरण लू शुन की स्मृतियों के संदर्भ में, प्रस्तुत किया है स्वयं स्मेडली ने—

हमें भागना नहीं, संघर्ष करना चाहिए!

▣ *एग्निश स्मेडली*

बात सन् 1930 के आधा गुजर जाने की है. एक दिन, दोपहर बाद एक दंपती मेरे पास आये और उन्होंने मुझसे दो अनुरोध किये. एक तो यह कि मैं उन्हें भारत के संबंध में एक लेख लिखकर दूं तथा एक नयी पात्रिका 'दा दाओ' (द ग्रेट वे) के लिए आर्थिक सहायता करूं.

दूसरा यह कि लू शुन की पचासवीं वर्षगांठ मनाने के लिए एक विदेशी रेस्तरां किराये पर लिया जाये, जहां उनके स्वागत तथा भोज समारोह की व्यवस्था की जा सके. लू शुन चीन के एक महान लेखक थे, जिन्हें चीनी लोग 'चीन का गोर्की' कहते थे, लेकिन मैं उन्हें 'वाल्तेयर' मानती थी.

उनका पहला अनुरोध तो मैंने तुरंत मान लिया, लेकिन दूसरा खतरे से खाली नहीं था. भोज समारोह में जिन सौ पुरुष-महिलाओं को आमंत्रित किया गया था, वे खतरनाक विचारों वाले लोग समझे जाते थे. परंतु अध्यापक दंपती ने मुझे आश्वस्त करते हुए कहा कि जिन लोगों को आमंत्रित किया जा रहा है, उन्हें केवल जुबानी बुलाया जायेगा और उनसे खामोश व शांत रहने का वचन ले लिया जायेगा.

फ्रेंस कांसेसन के एक डच रेस्तरां में जन्म दिन समारोह का आयोजन किया गया.

लू शुन अपनी पत्नी तथा छोटे बच्चे के साथ जल्द ही आ गये. लू शुन से मैं पहली बार मिली. मेरे चीन प्रवास के दौरान लू शुन ही वह व्यक्ति थे, जिनसे मैं इस हद तक प्रभावित थी कि वह मेरे जीवन के सबसे महत्त्वपूर्ण साथी बन गये थे. वह दुबले और छोटे कद के थे. उस दिन वह क्रीम रंग का रेशमी गाऊन और पैरों में मुलायम चीनी जूता पहने हुए थे. उनका चेहरा भी आम चीनियों जैसा ही था, उनके नंगे सिर पर कटे हुए छोटे-छोटे कड़े बाल ब्रश की तरह खड़े थे. लेकिन मेरी स्मृति में उनका चेहरा एक अलग ढंग का प्रभावशाली व्यक्तित्व लिये हुए था. उनके ओजपूर्ण चेहरे पर एक खास किस्म की ताजगी झलक रही थी. वह अंग्रेजी नहीं बोलते थे, पर जर्मन बोलना पसंद कर लेते थे, इसलिए हम लोग जर्मन में ही बातचीत करते थे. उनके बोलने-बातचीत के ढंग तथा अन्य हाव-भाव से उनके भरे-पूरे व्यक्तित्व की झलक मिलती थी, जिसे ढंग से व्यक्त कर पाना जरा मुश्किल है. इतने प्रभावशाली व्यक्तित्व से जब मैं मिली तो खुद को बहुत अजीब, शुष्क तथा ठंडा महसूस करने लगी.

थोड़ी ही देर बाद मेहमान आने शुरू हो गये. द्वार पर, जहां मैं खड़ी थी, मैंने काफी संख्या में लोगों को लू शुन की ओर जाते देखा. एक लंबा-दुबला आदमी, जो किसी विद्यार्थी जैसा लगता था, बड़ी तेजी से आकर लू शुन के पीछे की ओर देखने लगा. जैसे ही वह हमारे पास से गुजरा, मेरे मित्रों ने बताया कि वह कम्युनिस्ट पार्टी के भूमिगत अखबार 'शंघाई बाओ' का संपादक है. इस अखबार ने शहर में पत्रकारिता के छापामार युद्ध का समां बांध दिया है. इसके थोड़ी देर बाद एक और व्यक्ति आया, जो 'चिगुरा-मुंगरा' सूट पहने था. उसके बाल बड़े-बड़े व अस्त-व्यस्त थे. वह कई महीनों की जेल काटने के

शासन तंत्र द्वारा मासूम व्यक्तियों की हत्या, मानव अधिकारों पर प्रहार आदि के प्रति उनकी घृणा इतनी तीव्र थी कि आगे चलकर उन्होंने साहित्य व कला को धारदार चाकू की तरह इस्तेमाल किया!

बाद हाल ही में छूटकर लौट आया था.

भोजन के बाद भाषणों का दौर शुरू हुआ, मेरा एक मित्र भाषणों का अनुवाद करके उसका अर्थ समझाने लगा. रेस्तरां के डच मालिक को चीनी भाषा नहीं आती थी, इसलिए उसने कोई ऐसी आपत्ति नहीं की, जिससे हम लोगों को किसी तरह की परेशानी हो. लेकिन जो चीनी बैरे थे, वे बड़े ध्यान से भाषण सुन रहे थे.

फिर जब अस्त-व्यस्त बालों वाले, जेल की सजा काट कर आये व्यक्ति ने जेल की दशा का वर्णन किया, तो हम लोगों ने बैरे नौकरों की हर हरकत को ध्यान से देखना शुरू कर दिया कि किस बात पर उनके चेहरे पर कौन-सी प्रतिक्रिया हो रही है.

उसके बाद क्रांतिकारी पत्रिका 'शंघाई बाओ' के संपादक ने अपना भाषण शुरू किया. भाषण में उसने लाल सेना तथा उन किसानों के फसल आंदोलन की पहली बार सही रपट दी, जो जमींदारों से संघर्ष करने के बाद लाल सेना में शामिल हो गये थे. उनका शामिल होना यों लग रहा था मानो छोटी-छोटी नदियां किसी बड़ी नदी में समाती जा रही हों!...

पूरे भाषण के दौरान लू शुन नये वक्ताओं को बड़े ध्यान से सुन रहे थे. महत्त्वपूर्ण अंशों पर वह इतना ध्यान दे रहे थे कि उनकी चाय की प्याली कहीं थी और उसे पकड़ने के लिए उंगलियां कहीं और जा रही थीं.

जब भाषण समाप्त हो गया तो लू शुन उठे और शांतिपूर्वक अपने पचास वर्षों के बौद्धिक विक्षोभ की गाथा—चीनी शासन व्यवस्था को उखाड़ फेंकने की कहानी सुनाने लगे.

लू शुन का जन्म चीन के एक गांव के पढ़े-लिखे परिवार में हुआ था. उस वक्त वहां 'मांचू शासन' था. वह सामंती व्यवस्था में पले-बढ़े, इसीलिए उनके मस्तिष्क में 1911 की क्रांति के पहले की आधुनिक विचारधारा का संस्कार पड़ा. वह इतने निर्धन थे कि पश्चिमी देशों में अध्ययन के लिए नहीं जा सकते थे, इसलिए वह जापान गये. वहीं 'चीनी राष्ट्रवादी आंदोलन' से उनका जुड़ाव हुआ. उन्होंने आधुनिक चिकित्सा विज्ञान का अध्ययन किया था तथा तोलस्तोय की रचनाओं का जापानी भाषा में पहला अनुवाद भी पढ़ा था. तोलस्तोय की रचनाओं के माध्यम से वह सामाजिक विचारों तथा आधुनिक साहित्य की शक्ति से परिचित हुए.

चीन लौटने पर उन्होंने चिकित्सक का काम शुरू किया, लेकिन अन्य संवेदनशील चिकित्सकों की तरह उन्हें जल्द ही यह सचाई समझ में आ गयी कि अधिकांश बीमारियों की जड़ गरीबी है, जो गरीबों की मौत के बाद ही खतम होती है.

▣

रूस के महान लेखकों के अध्ययन के बाद उनके मन में साहित्य के प्रति रुचि जागी. उन्होंने साहित्य को सामंती विचारधारा से लड़ने का हथियार बनाते हुए, रूसी लेखकों की शैली में कुछ छोटी-छोटी कहांनियां लिखीं. धीरे-धीरे उन्होंने चिकित्सक का काम छोड़ दिया. चीनी बौद्धिक पुनर्जागरण के दौरान वह बिंजिग में साहित्य के प्राध्यापक थे और बिंजिग ही उनके नवीन विचारों का जन्म स्थान था.

बाद के वर्षों में उन्होंने जर्मन तथा रूसी भाषा का अध्ययन करते हुए बहुत से रूसी उपन्यास तथा लेखों का अनुवाद किया.

इसी दौरान लू शुन ने बताया कि कुछ युवक मित्र उन्हें सर्वहारा साहित्य आंदोलन का प्रतिनिधित्व करने का अनुरोध कर रहे हैं. युवक चाहते हैं कि वह सर्वहारा लेखक बनें. यह कहना अपना बचपना जाहिर करना होगा कि लू शुन एक सर्वहारा लेखक थे. उनके विचारों की जड़ें गांवों तथा किसानों में पनपीं जरूर थीं, लेकिन उन्होंने अध्ययनशील जीवन व्यतीत किया था. उन्हें यह भी विश्वास नहीं था कि चीन का बौद्धिक युवक वर्ग, जिसे जीवन की आशाओं तथा किसानों व मजदूरों की परेशानियों का कोई अनुभव नहीं है, सर्वहारा के लिए साहित्य लिख पायेगा. उनके विचार से रचनात्मक साहित्य सिद्धांतों से नहीं, अनुभवों से लिखा जाता है.

एक गुरू की हैसियत से उन्होंने युवकों से अनुरोध किया कि वे मजदूरों, किसानों की जिंदगी का गहन अध्ययन करने के पश्चात अपनी रचनाओं के लिए ठोस सामग्री प्राप्त करें तथा 'फार्म' के लिए पश्चिमी साहित्य व कला का अध्ययन करें.

सभा समाप्त होने पर एक युवक मेरे पास आया, अदब से झुका और बड़े उदास ढंग से सिर हिलाते हुए बोला, "असंतोषजनक! क्या यह सब असंतोषजनक नहीं था? मेरा मतलब सर्वहारा साहित्य के प्रति लू शुन का यह दृष्टिकोण हतोत्साहित करने वाला है."

मैं जीवनभर पेशेवर बुद्धिजीवियों की दुश्मन रही हूं. चीनी बुद्धिजीवियों ने कभी शारीरिक मेहनत नहीं की है, इसलिए उनका लेखन अनुभवहीन है. उनके लिए 'युवक' शब्द का मतलब केवल 'विद्यार्थी' है, मजदूरों तथा किसानों को वह हीन समझते हैं, हालांकि वे उनसे सहानुभूति भी रखते हैं. उस वक्त तक की उनकी 'सर्वहारा साहित्य' की अधिकतर रचनाओं में कोई दम नहीं था. वे बनावटी तथा रूसी साहित्य का बेजान अनुवाद थीं. मैंने उस युवक को जवाब दिया, "मैं लू शुन से पूरी तरह सहमत हूं."

मैं लू शुन तथा उनके घनिष्ठ सहयोगी, चीन के जाने-पहचाने उपन्यासकार माओ दुन के विचारों से भी पूरी तरह प्रभावित हो गयी थी.

मैं और माओ दुन अक्सर सड़क के किसी कोने पर मिलते और उस सड़क को ध्यान से देखते रहते, जहां लू शुन रहते थे. उसके बाद उनके घर में जाते और शाम वहीं गुजारते, हम लोग किसी मे रेस्तरा में भोजन के लिए आर्डर देकर घंटों वार्तालाप करते रहते. हम में से कोई कम्युनिस्ट नहीं था, लेकिन हम लोग घंटों उन लोगों की मदद के लिए सोचते थे, जो सर्वहारा की मुक्ति के लिए लड़ रहे थे और प्राण दे रहे थे.

चीन के युवक लू शुन को वैसा ही सम्मान देते थे, जैसा पुराने समय में शिष्य अपने गुरुओं को देते थे. इन युवकों के बीच कई गुट थे और हर गुट लू शुन को अपने साथ लेने की कोशिश कर रहा था. लेकिन वह किसी के साथ नहीं जुड़े. वह हमेशा सबकी सुनते थे, उनकी समस्याओं पर विचार करते थे, प्रोत्साहित करते थे, उनकी रचनाओं की आलोचना भी करते थे. इसीलिए वे युवक जो पत्रिका निकालते, उसमें लू शुन का नाम पहले होता था.

▣

लू शुन ने मुझे कई बार बताया कि वह अपने जीवन पर एक ऐतिहासिक उपन्यास लिखना चाहते हैं. पर देश की जो हालत थी, उसमें यह लिखना संभव नहीं था. शासन तंत्र द्वारा मासूस व्यक्तियों की हत्या, मानव अधिकारों पर प्रहार आदि कई ऐसी बातें थीं, जिनसे वह बेहद घृणा करते थे. उनकी यह घृणा इतनी तीव्र थी कि आगे चलकर उन्होंने साहित्य व कला को धारदार चाकू की तरह इस्तेमाल किया.

चीनी लेखकों में लू शुन ही चीनी संस्कृति, साहित्य तथा इतिहास के प्रति सबसे अधिक प्रतिबद्ध थे. उनकी 'कुछ राजनीतिक' रचनाओं का अंग्रेजी में अनुवाद कर पाना सचमुच बहुत मुश्किल था. क्योंकि इन रचनाओं में शैली कुछ ऐसी होती थी, जो सीधे चोट न करके चीन के प्राचीन काल के विचारों, घटनाओं व महान व्यक्तियों को लेकर परोक्ष रूप से चोट करती थी.

इन राजनीतिक रचनाओं के बाद उन्होंने चीनी व पश्चिमी संस्कृति के विषय में बहुत अच्छी रचनाएं लिखीं. चीन का हर शिक्षित आदमी यह समझ गया कि लु शुन चीन के अतीत और वर्तमान निरंकुश शासन की तुलना कर रहे हैं. उन्होंने एक के बाद एक बहुत अच्छी साहित्यिक पत्रिकाएं निकालीं, जिसमें उन्होंने स्पष्ट रूप से लिखा कि ...चीन का हर व्यक्ति दबाया जा रहा है!

रचनात्मक साहित्य सिद्धांतों से नहीं, अनुभवों से लिखा जाता है!

उन्होंने स्पष्ट रूप से लिखा कि चीन का हर व्यक्ति दबाया जा रहा है!

चीन में उनकी शैली इतनी परिचित हो गयी थी कि यदि वह छद्म नाम से लिखते तो भी लोग समझ जाते थे कि इसके लेखक लू शुन ही हैं. इसलिए सैंसर वाले उनकी रचनाओं की कांट-छांट करते-करते इतने परेशान हो जाते थे कि उनकी मानसिक शक्ति जवाब दे जाती थी. शासन ने जब कड़ा रुख अपनाया तो उनके लेखक, कलाकार व संपादक मित्र एक-एक करके वहां से भागने लगे.

लू शुन की उम्र व ख्याति उन्हें गिरफ्तार होने से बचा रही थी. केवल जापान के वामपंथी बुद्धिजीवी ही इस योग्य थे, जो उनकी परिशोधित रचनाओं को छाप सकते थे. जापानी बुद्धिजीवियों की दृष्टि में लू शुन ही चीन के प्रख्यात लेखक थे, जिन्हें वे जानते थे.

लू शुन के समर्थक जब एक-एक करके भागने और मरने लगे तो उन्हें बहुत तकलीफ हुई.

वह प्रायः बीमार रहने लगे. कुछ दिनों बाद तो वह इतने गंभीर रूप से बीमार पड़ गये कि उठ भी नहीं सकते थे. उन्हें महसूस होने लगा था कि जैसे उनका दिल कमजोर होता जा रहा है. इसलिए उन्होंने शंघाई में विदेशी डाक्टरों की सेवा स्वीकार की. डाक्टर ने उनकी जांच करने के बाद मुझे एक किनारे ले जाकर कहा, "इन्हें क्षय रोग हो गया है, किसी ठंडे और शुष्क स्थान पर जाकर पूरा आराम करने से ही इस पर नियंत्रण पाया जा सकता है. लेकिन," डाक्टर ने आगे कहा, "मैं जानता हूं कि यह मेरा सुझाव नहीं मानेंगे, क्योंकि पुराने चीनियों का आधुनिक चिकित्सा में कोई विश्वास नहीं है."

लू शुन ने डाक्टर की यह राय नहीं मानी, लेकिन इसलिए नहीं कि वह पुरानी विचारधारा के व्यक्ति थे, उन्होंने कहा, "ऐसे समय में जब हमारे साथी गरीबों की मुक्ति के लिए जी तोड़ संघर्ष कर रहे हैं, अपने प्राण दे रहे हैं, आप चाहते हैं, मैं वर्ष भर पीठ के बल लेटा रहूं!"

इस पर हम लोगों ने कहा, "आपकी यह आपत्ति उचित नहीं है." उन्होंने कहा कि वह आर्थिक संकट से गुजर रहे हैं. हम लोगों ने कहा कि हम लोग पैसा इकट्ठा कर लेंगे, तो उन्होंने इस से इनकार कर दिया. मैक्सिम गोर्की ने उन्हें अपना मेहमान बनाकर रूस आमंत्रित किया तो उन्होंने यह आमंत्रण भी स्वीकार नहीं किया. उन्होंने कहा, "मेरे रूस जाने पर 'कोमितांग' पूरे चीन में चीख-चीखकर कहेगा कि मैं 'मास्को गोल्ड' प्राप्त कर रहा हूं!"

मैंने तर्क दिया, "उन्हें कुछ भी कहने दीजिए."

उन्होंने चिल्लाकर कहा, "वे ऐसा कहने का साहस नहीं कर सकते. सभी लोग जानते हैं कि ऐसा कहने वाले झूठे हैं. पर चीन को मेरी जरूरत है. . .मैं नहीं जा सकता."

हम लोगों ने कई तर्क दिये, पर सब बेकार गये.

उन्होंने कहा, "किसी को भागना नहीं चाहिए, दृढ़ रहकर संघर्ष करना चाहिए."

● अनुवाद : दयानंद पांडेय

दो अमरीकी मित्रों की नजर में

लू शुन और एग्निस स्मेडली की दोस्ती

आदमी में गुण किस प्रकार पैदा होते हैं?

◘ जॉन व स्टीव मैकिनॉन

बायें से—एग्निस स्मेडली, जॉर्ज बर्नाड शा, सूंग चिंग लिंग और लू शुन

वे गरीब जनता की मुक्ति तथा अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष करते हुए थक कर चूर-चूर हो गये, मगर पराजित नहीं हुए!

एग्निस स्मेडली, लू शुन से मुलाकात होने के आठ महीने पूर्व से ही शंघाई में रह रही थी. वह जिस दिन चीन आयी, वह तारीख मुझे ठीक-ठीक याद है, क्योंकि ब्रिटेन के गुप्तचर उस पर कड़ी नजर रखे हुए थे और उसके बारे में नियमित रिपोर्ट तैयार करते थे. यह रिपोर्ट आज भी भारत की राजधानी के 'राष्ट्रीय अभिलेखागार' में सुरक्षित है. ब्रिटेन की नजर में स्मेडली एक कुख्यात और खतरनाक क्रांतिकारी थी, जिसका उद्देश्य भारत से ब्रिटेन के शासन को उखाड़ फेंकना था. इसलिए पिछले लगभग दस साल से भी अधिक समय से वे स्मेडली की प्रत्येक गतिविधि पर निगरानी रखे हुए थे.

स्मेडली 1929 में जब पहली बार लू शुन से मिली, तब तक लू शुन चीन की बीसवीं सदी के सर्वश्रेष्ठ लेखक के रूप में स्थापित हो चुके थे. स्मेडली की तरह ही वह भी गरीबी और आये दिन हो रहे अत्याचारों से बहुत दुखी रहते थे. सन् 1920 में उत्तर से दक्षिण तक वह लगातार कष्टदायक भ्रमण करते रहे. दशक के अंत में शादी करने के बाद वह शंघाई में रहने लगे. उन्होंने 'शंघाई साहित्यिक मंच' की अध्यक्षता की तथा 'कोमितांग अत्याचार' के खिलाफ उठने के लिए युवकों में प्रेरणा फूंकी और उत्साह का संचार किया. साथ ही साथ वामपंथी साहित्य में कई गुट होने का भी जमकर विरोध किया. उनका दृष्टिकोण अंतर्राष्ट्रीयवादी था.

धरती की बेटी!

सन् 1930 के प्रारंभ में स्मेडली और लू शुन के बीच सहयोग भावना की शुरुआत उस समय हुई, जब उन्होंने स्मेडली के उपन्यास 'डॉटर ऑव अर्थ' के लिए अनुवादक खोजने में काफी मदद की. लू शुन ने ही चीन में स्मेडली की रचना सबसे पहले 'मेंग्या युकेन' (स्प्राउटस, मासिक) नाम की पत्रिका के 'मई अंक' में प्रकाशित की. स्मेडली ने इस लेख में चीन के ग्रामवासियों की दशा का वर्णन किया था. लू शुन इस पत्रिका के संपादक थे. इसके बदले में स्मेडली ने अपने जर्मन मित्र कैथे कोलावित्ज के रेखाचित्रों से लू शुन को परिचित कराया.

स्मेडली जब चीन आयी, तो वह चीन की दशा से पूरी तरह परिचित नहीं थी. लेकिन लू शुन, माओ दुन, दिंग लिंग तथा अन्य लेखकों एवं शंघाई के 'इंस्टीट्यूट ऑव सोशल साइंसेज' के लेखकों की मदद से उसने बहुत ही थोड़े समय में चीन के विषय में बहुत ही अच्छी जानकारी प्राप्त कर ली. इसका प्रमाण उसके द्वारा लिखित दो पुस्तकें—'चाइनीज डेस्टिनीज' (1934) जिसका अधिकतर भाग शंघाई के जीवन के विषय में है, और दूसरा—'चाइनाज रेड आर्मी मार्चेज' (1934) है.

अक्सर कहा जाता है कि स्मेडली की लेखन शैली पर लू शुन का जबरदस्त प्रभाव है. लेकिन इसमें संदेह है, क्योंकि दोनों की शैली में बहुत फर्क है. वैसे भी जिस समय दोनों की मुलाकात हुई थी, उस समय तक दोनों लेखन क्षेत्र में स्थापित हो चुके थे. इसलिए यह संभव नहीं लगता. हां, यह अवश्य सच है कि स्मेडली लू शुन की रचनाओं की बहुत तारीफ करती थी. कभी-कभी जब दोनों सामाजिक वास्तविकता की संभावनाओं की तलाश से प्रतिबद्ध होकर लिखते या फिर लिखने के लिए एक ही विषय का चुनाव करते तो उसमें स्मेडली की शैली रहस्यमय तथा लाक्षणिक होती थी. स्मेडली कभी-कभी बड़े तीखेपन से यह स्वीकार करती थी कि 'मनुष्यों में वातावरण के अनुसार गुण पैदा होते हैं.'

भूखे मर गये, पर दरवाजे नहीं खोले!

स्मेडली के पास वह शैक्षणिक आधारभूमि नहीं थी, जो लू शुन में थी. लू शुन की रचनाओं में जो विद्वता तथा ताजगी मिलती है, वह स्मेडली की रचनाओं में नहीं. स्मेडली की शैली शुष्क तथा सख्त है. स्मेडली इस फर्क को समझती थी, इसीलिए वह लू शुन को 'चीनी क्रांति का वाल्तेयर' कहती थी.

सन् 1931 में सात फरवरी की रात को वामपंथी लीग के पांच शीर्षस्थ सदस्यों को कोमितांग के अधिकारियों ने फांसी दे दी. इसके विरोध में लू शुन ने एक लेख लिखा, जिसका शीर्षक था, 'प्रेजेंट कंडीशंस ऑव लिटरेचर एंड आर्ट इन डार्केस्ट चाइना'. लू शुन ने स्मेडली से इस लेख का अनुवाद करके विदेश में प्रकाशित करने का अनुरोध किया. स्मेडली ने इस विषय पर अन्य लोगों से विचार-विमर्श किया. उसे भय था कि इस लेख के प्रकाशित होने से लू शुन गिरफ्तार हो जायेंगे और उन पर मुकदमा चलाया जायेगा. इसलिए यह लेख न भेजकर, उसने वामपंथी लीग की ओर से एक बहुत प्रभावशाली घोषणा-पत्र तथा अपील भेजी, जिसे लू शुन ने लिखा. माओ दुन तथा स्मेडली ने इसका अनुवाद किया और गुप्तरूप में यह अपील अमरीका तथा विश्व के अन्य स्थानों पर प्रकाशनार्थ भेजी गयी. न्यूयार्क से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'न्यू मासेस' के जून, 1931 के अंक में यह अपील प्रकाशित हुई. इसके प्रकाशित होने से पूरे विश्व के लेखकों तथा कलाकारों ने, विरोध में कोमितांग को सैकड़ों तार तथा पत्र भेजे.

"वे दोनों अपनी आधी उम्र में ही इतने अनुभवी हो चुके थे, जितने हम में से अधिकतर लोग अपनी पूरी उम्र में भी नहीं हो पाते!"

सन् 1932 की जनवरी में जापानियों ने शंघाई में उस स्थान पर बम गिराया, जहां लू शुन रहते थे. जबरदस्त जापानी नाकेबंदी के बावजूद स्मेडली परेशान और घबराई हालत में लू शुन के घर पहुंची. उस ने लिखा है :

"मैं अपने मित्र के घर पहुंची तो देखा कि उनका निवास स्थान आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त हो चुका है. मैंने दरवाजे पर जोर-जोर से दस्तक दी. अंग्रेजी तथा जर्मन भाषा में चिल्लाकर आवाज दी, पर कोई जवाब नहीं आया. अपने घरों में कैद रहने को विवश कई चीनियों ने कुछ भी बताने से इनकार कर दिया. कई चीनी तो भूख से मर गये लेकिन दरवाजे नहीं खोले. . .यह तो मुझे युद्ध के बाद पता चल पाया कि लू शुन के परिवार को उनके जापानी मित्रों ने बचाकर अपने घर में छिपा लिया. . . ."

लू शुन और स्मेडली में एक समानता यह थी कि दोनों का स्वास्थ्य खराब था. सन् 1933 तक स्मेडली की तबियत बहुत खराब हो गयी, जिससे विवश होकर उसे इलाज और आराम के लिए रूस जाना पड़ा. वहां उसका स्वास्थ्य ठीक हो गया और 1934 में वह अमरीका होती हुई शंघाई वापस आ गयी.

सन् 1935-36 का समय लू शुन तथा स्मेडली के लिए काफी फलदायक सिद्ध हुआ. दोनों ने मिलकर उन लेखकों तथा कलाकारों को चुपके से शंघाई से बाहर निकाल दिया, जिन पर च्यांग काई शेक की निगाह थी.

माओ दुन के अनुसार जब लू शुन को 1935 में लाल सेना के 'लांग मार्च' की सफलता की सूचना मिली, तो उन्होंने स्मेडली के जरिये लाल सेना को अपनी बधाई भेजी.

सन् 1936 में स्मेडली, लाल सेना में शामिल होने के लिए जिआन चली गयी. उसे पता चला कि लू शुन गंभीर रूप से बीमार हैं, इस पर वह थोड़ा नाराज भी हुई. अक्तूबर में जब उसे पता चला कि लू शुन की मृत्यु हो गयी, तो उसे बड़ी तकलीफ हुई. उनके गहरे मैत्री संबंध का अंदाजा सिर्फ इसी बात से लगाया जा सकता है कि वह एक मात्र विदेशी महिला थी, जिसे लू शुन की अंत्येष्टि समिति में सदस्य के रूप में शामिल किया गया था.

लू शुन की मृत्यु 55 वर्ष की उम्र में हुई, जबकि स्मेडली की मृत्यु 58 वर्ष की उम्र में हो गयी. गरीब जनता की मुक्ति तथा अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष में दोनों ने ही अपनी जरा भी परवाह न करते हुए कड़ा परिश्रम किया. वे थक कर चूर-चूर हो गये, पर पराजित नहीं हुए! □

● अनुवाद : दयानंद पांडेय

किसी भी प्रतिष्ठित और महान लेखक की रचनाओं का सार संक्षेप प्रस्तुत करना अपने-आप में एक मुश्किल और जोखिम का काम है. लेकिन अपने पाठकों के लिए हमने यह जोखिम स्वीकार किया है. लू शुन की तीन रचनाओं का हम सार संक्षेप प्रस्तुत कर रहे हैं—एक उपन्यासिका (आ क्यू की सच्ची कहानी) और दो लंबी कहानियां ('नव वर्ष की पूजा' और 'गुजरे जमाने का दर्द'). आ क्यू की सच्ची कहानी 1911 के 'मूडो क्रांतिकारियों' पर तीखा प्रहार है. यह रचना दिसंबर, 1921 में पूरी हुई और आज आधुनिक चीनी साहित्य की अमूल्य निधि मानी जाती है! 'आ क्यू' एक ऐसा सार्वभौम चरित्र है, जो किसी भी अविकसित, अर्द्धविकसित या विकासशील देश में मिल सकता है, जो किसी भी सच्चाई से परदा उठा सकता है और किसी भी षड्यंत्र का खामोशी के साथ शिकार हो सकता है.

सार संक्षेप

आ क्यू की सच्ची कहानी

• लू शुन

अध्याय एक

भूमिका

अनेक वर्षों से आ क्यू की सच्ची कहानी लिखने की सोच रहा था, किंतु उसे लिख डालने की इच्छा होते हुए भी मन में दुविधा-सी बनी हुई थी.

मगर ज्यों ही लेखनी उठायी, अमरत्व से कोसों दूर इस रचना के सृजन में आने वाली कठिनाइयों का एहसास होने लगा. पहला सवाल यह खड़ा हुआ—आखिर इसे क्या नाम दिया जाये? कनफ्यूशियस ने कहा है, "अगर नाम सही नहीं, तो शब्द भी सही नहीं जान पड़ेंगे."

इस कहावत पर अत्यंत ईमानदारी से अमल किया जाना चाहिए. जीवन-कथाएं कई प्रकार की होती हैं—अधिकृत जीवनकथा, आत्मकथा, अनाधिकृत जीवनकथा, दंतकथा, पूरक जीवन-कथा, परिवार-कथा, रेखाचित्र. . . .किंतु दुर्भाग्यवश इसमें एक भी नाम ऐसा नहीं, जिससे मेरा काम चल जाये.

दूसरी कठिनाई मेरे सामने यह थी कि ऐसी जीवन-कथा कुछ इस प्रकार आरंभ होनी चाहिए :—अमुक नाम का व्यक्ति, जिसका कुलनाम अमुक था, अमुक स्थान में रहता था.

लेकिन सच बात तो यह है कि आ क्यू का कुलनाम मुझे मालूम ही नहीं था. एक बार पता लगा था कि उसका कुल-नाम शायद 'चाओ' है, लेकिन अगले ही दिन इसके बारे में फिर एक बार बड़ा घपला हो गया था. बात यह थी कि चाओ साहब के बेटे ने का-उंटी की सरकारी परीक्षा पास कर ली थी और उसकी सफलता की घोषणा ढोल-नगाड़ों के साथ पूरे गांव में की जा रही थी. आ क्यू, जो अभी-अभी दो प्याली पीली शराब पीकर आया था, इतराता हुआ कहता फिर रहा था कि यह उसके अपने लिए भी बड़े गौरव की बात है, क्योंकि वह भी चाओ साहब के ही कुल का आदमी है. उस समय आसपास खड़े कुछ लोग तो आ क्यू से दहशत तक खाने लगे थे. लेकिन दूसरे ही दिन बेलिफ उसे चाओ साहब के घर बुला ले गया था. जब बूढ़े महाशय चाओ ने उसकी तरफ देखा था तो उनका चेहरा गुस्से से तमतमा उठा था और वे गरजकर बोल पड़े थे, "ओ आ क्यू के बच्चे! तू कहता फिर रहा है कि तू भी हमारे ही कुल का है?"

जैसे-जैसे चाओ साहब उसकी तरफ देखते जा रहे थे, उनका पारा उगातार चढ़ता जा रहा था. दो-चार कदम आगे बढ़ाकर उसे धमकाते हुए उन्होंने कहा, "ऐसी बेहूदा बात कहने की तेरी हिम्मत कैसे हुई? भला मैं तेरे जैसे लोगों का रिश्तेदार कैसे हो सकता हूं? क्या तेरा कुलनाम चाओ है?"

आ क्यू ने कोई उत्तर नहीं दिया था और वहां से भागने ही वाला था कि 'चाओ' साहब ने आगे बढ़कर उसके मुंह पर एक तमाचा जड़ दिया था.

आ क्यू ने 'चाओ' कहलाने के अपने अधिकार की पैरवी करने की कतई कोशिश नहीं की थी और अपना बायां गाल सहलाते हुए बेलिफ के साथ बाहर चला गया था. बाहर निकलते ही बेलिफ ने उस पर गालियों की बौछार शुरू कर दी थी... और दो सौ तांबे के सिक्कों से उसकी हथेली चिकनी करने के बाद ही आ क्यू उससे अपना पिंड छुड़ा पाया था.

अध्याय दो

आ क्यू की विजयों का संक्षिप्त विवरण

आ क्यू के कुलनाम, व्यक्तिगत नाम और जन्म-स्थान से संबंधित अनिश्चितता के अलावा उसके अतीत के बारे में भी कुछ अनिश्चितता बनी हुई है. कारण यह कि वेइच्वांग के लोगों ने उसके अतीत पर जरा भी ध्यान दिये बिना, उनकी सेवाओं का इस्तेमाल किया अथवा उसकी खिल्ली उड़ायी. आ क्यू खुद भी इस विषय में मौन रहता, सिर्फ ऐसे मौकों को छोड़कर जबकि उसका किसी से झगड़ा हो जाता और उसकी तरफ देखता हुआ वह बोल पड़ता, "किसी समय हमारी हालत तुमसे कहीं अच्छी थी! तुम अपने-आपको समझते क्या हो?"

आ क्यू का अपना कोई परिवार नहीं था. वह वेइच्वांग गांव में संरक्षक-देवता के मंदिर में रहता था. उसके पास कोई नियमित रोजगार भी नहीं था, जो भी छोटा-मोटा काम मिल जाता, कर लेता.

आ क्यू, जो किसी समय काफी खुशहाल था और दुनियादारी में कुशल एक अच्छा श्रमिक था, एक बिल्कुल संपूर्ण इंसान होता, अगर बदकिस्मती से उसके शरीर पर कुछ विकृतियां न होतीं. सबसे ज्यादा दुखदायक उसकी खोपड़ी पर वे चमकीले निशान थे, जो अतीत काल में किसी समय दाद-रोग से पीड़ित होने के कारण बन गये थे. वह 'दाद' या इससे मिलते-जुलते किसी भी अन्य शब्द का इस्तेमाल नहीं करता था. बाद में इससे एक कदम और आगे बढ़कर उसने 'चमकदार' और 'रोशनी' शब्दों का इस्तेमाल भी बंद कर दिया और उसके बाद 'चिराग' और 'मोमबत्ती' शब्दों का प्रयोग भी छोड़ दिया. जब भी कोई जानबूझकर या अनजाने में इन वर्जित शब्दों का इस्तेमाल करता तो आ क्यू गुस्से से तमतमा उठता, उसके दाद के निशान लाल हो उठते.

अगर निठल्ले लोग उसे उकसाना जारी रखते तो हाथापाई की नौबत आ जाती. और जब आ क्यू बिल्कुल परास्त हो जाता और निठल्ले लोग उसकी भूरी चुटिया खींचकर उसका सिर चार-पांच बार दीवारों से टकरा लेते, सिर्फ तभी वे अपनी विजय पर संतुष्ट होकर वहां से जाते. आ क्यू एक क्षण के लिए वहीं रुक जाता और मन ही मन सोचने लगता, "मालूम होता है कि मुझे मेरे बेटे ने पीटा है. आजकल कैसा जमाना आ गया है!" इसके बाद वह भी अपनी विजय पर संतुष्ट होकर वहां से चला जाता.

अध्याय तीन

आ क्यू की अन्य विजयों का विवरण

हालांकि आ क्यू सदैव विजय प्राप्त करता जाता था, फिर भी उसे मशहूरी सिर्फ तभी हासिल हुई जब चाओ साहब ने उसके मुंह पर थप्पड़ मारने की इनायत फरमा दी.

बेलिफ के हाथ में दो सौ तांबे के सिक्के रखने के बाद वह क्रोध से जमीन पर लेट गया. बाद में वह अपने-आपसे कहने लगा. . .'आजकल दुनिया न मालूम कैसी हो गयी है, बेटे अपने बाप को पीटते हैं!'. ..तब वह चाओ साहब की प्रतिष्ठा के बारे में सोचने लगा, जिन्हें अब वह अपना बेटा समझने लगा था.

यह कहते हैरानी होती थी कि चाओ साहब की इस घटना के बाद सभी लोग आ क्यू की असाधारण रूप से इज्जत करने लगे. वह शायद यह समझता रहा कि लोग ऐसा करते हैं, क्योंकि वे उसे चाओ साहब का पिता समझते हैं. लेकिन वास्तविकता यह नहीं थी. वेइच्वांग में दरअसल यह रिवाज था कि अगर सातवां बेटा आठवें बेटे को पीट दे अथवा ली खानदान का कोई आदमी ली खानदान के आदमी को पीट दे तो कोई खास बात नहीं समझी जाती थी; लेकिन जब पिटाई की घटना का संबंध चाओ साहब जैसे किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति से होता तो गांववासी इसे चर्चा का विषय समझते थे.

पिटाई के बाद आ क्यू अनेक वर्षों तक सुख-चैन से रहा.

एक दिन वसंत के मौसम में जब वह खुशी से झूमता हुआ जा रहा था तो उसने देखा कमर तक नंगे बदन मुछंदर वांग दीवाल के सहारे बैठा जूं निकाल रहा है. यह दृश्य देखकर आ क्यू को भी खुजली महसूस होने लगी. चूंकि मुछंदर वांग का शरीर दाद से पीड़ित था और उसके चेहरे पर लंबी-लंबी मूछें थीं, इसलिए सभी लोग उसे 'दाद वाला मुछंदर

थांग' कहकर पुकारते थे. आ क्यू मुछंदर वांग को बिल्कुल नाचीज समझता था.

आ क्यू की जबान खुजलाने लगी. उसने अपनी जाकिट जमीन पर पटक दी और उसकी तरफ थूककर बोला, "साला झबरीला कीड़ा!"

"अबे खजुहे कुत्ते, गाली किसे बक रहा है?" मुछंदर वांग ने तिरस्कारपूर्ण निगाह ऊपर उठाते हुए कहा.

"जिस किसी का नाम इससे मेल खाता हो!" आ क्यू ने उत्तर दिया. वह हाथ कमर पर रख तनकर खड़ा हो गया.

"अबे क्या तेरी हड्डियां खुजला रही हैं?" कहता हुआ मुछंदर वांग भी अपना कोट पहन तनकर खड़ा हो गया... और उसने आ क्यू की चुटिया पकड़कर उसे दीवार की तरफ घसीटा, ताकि उसका सिर हमेशा की ही तरह दीवार से टकराया जा सके.

"एक शरीफ आदमी जबान इस्तेमाल करता है, हाथ नहीं!" आ क्यू ने सिर टेढ़ा करके विरोध किया.

जाहिर है, मुछंदर वांग कोई शरीफ आदमी नहीं था. कारण, आ क्यू की बात पर जरा भी गौर किये बगैर उसने एक के बाद एक पांच बार उसका सिर दीवार से दे मारा और उसे इतने जोर का धक्का दिया कि वह लड़खड़ाता हुआ दो गज दूर जा गिरा. तब कहीं मुछंदर वांग के दिल को तसल्ली हुई और वह वहां से चला गया.

आ क्यू अस्थिर खड़ा था.

▣

दूर से आ क्यू का एक और दुश्मन आ रहा था. यह छ्येन साहब का सबसे बड़ा लड़का था. उससे भी आ क्यू घृणा करता था. शहर के एक विदेशी स्कूल में पढ़ने के बाद शायद वह जापान चला गया था. छह महीने बाद जब वह स्वदेश लौटा था तो तनकर चलने लगा था और अपनी चुटिया कटवा चुका था. बाद में उसकी मां ने सबको बताया, "जब वह शराब के नशे में था तो किसी शोहदे ने उसकी चुटिया काट दी. अब तक वह न जाने कब का अफसर बन गया होता, लेकिन अब उसे तब तक इंतजार करना होगा जब तक चुटिया फिर नहीं उग आती." आ क्यू को उसकी बात पर यकीन नहीं हुआ था और वह बड़ी जिद के साथ उसे 'नकली बिदेशी दरिंदा' और 'बिदेशी बेतन पाने वाला देशद्रोही' कहता फिर रहा था. और अब वही 'नकली बिदेशी दरिंदा' उसकी तरफ आ रहा था.

"गंजा. . .गधा. . .!" पहले आ क्यू उसे सिर्फ धीमी आवाज में ही गाली दिया करता था, ताकि वह सुन न सके. लेकिन आज चूंकि उसका मिजाज ठीक नहीं था और वह अपने दिल की भड़ास निकालना चाहता था, इसलिए ये शब्द उसके मुंह से अनायास ही जरा जोर से निकल गये.

बदकिस्मती से वह 'गंजा' एक चमकदार भूरी छड़ी लिये था, जिसे आ क्यू 'मातमपुर्सी करने वाले की छड़ी' कहता था. लंबे कदम बढ़ाता हुआ वह आ क्यू पर टूट पड़ा, जो पहले से ही यह अनुमान लगाकर कि उसे मार अवश्य पड़ने वाली

चीनी बोधकथा

खरगोश की वापसी का इंतजार

सोंग के खेतों में एक किसान काम करता था. खेत में एक पेड़ था. एक दिन एक खरगोश पेड़ से टकरा गया. उसकी गर्दन टूट गयी और वह मर गया. किसान को लगा कि पेड़ ने उसके लिए यह खरगोश दिया है. उसने फावड़ा रख दिया और दूसरे खरगोश का इंतजार करने लगा, करता रहा लेकिन दूसरा खरगोश कभी नहीं आया. लोगों की खिल्लियां उड़ाने की आवाजें जरूर आयीं.

—हान फी छि

(280—233 ईसा पूर्व)

है, अपनी पीठ तानकर पिटाई की प्रतीक्षा कर रहा था. निश्चय ही बड़े जोर से चटाक की आवाज हुई और ऐसा लगा मानो छड़ी से सिर पर चोट की गयी हो. खुशकिस्मती से जब पिटाई खत्म हो गयी तो लगभग मामला खत्म हो चुका था. उसे कुछ राहत महसूस हुई.

तभी एक छोटी-सी भिक्षुणी 'शांत आत्म-उत्कर्ष भिक्षुणी विहार' से उसकी तरफ आती दिखायी दी. भिक्षुणी को देखते ही आ क्यू के मुंह से गाली निकल जाती थी. आज इतना अपमानित होने के बाद वह भला उसे गाली दिये बगैर कैसे रह सकता था! अब उसे अपने अपमान की बात याद आयी तो उसका पारा फिर से चढ़ने लगा.

"अच्छा, तो आज मुझे बदकिस्मती का सामना इसलिए करना पड़ा, क्योंकि इसकी शकल देखनी थी!" उसने मन ही मन कहा.

भिक्षुणी के निकट पहुंचकर उसने जोर से खंखारकर थूका. . ."आख थू. . .! आख थू!"

छोटी-सी भिक्षुणी उसकी ओर जरा भी ध्यान दिये बिना सिर नीचा करके चलती रही. आ क्यू उसके पास जा पहुंचा और हाल ही में मूंडे हुए उसके सिर पर हाथ फेरता हुआ पागल की तरह अट्टहास करके बोला, "अरी ओ गंजी, जल्दी जा. तेरा भिक्षु तेरी बाट जोह रहा होगा. . .!"

"कौन हो जी तुम मुझे छूने वाले?. . ." भिक्षुणी ने कहा. उसका चेहरा लज्जा से लाल हो उठा, कदम तेजी से उठने लगे.

"अगर तुझे तेरा भिक्षु छू सकता है, तो भला मैं क्यों नहीं छू सकता?" यह कहते हुए उसने भिक्षुणी का गाल मसल डाला और खिलखिलाकर हंस पड़ा!

नव साक्षरों के लिए साहित्य पर 23वीं राष्ट्रीय पुरस्कार प्रतियोगिता

उपर्युक्त प्रतियोगिता के लिए नीचे लिखी भारतीय भाषाओं में लेखकों से पांडुलिपियां आमंत्रित की जाती हैं :—असमिया, बंगला, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, सिंधी, तमिल, तेलुगू और उर्दू.

इस प्रतियोगिता का प्रयोजन यह है कि कम पढ़े लिखे लोगों के लिए पढ़ने योग्य सामग्री (पर्याप्त चित्रों सहित) तैयार करने के लिए रचनात्मक लेखकों को प्रोत्साहन दिया जाय. पांडुलिपि की टंकित हस्तलिखित प्रति में फुलस्केप आकार के 50 से अधिक पृष्ठ नहीं होने चाहिए जो दुहरी जगह छोड़कर कागज के एक ओर लिखा/टंकित होना चाहिए.

पुरस्कार :—उपर्युक्त भाषाओं में सर्वश्रेष्ठ पाए गए लेखकों को एक एक हजार रुपये के 65 पुरस्कार प्रदान किए जायेंगे.

पात्रता :—जो पांडुलिपियां केन्द्रीय/राज्य सरकारों द्वारा आयोजित प्रतियोगिताओं में पहले भाग ले चुकी हैं उन पर विचार नहीं किया जायेगा. प्रवेश फार्म और विस्तृत नियमों के लिए नीचे लिखे पते पर पत्र व्यवहार करें और अनुरोध के साथ अपना पता लिखा लिफाफा आकार 24 सेमी. × 10 सेमी. का भेजें जिसके ऊपर नव साक्षरों के लिए साहित्य पर 23वीं राष्ट्रीय पुरस्कार प्रतियोगिता 'हिन्दी या अंग्रेजी में लिखा हो.

प्रवेश शुल्क : प्रत्येक प्रविष्टि के साथ 5/- रु. का रेखित पोस्टल आर्डर भेजना चाहिए जो "निदेशक, प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय" के नाम नई दिल्ली डाक घर में भुगतान योग्य हो.

अंतिम तारीख : व्यक्तिगत रूप से या रजिस्टर्ड डाक द्वारा प्रविष्टियां पहुंचने की अंतिम तारीख 31 अक्तूबर 1981 है.

dae **निदेशक**
प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय,

पश्चिमी ब्लाक-8, विंग नं. 7,
तीसरी मंजिल, आर. के. पुरम्,
नई दिल्ली-110022
डीएवीपी 81/85
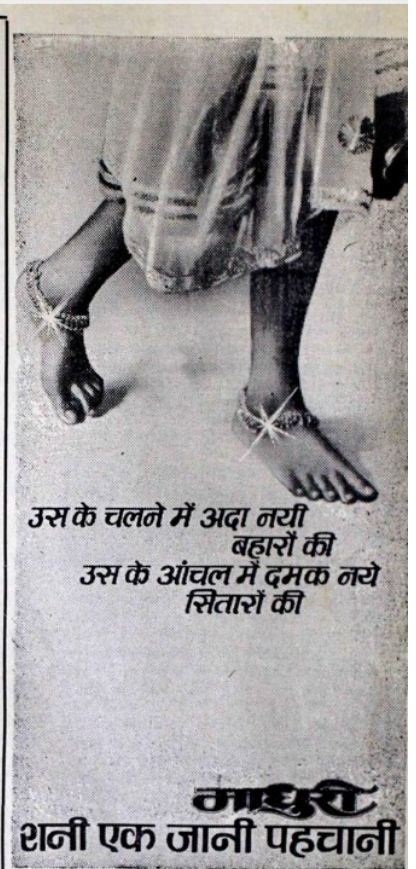
अध्याय चार

प्रेम की दुखांत कहानी

ज़रा आ क्यू को तो देखिए! वह कितना हल्का और प्रफुल्लित अनुभव कर रहा है, मानो उड़ने को तैयार हो.

यह विजय वास्तव में विचित्र परिणामों से रहित न थी. काफी समय तक उसे ऐसा महसूस होता रहा मानो उड़ने को तैयार हो, और जल्दी ही वह उड़ता हुआ संरक्षक-देवता के मंदिर में जा पहुंचा, जहां वह अक्सर लेटते ही खर्राटे मारने लगता था. लेकिन आज रात उसकी आंखों से नींद गायब हो चुकी थी. कारण, उसे अनुभव हो रहा था कि उसके अंगूठे और तर्जनी को न मालूम क्या हो गया है. उनमें आम दिनों के मुकाबले अधिक कोमलता आ गयी थी. यह कहना मुश्किल था कि उस छोटी-सी भिक्षुणी के चेहरे की कोई मुलायम व कोमल वस्तु उसकी उंगलियों से चिपक गयी थी अथवा भिक्षुणी के गालों की रगड़ से उसकी उंगलियां मुलायम हो गयी थीं.

आ क्यू शुरू में बड़े पक्के नैतिक मूल्यों वाला आदमी था. हालांकि हमें इस बात की जानकारी नहीं है कि उसका मार्ग-दर्शन किसी अच्छे शिक्षक ने किया था अथवा नहीं, वह 'स्त्री-पुरुष को सख्ती के साथ एक-दूसरे से पृथक रखने' के सिद्धांत का हमेशा बड़ी ईमानदारी से पालन करता था तथा छोटी-सी भिक्षुणी और नकली विदेशी दरिंदे के पाखंडीपन की ईमानदारी से भर्त्सना करने में कभी पीछे नहीं रहता था.

उसकी राय थी, "सभी भिक्षुणियां गुप्त रूप से भिक्षुओं के साथ नाजायज ताल्लुकात रखती हैं. अगर कोई औरत रास्ते में अकेली चल रही हो, तो वह जरूर बुरे मर्दों को फुसलाना चाहती है. जब कोई मर्द और औरत आपस में बात कर रहे हों तो वे दोनों जरूर अपनी मुलाकात का स्थान व समय निश्चित कर रहे होंगे." इस तरह के लोगों को सुधारने के लिए वह उन्हें बड़े खूंखार ढंग से घूरता था, ऊंची आवाज में तीखा व्यंग्य करता था, अथवा यदि एकांत हो तो पीछे से पत्थर तक मार देता था.

कौन कह सकता था कि लगभग तीस वर्ष की उम्र में, जबकि एक आदमी को 'दृढ़ता से खड़ा' होना चाहिए, वह इस तरह एक छोटी-सी भिक्षुणी पर फिसल जायेगा? यदि उस छोटी-सी भिक्षुणी का चेहरा कोमल व मुलायम न होता तो आ क्यू उस पर मोहित न होता; यदि उसका चेहरा किसी कपड़े से ढका होता, तो भी ऐसी स्थिति न आती. आज से पांच-छह साल पहले खुले मंच पर आपेरा देखते समय उसने एक दर्शक स्त्री की टांग पर चुटकी काट ली थी. लेकिन चूंकि उसकी टांगें पाजामे से ढकी थीं, इसलिए उस घटना के बाद आ क्यू को ऐसे उन्माद की अनुभूति नहीं हुई थी जैसी कि आज हो रही है.

"औरत. . . ." आ क्यू सोचता रहा.

एक दिन जब आ क्यू चाओ साहब के घर चावल पीस रहा था, तो रात को भोजन करने के बाद वह रसोईघर में चिलम सुलगाने लगा. चाओ परिवार की एकमात्र नौकरानी आमा ऊ ने जब घर के बर्तन-भांडे मांज लिये तो वह भी लंबे बेंच पर बैठकर आ क्यू से बातें करने लगी :

"मालकिन ने दो दिन से कुछ नहीं खाया, क्योंकि मालिक रखैल लाना चाहते हैं. . ."

"औरत. . .आमा ऊ. . .यह छोटी-सी विधवा. . .!" आ क्यू ने सोचा.

"हमारी नौजवान मालकिन आठवें चंद्र-मास में बच्चा जनने वाली हैं. . ."

"औरत. . ." आ क्यू सोचता रहा.

उसने अपनी चिलम एक तरफ रख दी और उठ खड़ा हुआ.

"हमारी नौजवान मालकिन. . ." आमा ऊ बोलती गयी.

"आ, मेरे साथ सो जा!" आ क्यू ने अचानक कहा और आगे बढ़कर उसके पैरों पर गिर पड़ा.

एक क्षण के लिए वहां बिल्कुल सन्नाटा छा गया.

"हाय मां!" आमा ऊ अवाक् रह गयी. सहसा वह कांप उठी और चीखती हुई वहां से भाग खड़ी हुई. कुछ देर बाद उसके रोने-सिसकने की आवाज आने लगी.

दीवार के सामने घुटनों के बल बैठा आ क्यू भी अवाक् रह गया. तभी किसी ने जोर से उसके सिर पर प्रहार किया. घूमकर देखा तो काउंटी की सरकारी परीक्षा में सफल उम्मीदवार सामने खड़ा दिखाई दिया. उसके हाथ में एक लंबा-सा बांस था.

"तेरी हिम्मत कैसे हुई. . .इतनी हिम्मत कैसे हुई?. . ."

लंबा बांस आ क्यू के कंधों के ऊपर पहुंच गया. जब उसने अपना सिर दोनों हाथों से ढक लिया तो प्रहार उसकी उंगलियों की पोरों पर पड़ा. वह दर्द से कराह उठा. जब वह रसोईघर के दरवाजे से भाग रहा था तो उसे लगा, पीठ पर भी बांस का प्रहार हुआ है. कुछ ही समय में वह संरक्षक देवता के मंदिर में जा पहुंचा.

कुछ देर बैठने के बाद आ क्यू ठंड से ठिठुरने लगा और उसके रोंगटे खड़े हो गये. कारण, यद्यपि वसंत आ चुका था फिर भी रातें काफी ठंडी थीं और पीठ नंगी नहीं रखी जा सकती थी. उसे याद आया कि उसकी कमीज चाओ परिवार के घर रह गयी है. डर था कि अगर उसे लेने गया तो सफल उम्मीदवार के लंबे बांस का कहीं फिर न चढ़ना पड़े.

और तभी बेलिफ अंदर आ पहुंचा.

"तेरा सत्यनाश हो आ क्यू के बच्चे!" बेलिफ ने कहा, "अबे ओ पापी, तू चाओ परिवार की नौकरानी पर हाथ साफ करने से बाज नहीं आयेगा क्या? तूने तो मेरी नींद ही हराम कर दी है. तेरा सत्यानाश हो! . . ."

इस तरह गालियों की बौछार होने पर यह स्वाभाविक था कि आ क्यू चुप रहता. अंत में, चूंकि रात का वक्त था इसलिए आ क्यू को बेलिफ के हाथ में दुगुने पैसे, यानी चार सौ तांबे के सिक्के रखने थे. लेकिन चूंकि उसके पास एक दमड़ी भी नहीं थी, इसलिए उसने अपनी फैल्ट-हैट जमानत के तौर पर उसे दे दी.

भाग्यवश वसंत का मौसम आ चुका था और रूई के लिहाफ के बिना भी गुजारा हो सकता था. इसलिए उसने

अपना रूई का लिहाफ दो हजार तांबे के सिक्कों के बदले गिरवी रखकर उक्त तमाम शर्तें मान लीं.

अध्याय पांच

आजीविका की समस्या

उस दिन के बाद वेइच्वांग की सभी औरतें आ क्यू से कतराने लगीं, जब भी उसे आता हुआ देखतीं घर के भीतर शरण ले लेतीं. यहां तक कि श्रीमती चाओ भी, जो लगभग पचास की हो चुकी थीं, उसे देखते ही घबराकर बाकी औरतों के साथ घर के भीतर घुस गयीं और उन्होंने अपनी ग्यारह वर्ष की लड़की को भी भीतर बुला लिया. यह सब आ क्यू को बड़ा अजीब-सा लगा.

"कुतिया कहीं की!" उसने सोचा, "ये औरतें अचानक नयी-नवेलियों की तरह शर्म करने लगी हैं. . ."

लेकिन जब कई दिन बीत गये तो उसे और भी ज्यादा अजीब-सा लगने लगा. पहले, मदिरालय वाले ने उसे उधार देना बंद कर दिया. दूसरे, संरक्षक-देवता के मंदिर के बूढ़े पुजारी ने उससे कुछ ऐसी कड़वी बातें कहीं जिनसे ऐसा लगा मानो वह आ क्यू को वहां से निकालना चाहता हो. तीसरे, कई दिनों तक, उसे ठीक-ठीक याद नहीं कितने दिनों तक, उसे मजूरी के लिए बुलाने एक भी आदमी नहीं आया.

मदिरालय में उधार मिलना बंद होने पर वह काम चला सकता था, बूढ़े पुजारी द्वारा बार-बार मंदिर से निकलने के लिए कहे जाने के बावजूद आ क्यू उसकी शिकायतों की उपेक्षा कर सकता था, लेकिन अगर मजूरी के लिए बुलाने कोई नहीं आया तो क्या वह भूखों मरेगा? यह स्थिति सचमुच एक अभिशाप बनकर आ गयी थी. उसने सोचा, 'अचानक यह कैसे हो सकता है कि उनके पास कोई भी काम न रह गया हो. जरूर दाल में कुछ काला है!' अच्छी तरह पूछताछ करने पर पता चला कि जब भी उनके यहां कोई छोटा-मोटा काम होता तो वे लोग नौजवान डी को बुला लाते. नौजवान डी एक दुबला-पतला, कमजोर कंकाल व्यक्ति था, जो आ क्यू की नजरों में मुछंदर वांग से भी गया-बीता था.

▣

कुछ दिन बाद छ्येन साहब के मकान के सामने उसकी मुलाकात नौजवान डी से हो गयी. जब दो शत्रु मिलते हैं तो उनकी आंखों से अंगारे बरसने लगते हैं.! इसलिए जब आ क्यू करीब पहुंचा तो नौजवान डी निस्तब्ध खड़ा रह गया.

"अबे ओ पाजी गधे!" आ क्यू फुफकारा.

"मैं एक कीड़ा हूं. . . बस, इससे ज्यादा और क्या चाहते हो? नौजवान डी ने कहा.

उसकी इस नम्रता से आ क्यू का पारा और ज्यादा चढ़ गया. लेकिन चूंकि उसके पास लोहे की छड़ नहीं थी, इसलिए वह हाथ फैलाकर सिर्फ नौजवान डी की चुटिया पकड़ने के लिए झपटा. नौजवान डी एक हाथ से अपनी चुटिया की रक्षा करता हुआ, दूसरे हाथ से आ क्यू की चुटिया पकड़ने के लिए आगे बढ़ा. इस पर आ क्यू ने भी खाली हाथ से अपनी चुटिया बचाने की कोशिश की. आ क्यू ने नौजवान डी को पहले कभी कुछ नहीं समझा था. मगर चूंकि कुछ समय से आ क्यू भुखमरी का सामना कर रहा था, इसलिए वह भी अपने प्रतिद्वंद्वी की ही तरह दुबला-पतला और कमजोर हो गया था. इस तरह दोनों ही बराबर के प्रतिद्वंद्वी लग रहे थे. चार हाथों ने दो सिर थामे हुए थे, दोनों आदमी कमर झुकाए हुए थे और कोई आधे घंटे तक छ्येन परिवार की सफेद दीवार पर उनकी नीली इंद्रधनुषी छाया पड़ती रही.

"तेरी खबर फिर कभी लूंगा, कमीने! . . ." आ क्यू ने उसे कोसते हुए कहा.

"मैं भी तेरी खबर फिर कभी लूंगा, कमीने!" नौजवान डी ने भी वही वाक्य दोहराया.

▣

तब 'भोजन की खोज' में वह सड़क पर जा रहा था. सामने चिर-परिचित मदिरालय और भाप से पकी रोटी पर नजर पड़ी. अंत में वह 'शांति आत्म-उत्कर्ष भिक्षुणी-विहार' की चारदीवारी के पास जा पहुंचा.

यह भिक्षुणी-विहार भी चारों तरफ से धान के खेतों से घिरा था. इसकी सफेद दीवारें हरे-भरे खेतों के बीच स्पष्ट रूप से दिखायी दे रही थीं. पिछवाड़े की तरफ गारे-मिट्टी की नीची दीवार के अंदर की तरफ एक साग-सब्जी का बगीचा था. एक क्षण के लिए आ क्यू ठिठका और उसने अपने चारों ओर नजर डाली. चूंकि आसपास कोई नजर नहीं आया, इसलिए वह एक पेड़ के सहारे उस नीची दीवार पर चढ़ गया. गारे-मिट्टी की दीवार सहसा भरभराकर गिरने को हुई. आ क्यू डर के मारे कांपने लगा, लेकिन शहतूत के पेड़ की शाख से लटककर अंदर चला गया.

वह धीरे-धीरे बगीचे के फाटक की तरफ बढ़ने लगा. सहसा वह खुशी से झूम उठा. कारण, उसकी नजर सामने शलजम की क्यारी पर पड़ी. नीचे झुककर उसने शलजम खोदना शुरू कर दिया. अचानक फाटक के पीछे से एक घुटा हुआ सिर नजर आया, जो फौरन गायब हो गया. यह वास्तव में वही छोटी-सी भिक्षुणी थी. उसने जल्दी-जल्दी चार शलजम उखाड़े, पत्तियां तोड़कर फेंक दीं और उन्हें अपनी जाकिट में लपेट लिया. तब तक एक बूढ़ी भिक्षुणी वहां आ पहुंची.

"भगवान बुद्ध हमारी रक्षा करें! अरे आ क्यू! तू हमारे बगीचे में कूदकर शलजम चुराने क्यों आया है?. . .हे भगवान, यह कितना बड़ा पाप है!"

"क्या ये तुम्हारे हैं? क्या तुम इसे साबित कर सकती हो?"

अपनी बात पूरी करने से पहले ही आ क्यू सिर पर पांव रखकर भाग खड़ा हुआ. उसके पीछे एक बेहद मोटा, काला कुत्ता लपका. आ क्यू शहतूत के पेड़ पर चढ़ गया और मिट्टी-गारे की दीवार, फांदकर शलजम समेत, दूसरी तरफ जा गिरा. काला कुत्ता शहतूत के पेड़ के पास भौंकता रहा और बूढ़ी भिक्षुणी भगवान को याद करती खड़ी रह गयी.

अध्याय छह

उत्थान से पतन की ओर

उस वर्ष चंद्रोत्सव से पहले आ क्यू वेइच्वांग में नहीं दिखायी दिया था. उसके वापस लौटने की खबर सुनकर हर आदमी ताज्जुब करने लगा और पुरानी बातों को याद करके सोचने लगा कि इस बीच आखिर वह गया कहां था.

आ क्यू की वापसी अलग किस्म की थी और लोगों को आश्चर्य में डालने के लिए काफी थी. सांझ हो चुकी थी. नींद से भरी आंखें लिये वह मदिरालय के दरवाजे पर जा पहुंचा और सीधा काउंटर पर पहुंचकर अपने कमरबंद से मुट्ठीभर चांदी और तांबे के सिक्के निकाल, उन्हें खनखनाता हुआ काउंटर पर रखकर बोला, "नकद पैसा! शराब लाओ!" वह एक नयी अस्तर वाली जाकिट पहने था. कमर में एक बड़ा-सा बटुआ लटक रहा था, जिसके भारी वजन से कमरबंद कुछ नीचे की तरफ झुक गया था.

मदिरालय के मालिक ने सिर हिलाकर कहा, "क्यों भाई आ क्यू, वापस आ गये?"

"हां, आ गया हूं."

"खूब पैसा कमाया है तुमने...आखिर गये कहां थे?"

"शहर चला गया था."

अगले दिन तक यह खबर पूरे वेइच्वांग में फैल गयी और कुछ ही दिनों में आ क्यू की ख्याति अचानक वेइच्वांग के स्त्री-समाज में भी फैल गयी. हालांकि वेइच्वांग में छ्येन और चाओ सिर्फ ये दो परिवार ही ऐसे थे जिन्हें ठाठ-बाट से रहने वाले परिवार कहा जा सकता था और नब्बे फी सदी बाकी परिवार बिल्कुल गरीब थे, फिर भी स्त्री-समाज, स्त्री समाज ही होता है और जिस ढंग से आ क्यू की ख्याति उसमें फैली थी उसे एक छोटा-मोटा चमत्कार ही समझा जायेगा. जब भी औरतें आपस में मिलतीं, वे एक दूसरे से कहतीं, "श्रीमती चाओ ने आ क्यू से एक नीले रंग का रेशमी लहंगा खरीदा है. हालांकि लहंगा पुराना है, फिर भी उसकी कीमत सिर्फ नब्बे सेंट है. और चाओ पाए-येन की मां ने गहरे लाल रंग की विदेशी छींट की बनी बच्चे की पोशाक, जो लगभग नयी जैसी थी, सिर्फ तीन सौ तांबे के सिक्कों में खरीदी थी और उसे इसके दाम में आठ फी सदी की छूट भी मिली थी."

इसके बाद, जिन औरतों के पास रेशम का लहंगा नहीं था या जो विदेशी छींट का कपड़ा लेना चाहती थीं, वे इन चीजों को खरीदने के वास्ते आ क्यू से मिलने के लिए बेहद बेचैन हो उठीं. अगर वह कहीं नजर आ जाता तो उससे बचने के बजाय वे उसके पीछे-पीछे चल पड़तीं और रुकने का आग्रह करतीं.

कुछ निठल्ले लोगों ने, जो इस व्यापार की तह में जाना चाहते थे, आ क्यू के पास जाकर अच्छी तरह पूछताछ की. बात छिपाने की जरा भी कोशिश किये बिना आ क्यू ने बड़े गर्व के साथ उनके सामने अपने कारनामों का बखान कर डाला. उसने उन्हें बताया कि शहर में वह महज एक छोटा-सा चोर था.

एक दिन रात के वक्त जब चोरी के माल की एक गठरी उसे थमाने के बाद उसके गिरोह का मुखिया फिर से अंदर गया, तो भीतर से बड़े जोर का शोरगुल सुनायी पड़ा. आ क्यू ने आव देखा न ताव, सिर पर पांव रखकर भाग खड़ा हुआ. उसी रात वह शहर से भागकर वेइच्वांग पहुंच गया, इसके बाद उसने दुबारा इस व्यापार में लौटने की हिम्मत नहीं की. इस कहानी से आ क्यू की प्रतिष्ठा को और अधिक धक्का लगा.

अध्याय सात

क्रांति

सम्राट श्वान थंग के शासन-काल के तीसरे वर्ष नवें चंद्र-मास की चौदहवीं तिथि को एक बड़े-से काले पाल वाली विशाल नौका, चाओ परिवार के घाट पर आ लगी. यह नौका अंधकार में उस समय किनारे आ लगी, जब गांव वाले गहरी नींद सो रहे थे. इसलिए उन्हें इसकी कानों-कान खबर न लगी, लेकिन पौ फटने पर जब नौका वहां से जाने लगी तो कई लोगों ने उसे देख लिया. जांच-पड़ताल के बाद मालूम हुआ कि नौका प्रांतीय सरकारी परीक्षा में सफल उम्मीदवार की थी.

इस घटना से वेइच्वांग में भारी खलबली मच गयी और दोपहर होने तक सभी गांव वासियों के दिल तेजी से धड़कने लगे. चाओ परिवार इस नौका की यात्रा के उद्देश्य के बारे में बिल्कुल मौन रहा, लेकिन चाय की दूकान और मदिरालय में जोरों से चर्चा थी कि क्रांतिकारी लोग शहर में प्रवेश करने वाले हैं और प्रांतीय सरकारी परीक्षा में सफल उम्मीद-वार शरण लेने गांव में आ गया है.

इसके बाद यह अफवाह उड़ गयी कि प्रांतीय विद्वान खुद नहीं आया बल्कि उसने एक लंबा पत्र भेजा है, जिसमें उसने चाओ परिवार से अपना दूर का रिश्ता निकाल लिया है, सोच-विचार करने के बाद चाओ साहब को यह लगा कि संदूक रखने से उन्हें कोई नुकसान नहीं होने जा रहा, इसलिए उन्होंने यह संदूक अपनी पत्नी के पलंग के नीचे छिपा कर रखवा दिये हैं. जहां तक क्रांतिकारियों का ताल्लुक है, कुछ लोगों का कहना था कि वे लोग सफेद रंग के लोहे के टोप और कवच पहनकर—सम्राट छुङ्. चन की मातमपुर्सी करते हुए—उस रात शहर में प्रवेश कर चुके हैं.

"क्रांति होना कोई बुरी बात नहीं." आ क्यू ने सोचा, "उन सबका खात्मा हो...उन सबका नाश हो!...मैं खुद भी क्रांतिकारियों के पास जाना चाहता हूं."

कुछ समय से आ क्यू बहुत तंग था और शायद असंतुष्ट भी. इसके अलावा, दोपहर के वक्त उसने खाली पेट दो प्याली शराब भी पी ली थी. नतीजे के तौर पर नशा उसे आसानी से चढ़ गया था. और जब वह अपने खयालों में डूबा हुआ चला जा रहा था तो उसे एक बार ऐसा लगा मानो हवा में उड़ रहा हो. अचानक न जाने कैसे उसे लगा कि वह खुद ही क्रांतिकारी है और वेइच्वांग के लोग उसकी हिरासत

"पीछे की तरफ क्या था, यह आ क्यू को नजर नहीं आ रहा था. अचानक उसे खयाल आया —क्या ये लोग मेरी गर्दन उड़ाने तो नहीं ले जा रहे?... उसका दिल दहल उठा..."

में हैं. अपनी खुशी को दबाने में असमर्थ होकर वह अनायास ही जोर से चिल्ला पड़ा :

"विद्रोह! विद्रोह!"

"विद्रोह!" खूब मजा आयेगा... क्रांतिकारियों का दल अयेगा. सबके सिर पर लोहे का सफेद टोप होगा और शरीर पर सफेद कवच. वे लोग तलवारों, लोहे की छड़ों, बमों, विदेशी बंदूकों, नुकीले दुधारी चाकुओं और हुक वाले भालों से लैस होंगे. वे लोग संरक्षक-देवता के मंदिर में आयेंगे और पुकारेंगे, "आ क्यू, आ जाओ!"... और तब मैं उनके साथ चला जाऊंगा...!"

अध्याय आठ

क्रांति से बहिष्कृत

वेइच्वांग के लोग दिन-ब-दिन आश्वस्त होते जा रहे थे. जो खबरें उनके पास पहुंच रही थीं उनके आधार पर वे यह बात समझ चुके थे कि क्रांतिकारियों के शहर में प्रवेश करने से कोई खास तबदीली नहीं आयी. मजिस्ट्रेट अब भी सबसे बड़ा अफसर था, सिर्फ उसका ओहदा बदल गया था. प्रांतीय परीक्षा में सफल उम्मीदवार को भी कोई पद मिल गया था. फौज का मुखिया अब भी वही पुराना कप्तान ही था.

यह कहना गलत होगा कि वेइच्वांग में कोई सुधार हुआ ही नहीं. आने वाले कुछ दिनों में ऐसे लोगों की संख्या धीरे-धीरे बढ़ती गयी, जिन्होंने अपनी चुटिया लपेटकर सिर पर बांध ली थी, और जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इसकी शुरुआत सबसे पहले काउंटी की परीक्षा में सफल उम्मीदवार से हुई, इसके बाद चाओ स-छन और चाओ पाए-येन आगे आये और उनके बाद आ क्यू.

जब चाओ स-छन अपनी केशविहीन गरदन लिये लोगों के सामने पहुंचा तो वे बोल पड़े, "वाह! यह है क्रांतिकारी!"

किसी के कहने मात्र से कि वह क्रांति के पक्ष में चला गया है, वह क्रांतिकारी नहीं बन जाता. और न अपनी चुटिया लपेटकर सिर पर बांध लेना मात्र ही क्रांतिकारी बनने के लिए काफी है. सबसे महत्त्वपूर्ण बात है, क्रांतिकारी पार्टी से संपर्क कायम करना. अपनी पूरी जिंदगी में आ क्यू का सिर्फ दो ही क्रांतिकारियों से साक्षात्कार हुआ था. उनमें से एक शहर में अपना सिर कटवा चुका था. सिर्फ दूसरा, यानी नकली विदेशी दरिंदे से बात नहीं कर लेता तब तक उसके लिए कोई रास्ता नहीं खुल सकेगा.

छ्येन परिवार के मकान का फाटक खुला था. आ क्यू डरता-डरता अंदर जा पहुंचा. अंदर घुसते ही वह चौंक पड़ा, क्योंकि उसने देखा, नकली विदेशी दरिंदा आंगन के बीचो-बीच ऊपर से नीचे तक काले कपड़े पहने, जो निस्संदेह विदेशी कपड़े थे, और चांदी के आड़ू वाला बैज लगाये खड़ा है. वह अपने हाथ में छड़ी थामे हुए था, जिसका मजा आ क्यू पहले ही चख चुका था. लगभग एक फुट लंबे बाल, जो उसने फिर से बढ़ा लिये थे, उसके कंधों पर संत ल्यू के बालों की तरह लटक रहे थे.

उसके सामने चाओ पाए-येन और अन्य तीन व्यक्ति सीधे तन कर खड़े थे. सभी लोग नकली विदेशी दरिंदे की बात बड़े आदर-भाव के साथ सुन रहे थे.

आ क्यू पंजे के बल चलता हुआ अंदर पहुंच गया और चाओ पाए-येन के पीछे जा खड़ा हुआ. लेकिन मिस्टर विदेशी की नजर अभी उस पर नहीं पड़ी थी. अपनी आंखें चढ़ाकर वह बड़े आवेश के साथ कह रहा था :

"मैं इतना ज्यादा भावुक हूं कि जब हमारी मुलाकात हुई तो मैंने उनसे बार-बार कहा, 'हुंग् साहब, इससे हमारा काम चल जाना चाहिए!' लेकिन उन्होंने हर बार जवाब दिया 'नो!'...यह एक विदेशी शब्द है जिसका अर्थ तुम लोग नहीं समझ सकते. वरना हमें काफी पहले ही सफलता मिल चुकी होती. यह इस बात की जिंदा मिसाल है कि वे कितनाफूंक-फूंककर कदम रखते हैं. उन्होंने मुझसे बार-बार हूपे प्रांत में जाने को कहा, लेकिन मैं नहीं माना. जिले के छोटे-से कस्बे में कौन काम करना चाहता है?..."

"अ र् र् र्..." आ क्यू ने कुछ देर तक उसके रुकने का इंतजार किया और तब बोलने के लिए साहस बटोरने की कोशिश की. लेकिन किसी वजह से वह अब भी उसे 'मिस्टर विदेशी' के नाम से नहीं पुकार सका.

जो चार आदमी उसकी बात सुन रहे थे वे चौंक पड़े और आ क्यू की तरफ घूरने लगे. मिस्टर विदेशी ने भी पहली बार उसकी तरफ देखा.

"क्या है?"

"मैं..."

"निकल जाओ यहां से!"

"मैं शामिल होना चाहता हूं..."

"निकल जाओ यहां से!" मिस्टर विदेशी ने मातमपुर्सी करने वाले की छड़ी उठाते हुए कहा.

तब चाओ पाए-येन और दूसरे लोग भी चिल्लाकर बोल पड़े, "छ्येन साहब तुम्हें बाहर निकलने को कह रहे हैं. तुमने सुना नहीं?"

आ क्यू ने अपना सिर बचाने के लिए दोनों हाथ उठाकर उस पर रख लिये और बिना यह जाने कि वह क्या कह रहा है, फाटक से बाहर निकल गया.

"धांय! धांय!"

अचानक उसने एक अजीब-सी आवाज सुनी, जो निश्चित रूप से पटाखों की आवाज नहीं थी. आ क्यू, जो हमेशा हलचल पसंद करता था और जिसे दूसरों के मामलों में दखल देने में

मजा आता था, अंधकार में उस आवाज को खोजने निकल पड़ा. उसे लगा, उसके सामने किसी के पैरों की आहट आ रही है.

ध्यान से देखा तो उसे लगा कि बहुत से सैनिक लोहे का सफेद टोप और सफेद कवच पहने संदूक ले जा रहे हैं, फरनीचर ले जा रहे हैं यहां तक कि काउंटी परीक्षा में सफल उम्मीदवार की पत्नी का निडपो पलंग ले जा रहे हैं, लेकिन वे लोग उसे ज्यादा साफ-साफ नजर नहीं आ रहे थे. वह नजदीक जाना चाहता था, लेकिन उसे लगा जैसे उसके पांव धरती में गड़ गये हों.

अध्याय नौ

शानदार पटाक्षेप

चाओ परिवार के घर चोरी होने पर वेइच्वांग के ज्यादातर लोग बड़े खुश हुए, मगर वे सहम भी गये. आ क्यू इसका अपवाद न था. लेकिन चार दिन बाद अचानक आधी रात के वक्त आ क्यू को घसीटकर शहर ले जाया गया.

शहर पहुंचने तक दोपहर हो चुकी थी. वे लोग आ क्यू को एक टूटे-फूटे सरकारी दफ्तर में ले गये, जहां पांच-छह मोड़ पार करने के बाद उसे एक छोटे-से कमरे में धकेल दिया गया.

उस दिन तीसरे पहर उसे काठ के सींखचों वाले दरवाजे से बाहर घसीटकर एक बड़े कमरे में ले जाया गया. कमरे के दूसरे किनारे पर एक बूढ़ा आदमी बैठा था, जिसकी चांद घुटी हुई थी. आ क्यू ने पहले तो उसे कोई भिक्षु समझा, लेकिन जब देखा कि सैनिक उसकी रक्षा कर रहे हैं और लंबे कोट वाले कोई एक दर्जन व्यक्ति उसके दोनों तरफ खड़े हैं, जिनमें से कुछ लोगों की चांद इसी बूढ़े आदमी की तरह घुटी हुई है और कुछ लोग नकली विदेशी दरिंदे की ही तरह अपने बाल लगभग एक फुट लंबे बढ़ाकर उन्हें अपने कंधों तक लटकाये हुए हैं और सबके सब गुस्से से लाल-पीले होकर अत्यंत गंभीर मुद्रा में उसकी ओर घूर रहे हैं, तो वह समझ गया कि अवश्य ही यह कोई महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है. उसके घुटने खुद-ब-खुद मुड़ते गये और वह सिकुड़कर जमीन पर घुटनों के बल बैठ गया.

"गुलाम कहीं का! . . . ." लंबे कोट वाले व्यक्तियों ने तिरस्कार के साथ कहा. लेकिन उन्होंने आ क्यू से उठने का आग्रह नहीं किया.

"अगर सच-सच बता दोगे तो हल्की सजा मिलेगी," घुटे सिर वाले बूढ़े आदमी ने आ क्यू की आंखों में आंख डालकर धीमे किंतु स्पष्ट स्वर में कहा, "मुझे सब कुछ मालूम हो चुका है. अगर कबूल कर लोगे कि तुमने चोरी की है और अपने साथियों के बारे में बता दोगे तो छोड़ दिये जाओगे."

"कबूल कर लो!" लंबे कोट वाले व्यक्तियों ने कहा.

"वे लोग कहां हैं? अगर बता दोगे तो तुम्हें छोड़ दिया जायेगा" बूढ़े आदमी ने और अधिक नरमी से दोहराया.

"मुझे कुछ नहीं मालूम. . .मैं बेकसूर हूं....."

"तुम्हें कुछ और कहना है?" बूढ़े आदमी ने सर्द आवाज में पूछा.

आ क्यू ने सोचा और फैसला कर लिया कि उसे कुछ नहीं कहना. इसलिए उसने उत्तर दिया, "कुछ नहीं."

लंबे कोट और छोटी जाकिट वाले कई लोगों ने विदेशी कपड़े की बनी एक सफेद बनियान उसे पहना दी. इस पर काले रंग के अक्षर अंकित थे. आ क्यू को कुछ घबराहट महसूस हुई, क्योंकि यह पोशाक बहुत कुछ शोक मनाने वालों की सी जान पड़ती थी. . .और शोक मनाने वालों की पोशाक पहनना अपशकुन माना जाता है. साथ ही उसके दोनों हाथ पीठ पर बंधे हुए थे. वे लोग उसे सरकारी दफ्तर से बाहर घसीट ले गये.

आ क्यू को एक खुले छकड़े में बैठा दिया गया और छोटी जाकिट वाले कई लोग उसके साथ बैठ गये. छकड़ा तुरंत चल पड़ा. छकड़े के सामने बहुत से सैनिक व मिलिशियामैन चल रहे थे, जिनके कंधों पर विदेशी राइफलें लटक रही थीं. दोनों तरफ स्तब्ध तमाशबीनों की भीड़ चल रही थी. पीछे की तरफ क्या था, यह आ क्यू को नजर नहीं आ रहा था. अचानक उसे खयाल आया—क्या ये लोग मेरी गर्दन उड़ाने तो नहीं ले जा रहे! . . .उसका दिल दहल उठा, आंखों के सामने अंधेरा छा गया.

और जब वे लोग कत्लगाह की तरफ मुड़े, तब कहीं उसे मालूम हुआ कि उसका सिर कटने वाला है. जो लोग चींटियों की तरह उसके इर्द-गिर्द जमा हो गये थे, उनकी तरफ आ क्यू ने बड़ी दुखभरी नजरों से देखा. सड़क के किनारे जमा लोगों की भीड़ में सहसा उसकी नजर आमा ऊ पर पड़ी. अच्छा, तो इसीलिए इतने दिनों तक वह नहीं दिखायी दी. वह शहर में काम करने लगी थी.

छकड़ा लगातार आगे बढ़ता जा रहा था. शोरगुल के बीच आ क्यू की आंखें आमा ऊ को खोज रही थीं. लेकिन मालूम होता था कि उसने आ क्यू को नहीं देखा, क्योंकि वह सैनिकों के कंधों पर लटकी विदेशी राइफलों पर नजर गड़ाए हुए थी.

आ क्यू ने शोरगुल मचाते जनसमूह पर फिर एक नजर डाली.

इस घटना की चर्चा करते समय वेइच्वांग में किसी ने कोई सवाल नहीं उठाया. कुदरती तौर पर सभी लोग इस बात के बारे में एकराय थे कि आ क्यू एक बुरा आदमी था, इसका सबूत यह था कि उसे गोली मार दी गयी थी. कारण, अगर वह एक बुरा आदमी न होता तो भला उसे गोली क्यों मार दी जाती?

लेकिन शहर के लोगों की राय इसके पक्ष में नहीं थी. . .ज्यादातर लोग इसलिए असंतुष्ट थे, क्योंकि गोली मारने का दृश्य उतना शानदार नहीं होता, जितना कि सिर काटने का, और वह कितना हास्यस्पद अपराधी था जो आपेरा की एक भी पंक्ति गाये बिना ही इतने गली-कूचों से गुजर गया था. वे लोग व्यर्थ ही उसके पीछे-पीछे गये थे! □

● प्रस्तुति : अवधनारायण मुद्गल

नव वर्ष की पूजा

•लू शुन

नववर्ष की खुशियां सारी दुनिया में मनायी जाती हैं. उन्हें मनाने का ढंग अलग-अलग हो सकता है, लेकिन खुशियों और आंसुओं की भाषा हर देश और काल में एक जैसी होती है. लू शुन ने घरेलू नौकरानी 'श्यांग लिन की पत्नी' और 'नव वर्ष की पूजा' को जोड़कर 'आंसू और खुशी' की भाषा को नये अर्थ और आयाम दिये हैं. यहां प्रस्तुत है उन्हीं 'अर्थों' और 'आयामों' का सार संक्षेप.

● चित्रांकन: एक चीनी कलाकार द्वारा

पुराने पंचांग के अनुसार नववर्ष की पूर्वसंध्या वास्तव में ही नये वर्ष की पूर्वसंध्या के आगमन की अनुभूति लिये रहती है. शहर-गांव में उत्साह-उत्सव की बात जाने दीजिए, वायुमंडल में भी एक हिलोर-सी आ जाती है. नया वर्ष आरंभ होने वाला है. शाम के मटमैले, उदास, कोहरे के बोझ से गुंथ बादलों में जगह-जगह बिजलियां-सी कौंधने लगती हैं. पटाखों के गर्जन-तर्जन से अग्निदेव की विदाई का उत्सव आरंभ हो जाता है. बहुत समीप छोड़े जाने वाले पटाखों की आवाज से लगता है कि कानों के पर्दे फट जायेंगे. गड़गड़ाहट समाप्त होते-होते हवा में बारूद की गंध भर जाती है. ऐसे ही उत्सव की रात मैं अपने जन्म-स्थान लूचन लौटा था. लूचन में मेरा पुराना घर जरूर था, परंतु वर्षों से उस स्थान से संबंध टूट चुका था. मेरा अब वहां कुछ नहीं रह गया था. कुछ समय के लिए गया तो अपने संबंधी लू साहब के यहां ठहर गया. लू के और हमारे लकड़दादा एक ही थे. वे मेरे पिता की पीढ़ी के थे. संबंध से, चौथे स्थान पर मेरे चाचा लगते थे. वे शाही महाविद्यालय के पुराने विद्यार्थी और नव-कनफ्यूशियसवाद के पंडित थे. चाचा में कोई खास परिवर्त्तन नहीं आया था. जरा बुजुर्ग-से तो लगते थे, परंतु मूंछ-ऊंछ अब भी नहीं उगी थी. मुलाकात हुई तो शिष्टाचार और राम-जुहार के बाद कहने लगे कि मैं पहले के मुकाबले मोटा हो गया हूं और ऐसा कहते ही फौरन क्रांतिकारियों पर अपना क्रोध प्रकट करने लगे. जानता था, उनका क्रोध मुझ पर नहीं, बल्कि खांग यओ-वेइ पर था. खैर, इस अवस्था में बातचीत क्या होती. कुछ ही क्षणों में वे चले गये और मैं अध्ययनकक्ष में अकेला रह गया.

पहले ही दिन श्यांग लिन की पत्नी मिल गयी थी. उससे मिलकर मन को बहुत ठेस लगी. दोपहर बाद नगर के पूर्वी मुहल्ले में एक मित्र के यहां गया था. लौट रहा था तो नदी किनारे श्यांग लिन की पत्नी से सामना हो गया. उसकी निगाहें मुझ पर ऐसे टिक गयीं कि स्पष्ट था, कुछ कहना चाहती है. लूचन में सबसे ज्यादा बदली हुई वही दिखाई दी

थी. पांच साल पहले उसके सिर में कहीं कोई एक-आध बाल सफेद होने लगा होगा. उसने अभी चालीस ही पार किये थे कि अब पूरा सिर रुई की तरह बिल्कुल सफेद हो गया था. चेहरा पीला पड़कर बिल्कुल सिकुड़ गया था. पहले भी उसके चेहरे पर एक उदासी-सी छायी रहती थी, परंतु अब वह बिल्कुल भावशून्य, काठ की मूर्ति-सी लग रही थी. आंखों में कभी-कभी पुतलियां नाच जाती थीं. जीवन का यही चिह्न शेष था. बुढ़िया हाथ में सींकों की बुनी छोटी-सी टोकरी लिये थी. टोकरी में टूटा-सा खाली कटोरा था. दूसरे हाथ में बांस की सिर से ऊंची छड़ी लिये थी. छड़ी का ऊपर का सिरा फटा हुआ था. स्पष्ट था कि वह भीख मांगने लगी है. उसे देखा तो मैं मौन खड़ा रह गया. सोचा, समीप आकर शायद कुछ मांगे.

"तुम लौट आये?" समीप आकर उसने पूछ लिया.

"हां."

"बहुत अच्छा हुआ. तुम पढ़े-लिखे आदमी हो. देश-विदेश घूमे हो, दुनिया देखे हो. एक बात पूछूंगी." उसकी बुझी-बुझी आंखें चमक उठीं. वह इस तरह बात करेगी, ऐसी आशा नहीं थी, इसलिए विस्मय से खड़ा रहा.

"यह तो बताओ." वह दो कदम समीप सरक आयी और स्वर धीमा कर रहस्य के स्वर में फुसफुसाकर बोली, "आदमी मर जाता है तो क्या सचमुच प्रेत बन जाता है?"

क्या उत्तर देता? वह मेरी ओर टकटकी लगाये थी. शरीर में सिहरन-सी दौड़ गयी. रोमांच हो आया, जैसे परीक्षक विद्यार्थी से कोई अप्रत्याशित, बहुत कठिन प्रश्न पूछ ले और सामने खड़ा होकर तुरंत उत्तर मांगे. मृत्यु के बाद जीव के भूत या प्रेत बन जाने के संबंध में मैंने कभी विचार नहीं किया था. बहुत संकट में था, क्या उत्तर देता? कुछ क्षण अवाक् होकर सोचता रहा. गांव-देहात में लोग मृत्यु के बाद आत्मा के भूत-प्रेत बन जाने में विश्वास करते हैं. जान पड़ता है कि उसके मन में किसी कारण कुछ संदेह हो गया है. उसे क्या उत्तर दूं? उत्तर ऐसा ही ठीक होगा, जिससे उसे कुछ सांत्वना मिले. अनुमान किया, यही चाहती होगी कि मौत के बाद भी उसकी आत्मा बनी रहे. या हो सकता है कि इसी चिंता से डर रही हो? शायद उसे आशंका हो कि उसका अस्तित्व मिट जायेगा. दुखिया को और दुख देने से क्या लाभ? उसे कुछ आशा, सांत्वना मिले, यही अच्छा है. यही कहना उचित है कि आत्मा नहीं मरती.

"खयाल तो है कि आत्मा रहती है," झिझकते हुए बोला.

"तो फिर नरक भी जरूर होता होगा?" उसने पूछ लिया.

"कैसा नरक?" उसके प्रश्न से मैं घबरा गया था. टालने के लिए बोला, "तर्क के अनुसार तो नरक होता है, पर कौन जाने! खैर, इन बातों में क्या रखा है. . . ."

"मरने के बाद कुनबे के सब लोग फिर से मिलते होंगे?"

"कौन जाने, मौत के बाद कौन किससे मिलता है! . . ."

कुछ समझ नहीं पा रहा था कि इसे क्या उत्तर दूं. सोचने-विचारने की शक्ति कुछ काम नहीं दे रही थी. मन में आया, कि कह दूं, "असल में मुझे स्वयं भी कुछ पता नहीं, मृत्यु

"कौन जानता था कि लड़के को भेड़िया उठा ले जायेगा. भेड़िए के आने का कोई मौसम भी नहीं था . . . किसे खयाल था कि ऐसे समय भेड़िया आ जायेगा."

के पश्चात जीवों के भूत-प्रेत बनने की बात पर मेरा विश्वास नहीं है." न जाने और क्या पूछ ले, इस डर से तेज चाल से चाचा के मकान की ओर चल पड़ा. उसके प्रश्न से मन में बड़ी बेचैनी थी. सोच रहा था कि मेरी बात से बेचारी और अधिक दुखी और निराश न हो गयी हो. कौन सी चिंता उसे परेशान कर रही है? दूसरे लोग उत्सव मनाने में व्यस्त हैं, इस बेचारी के लिए कुछ नहीं है. शायद इसीलिए इसका मन भटक रहा है. और क्या कारण हो सकता है? या इसके मन में कोई भय बस गया है? जाने क्या बात है? यदि मेरी बात से निराश होकर वह कुछ कर बैठी तो यह मेरे ही उत्तर के कारण होगा. कुछ समय बाद मुझे अपनी इस चिंता पर स्वयं ही हंसी आने लगी.

▣

कई बार अनुभव हो चुका था कि जिस बात की आशंका हो, जिससे बच सकने की चिंता हो, वह जरूर होकर रहती है. मन में भय समा गया था कि इस बार भी कुछ न कुछ अनिष्ट होकर ही रहेगा. सचमुच ही अजीब-अजीब सी बातें हो रही थीं, आसार अच्छे नहीं दिखायी दे रहे थे. संध्या समय घर के भीतर से बातचीत के स्वर सुनाई देने लगे, जैसे किसी बात पर बहस हो रही हो. कुछ समय बाद बातचीत बंद हो गयी. फिर सुनाई दिया कि चाचा घर से बाहर जाते हुए कह रहे हैं, "आगे न पीछे, यह इसी समय होना था क्या? कुलच्छनी ही है!"

सुनकर हैरान रह गया, बहुत बुरा लगा. सोचा, क्या मेरे ही बारे में बात हो रही है? दरवाजे से बाहर झांका, परंतु वहां कोई नहीं था. बड़ी कठिनाई से अपने आपको वश में किये था कि नौकर संध्या के भोजन से पहले चाय लेकर आ गया. अवसर पाकर उससे बात की, "लू साहब अभी किस पर बिगड़ रहे थे?" मैंने पूछा.

"वही, श्यांग लिन की पत्नी पर." नौकर ने कहा.

"श्यांग लिन की पत्नी? क्या हुआ उसे?" मैंने फिर पूछा.

"मर गयी."

"मर गयी?" लगा मेरा दम घुट जायेगा. दिल की धड़कन बढ़ गयी. शायद चेहरे पर पसीना भी आ गया हो. नौकर सिर झुकाये चाय बना रहा था, उसका ध्यान मेरी ओर नहीं था. जैसे-तैसे अपने आपको सम्हालकर पूछा, "कब मरी?"

"कब? कल रात या आज, कौन जाने!"

"कैसे मर गयी?"

"कैसे मर गयी? भूख से, और क्या!" नौकर ने निर्विकार भाव से उत्तर दे दिया और मेरी ओर नजर उठाये बिना कमरे से चला गया. श्यांग लिन की पत्नी के संबंध में जो कुछ देखा या लोगों से सुना था, सब एक साथ सामने आने लगा.

श्यांग लिन की पत्नी लूचन की नहीं थी. बहुत वर्ष पहले, जाड़े के आरंभ में चाचा अपनी नौकरानी बदलना चाहते थे. तब वेइ की बुढ़िया उसे लेकर आयी थी. श्यांग लिन की पत्नी सिर पर सफेद फीता बांधे थी. काला लहंगा, नीली जाकिट और हल्का हरा ब्लाउज पहने थी. तब उसकी आयु लगभग छब्बीस की रही होगी. चेहरे का रंग पीला था, परंतु गालों पर सुर्खी थी. वेइ की बुढ़िया उसे श्यांग लिन की पत्नी के नाम से ही पुकारती थी. बुढ़िया ने बताया कि श्यांग लिन की पत्नी उसके मायके वालों की पड़ोसिन है. चूंकि उसका पति मर चुका था, वह चाहती थी कि दूसरों के यहां चाकरी करके निर्वाह कर ले. मेरे चाचा ने सुना, तो उनके माथे पर बल पड़ गये. चाची समझ गयी कि चाचा विधवा को नहीं रखना चाहते, परंतु चाची की नजर श्यांग लिन की पत्नी के मजबूत-चुस्त हाथ-पैरों की ओर थी. उसके चेहरे पर नम्रतापूर्ण मौन था. देखने से ही परिश्रमी और शांत स्वभाव वाली लग रही थी. चाची ने चाचा की त्यौरियों की परवाह न कर उसे रख लिया. काम परखने की अवधि के दौरान श्यांग लिन की पत्नी दिन-रात काम में लगी रहती थी, जैसे विश्राम से उसका मन घबराता हो. उसके शरीर में पूरे आदमी की ताकत थी. तीसरे-चौथे दिन चाची ने उसकी तनखाह बांध दी—हर महीने पांच सौ तांबे के सिक्के.

समय तेजी से बीतता गया. श्यांग लिन की पत्नी पहले की ही तरह कड़ी मेहनत करती जा रही थी. मोटा-बासी जो कुछ मिल जाता, खा लेती, पर काम में कोई कोर-कसर नहीं रखती थी. पुराने वर्ष की विदाई की पूजा के समय उसने घरभर की झाड़-पोंछ की, मुर्गियां और कलहंस मारे, भोग का मांस रंधने के लिए चढ़ा दिया. सब काम के लिए वह अकेली ही काफी थी. चाची को कोई दूसरा आदमी नहीं लगाना पड़ता. नौकरानी भी संतुष्ट और प्रसन्न थी. उसके होठों पर हल्की-हल्की मुस्कान झलकने लगी थी, गाल भर आये थे और रंग भी उजला हो गया था.

नववर्ष की पूजा का काम पूरा हुआ ही था कि एक दिन नौकरानी चावल धोने के लिए डलिया लेकर नदी किनारे गयी. लौटी तो उसका चेहरा उतरा हुआ था. बोली कि उसे नदी के उस पार एक आदमी घूमता दिखाई दिया. आदमी उसके पति के चचेरे भाई जैसा लग रहा था. डरी हुई थी, "कहीं मुझे लेने न आया हो." चाची भी घबरा गयीं. उन्होंने इधर-उधर काफी खोज-पड़ताल करवायी, पर कुछ पता नहीं चला. चाचा ने सुना तो उनके माथे पर बल पड़ गये. बोले, "मामला गड़बड़ है, यह अपनी ससुराल से भागकर आयी होगी." जल्दी ही बात पक्की हो गयी कि श्यांग लिन की पत्नी ससुराल से भागकर आयी थी.

एक पखवाड़ा बीत गया. लोग उस घटना को भूल चुके थे. वेइ की बुढ़िया एक दिन अचानक फिर आ पहुंची. उसके साथ पैंतीस-चालीस वर्ष की दूसरी औरत भी थी. बुढ़िया ने बताया कि नौकरानी की सास है. चाचा बोले, "उसकी सास बुलाने आयी है, तो हम कैसे रोक सकते हैं!"

नौकरानी का हिसाब कर दिया गया. उसने अपनी पूरी तनखाह चाची के पास जमा रहने दी थी, कभी एक पैसा भी नहीं लिया था. हिसाब से एक हजार सात सौ पचास तांबे के सिक्के बनते थे. चाची ने सब पैसा बहू की सास के हाथ में रख दिया. दोपहर हो आयी थी. सास ने साहब और चाची को कष्ट देने के लिए क्षमा मांगी और धन्यवाद देकर चली गयी और बहू के कपड़े भी साथ ले गयी.

▣

श्यांग लिन की पत्नी को और सब लोग तो भूल गये, पर चाची उसे नहीं भूलीं. भूलतीं भी कैसे? फिर उन्हें ढंग की नौकरानी मिली ही नहीं. जो नौकरानी आती, कामचोर होती या रसोई की अथवा दूसरी चीजों की चोरी करती.

नववर्ष की पूजा बीत चुकी थी. वेइ की बुढ़िया एक दिन डगमगाती हुई चाची को पूजा की राम-जोहार करने आ पहुंची. बातचीत में श्यांग की पत्नी की चर्चा भी होने लगी.

"मालकिन, वह बड़े मजे में है." वेइ की बुढ़िया ने किलक-कर कहा, "उसकी सास जब उसे यहां से उठाकर ले गयी तो पहले ही हो परिवार वालों के यहां बात पक्की कर आयी थी. हो गांव में हो परिवार के छठे लड़के से उसकी सगाई पक्की हो गयी थी. बहू को यहां से लिवा ले गयी तो उसे तुरंत ही डोली में डालकर चलता कर दिया."

"हे भगवान, ऐसी सास भी क्या!" चाची ने विस्मय प्रकट किया. "अरे मालकिन, आप तो बड़े लोग ठहरे. इसलिए वैसी ही बातें करती हैं. इसमें क्या है? हम गरीब देहाती औरतों का क्या? हमारे यहां तो सब ऐसे ही चलता है. सास बेचारी क्या करती? उसे छोटे लड़के का भी तो ब्याह करना था. उसे घर में ही रोके रखती, तो लड़के के ब्याह के लिए पैसा कहां से लाती! पर उसकी सास है बड़ी चालाक. जाने कैसे ऐसा सौदा पटा लिया. दूर पहाड़ में ब्याह दिया है उसे. आसपास के किसी देहात में ब्याहती तो इतना दाम कहां मिलता? पहाड़ में जाने के लिए कोई औरत तैयार नहीं होती, इसलिए वहां से अस्सी हजार तांबे के सिक्के मिल गये. छोटे लड़के के लिए लड़की पचास हजार में मिली. बीस हजार बारात-ज्योनार में लग गया, दस हजार फिर भी बचा लिया. देख लो मालकिन, कैसी चालाक औरत है!"

"श्यांग लिन की पत्नी राजी थी?" चाची ने पूछा.

"मालकिन, औरत की राजी-नाराजी कौन पूछता है. हर कोई विरोध जरूर करती है. उसके हाथ-पांव बांध दिये और डोली में डालकर ले गये. हाथ-पांव बंधे ही दुलहिन का मुकुट सिर पर बांधकर ब्याह की रीति पूरी कर ली. दोनों को कोठरी में बंद कर दिया. बस, काम पूरा हो गया."

"फिर क्या हुआ?" चाची ने पूछा.

"फिर? काम-काज में लग गयी. साल भर में बच्चा हो गया. लड़का है. इस बार नये साल के मौके पर दो वर्ष का हो गया. अभी मैं मायके गयी थी तो कुछ लोग पहाड़ में ह॰।

परिवार के गांव जाकर लौटे थे. वे बता रहे थे, भली-चंगी है, लड़का भी खूब तगड़ा है. अब उसके ऊपर सास थोड़े है. अच्छा तगड़ा-कमाऊ मर्द है, घर अपना है. उसके तो भाग जग गये हैं."

इस घटना के बाद चाची ने भी श्यांग लिन की पत्नी की चर्चा नहीं की. श्यांग लिन की पत्नी की सुख-समृद्धि का समाचार मिले दो वर्ष बीत चुके थे. शरद में एक दिन अचानक वह चाचा के द्वार पर आ पहुंची. एक छोटी-सी गोल टोकरी लिये थी और बगल में कपड़े-लत्ते की गठरी भी. सिर पर अब भी सफेद फीता बंधा था. वही काला लहंगा, नीली जाकिट, हल्का हरा ब्लाउज. चेहरे पर स्याही फिर गयी थी. गालों की सुर्खी उड़ गयी थी. पलकों पर आंसू सूखे हुए थे, आंखें बुझी हुई थीं. वेइ की बुढ़िया अब भी उसके साथ थी. वही उसे लिवा लायी थी. बुढ़िया के चेहरे पर सहानुभूति और चिंता का भाव था. बुढ़िया ने चाची को बताया :

"बेचारी गरीब पर बिजली गिर पड़ी. बेचारी बरबाद हो गयी. क्या तगड़ा मर्द था! कौन जानता था कि ऐसा मियादी बुखार आयेगा कि जान ले लेगा. बुखार तो टूट गया था, पर उसने ठंडा भात खा लिया. बुखार पलट गया. तब भी बेचारी का भाग अच्छा था, लड़का तो था. हाथ-पांव में ताकत थी, काम से डरती नहीं थी. जरूरत हो तो लकड़ी भी फाड़ ले. चाय की पत्ती चुन लाये. रेशम के कीड़े संभाल ले. बेचारी घर सम्हाले थी, पर कौन जानता था कि लड़के को भेड़िया उठा ले जायेगा. भेड़िये के आने का कोई मौसम भी नहीं था. वसंत बीत गया था, किसे खयाल था कि ऐसे समय भेड़िया आ जायेगा? फिर बेचारी अकेली रह गयी. तभी इसका देवर आ गया. इसे घर से निकाल दिया और सारा घर व खेत समेट लिये. मालकिन अब इसे आपके सिवा और किसका सहारा है."

चाची पहले कुछ असमंजस में थीं, लेकिन उसकी कहानी सुनते ही उनकी आंखें डबडबा आयीं. उन्होंने एक क्षण के लिए सोचा और श्यांग लिन की पत्नी से कह दिया कि वह अपनी टोकरी-पोटली नौकरानी के कमरे में रख दे. तब से वह लूचन में फिर नौकरानी का काम करने लगी.

▣

श्यांग लिन की पत्नी का नाम तो वही रहा, पर औरत बदल बहुत गयी थी. तीन ही दिन में मालिक और मालकिन ने समझ लिया कि नौकरानी में अब पुरानी चुस्ती-फुर्ती नहीं रही. अब वह बात भी भूल जाती थी. चेहरे पर ऐसी मुर्दनी छा गयी थी कि फुर्ती और मुस्कान का वहां कोई आभास ही न रहा था. चाची कहने लगीं, "अब इससे कैसे काम निभेगा." श्यांग लिन की पत्नी आयी तो चाचा के माथे पर फिर वही पुराने बल उभर आये. अच्छी नौकरानी न मिल सकने की कठिनाई से मजबूर थे, इसलिए विशेष आपत्ति क्या करते, परंतु अकेले में उन्होंने चाची को समझा दिया, "ये लोग गरीब हैं, इन पर दया करना तो ठीक है, परंतु घर के लिए सुलच्छने नहीं होते. इधर-उधर के मामूली काम यह बेशक

"जानती है, तू मरेगी तो दोनों मर्दों के प्रेत तेरे लिए आपस में लड़ेंगे. तू किसकी मानेगी. यमराज तुझे चीरकर दो टुकड़े कर देंगे. दोनों में आधी-आधी बांट देंगे . . ."

करे, परंतु पूजा-बलि की सामग्री इसे मत छूने देना. पूजा का भोग अपने हाथों ही बनाना होगा. पवित्र काम में इन लोगों का स्पर्श ठीक नहीं होता. इन लोगों का छुआ भोग पितर और देवता कैसे स्वीकार करेंगे."

चाचा के यहां पितरों की श्राद्ध-बलि का आयोजन बहुत समारोह से होता था. इससे पहले श्राद्ध-बलि की सब तैयारी श्यांग लिन की पत्नी ही करती थी. अब उसे कुछ करने को ही न था. बड़ी मेज कमरे के बीचों-बीच रख दी गयी थी और पर्दा लगा दिया गया था. श्यांग लिन की पत्नी मदिरा की प्यालियां और चापस्टिक पुरानी रीति के अनुसार पहले की तरह सजाने लगी.

"श्यांग लिन की पत्नी, तू रहने दे. यह मैं कर लूंगी. तू इसे छोड़ दे." चाची बोल उठीं.

श्यांग. लिन की पत्नी ने हाथ खींच लिया. मेज से परे हट गयी. वह धूप-दीप की सामग्री उठाने लगी.

"श्यांग. लिन की पत्नी, तू रहने दे, इसे रहने दे. मैं कर लूंगी." चाची तुरंत बोल उठीं.

श्यांग लिन की पत्नी के पास करने को कुछ नहीं रहा. बेचारी खोयी-खोयी-सी कभी इधर जाती, कभी उधर. फिर एक ओर बैठ गयी. दिनभर रसोई में बैठी रही. चूल्हा सुलगा देने के अतिरिक्त उसे और कुछ काम न था.

▣

लूचन में नववर्ष का उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है. 12 वें महीने की 20 वीं तारीख से ही सब ओर पूजा की तैयारियां शुरू हो जाती हैं. उस वर्ष चाचा के यहां कुछ दिनों के लिए नौकर रखे बिना निभ नहीं सकता था. एक नौकर से भी काम नहीं चल सकता था, इसलिए एक नौकरानी भी रख लेनी पड़ी. नौकरानी का नाम ल्यू मा था. पूजा के लिए मुर्गियां और कलहंस मारना जरूरी था, परंतु ल्यू मा भक्तिन थी, मांस नहीं खाती थी. वह भला जीव-हत्या कैसे करती? ल्यू मा पूजा के बर्तन-भांडे ही मांज सकती थी. श्यांग लिन की पत्नी के लिए चूल्हा सुलगा देने के अतिरिक्त और कोई काम न था. चुप बैठी-बैठी ल्यू मा को पूजा के बर्तन-भांडे मांजते देखती रहती. हल्की-हल्की बर्फ पड़ने लगी थी. श्यांग लिन की पत्नी की आंखें आकाश की ओर थीं. उसने एक आह भरी और बोल उठी, "दैया रे, मेरी तो अकल ही मारी गयी थी. . ."

"श्यांग लिन की पत्नी, यह क्या बात. . ." ल्यू मा ने परेशान होकर उसे टोक दिया. बोली, "यह तो बता, तेरे

माथे पर जो चोट है, यह तभी लगी थी न?"

"हूं", श्यांग लिन की पत्नी ने अस्पष्ट-सी हामी भरी.

"यह बता, तू राजी कैसे हो गयी?"

"मैं?"

"और नहीं तो क्या? राजी कैसे नहीं थी? नहीं थी तो. . ."

"दैया रे, तू क्या जाने उसमें कितना जोर था?"

"अरी जाने भी दे. कितना भी जोर रहा हो. तुझमें भी तो बहुत जोर रहा है. उसमें कितना भी जोर रहा हो, तू राजी नहीं होती तो क्या कर लेता? तू खुद राजी थी, अब बात बना रही है कि उसमें बहुत जोर था."

"दैया रे. . . तू ही आजमाकर देख लेती, जान जाती." श्यांग लिन की पत्नी मुस्करा दी. ल्यू मा के झुर्रीदार चेहरे पर भी मुस्कान खेलने लगी. उसका चेहरा अखरोट की तरह और भी सिकुड़ गया.

"श्यांग लिन की पत्नी, यह भला काम नहीं हुआ." ल्यू मा रहस्यपूर्ण स्वर में बोली, "तू राजी हो गयी, यह ठीक नहीं किया. इससे तो अच्छा था कि तू सिर फोड़कर मर जाती. दूसरे मर्द के साथ तू दो वर्ष भी नहीं रही, यह बहुत बड़ा पातक हो गया. जानती है, तू मरेगी तो दोनों मर्दों के प्रेत तेरे लिए आपस में लड़ेंगे. तू किसकी मानेगी? यमराज तुझे चीरकर दो टुकड़े कर देंगे. दोनों में आधी-आधी बांट देंगे. और क्या होगा. . ."

श्यांग लिन की पत्नी ने सुना तो आतंक से स्तब्ध रह गयी. पहाड़ी इलाके में उसने ऐसी बात कभी नहीं सुनी थी.

"मैं कहती हूं, तू इसका उपाय कर ले. संरक्षक-देवता के मंदिर में दक्षिणा देकर अपने नाम की एक देहरी रखवा ले. देहरी तेरे नाम की हो जायेगी तो हजारों आदमी उस पर पांव रखेंगे, जिससे तेरा पातक धुल जायेगा और उस लोक में दुख उठाने से बच जायेगी."

श्यांग लिन की पत्नी मौन रह गयी, पर ल्यू मा की बात उसके मन में लग गयी. सुबह उठी तो आंखों के नीचे बड़ी बड़ी झाइयां पड़ गयी थीं. सुबह का खाना खाकर गांव के पश्चिम में संरक्षक-देवता के मंदिर में चली गयी. पुजारी से एक देहरी मांगी. पुजारी ने उसे दुत्कार दिया. बेचारी बहुत रोयी-धोयी. पुजारी के पांव पड़ी. तब कहीं पुजारी ने देहरी की दक्षिणा के रूप में बारह हजार तांबे के सिक्के मांगे.

▣

बेचारी दिनभर चुप्पी साधे, मुंह सिये, भाग-दौड़ करने, झाड़ू-बुहारी करने, साग-तरकारी काटने, चावल धोने में ही लगी रहती. लगभग एक वर्ष और बीत गया तो उसने चाची से अपनी तनखाह मांगी. पूरी रकम को चांदी के बारह डालरों में बदलवा लिया. मालकिन से छुट्टी मांगकर कस्बे के पश्चिम में स्थित मंदिर में गयी. तुरंत ही लौट भी आयी. इतना भी समय नहीं लगा, जितना भात निगलने में लग जाता है. मंदिर से लौटी तो बहुत संतुष्ट थी, आंखों में अद्भुत चमक आ गयी थी. आकर प्रसन्नता से चाची को बताया कि देहरी के लिए दक्षिणा दे आयी है.

शीतकाल की बलि का समय आ गया था. श्यांग लिन की पत्नी अब खूब उत्साह और लगन से काम कर रही थी. उसने चाची को पूजा के बर्तन लाते और ल्यू के साथ मेज उठाकर लाते देखा तो स्वयं मदिरा की प्यालियां और चापस्टिकें उठा लाने के लिए जाने लगी.

"रहने दे, रहने दे, श्यांग लिन की पत्नी, तू रहने दे." चाची ने तुरंत पुकारकर टोक दिया.

श्यांग लिन की पत्नी ने अपने हाथ पीछे खींच लिये, जसे तपता हुआ लाल लोहा हाथों को छू गया हो. चेहरा एकदम फीका पड़ गया. वह धूप-दीप का सामान भी लेने नहीं गयी, सन्न खड़ी रह गयी, जैसे कुछ समझ ही न पा रही हो. जब चाचा धूप-दीप करने के लिए आये तो उन्होंने उसे वहां से चली जाने के लिए कहा. तब कहीं उसकी मूर्छा टूटी. वह कमरे से चली गयी. श्यांग लिन की पत्नी एक ही दिन में कितनी बदल गयी. उसकी आंखें धंस गयीं. लगता था कि शरीर की सब शक्ति खो बैठी है. उसके मस्तिष्क पर अजीब-सा आतंक छा गया.

"श्यांग लिन की पत्नी को न जाने क्या हो गया है? इस बार तो उसे रखकर ही पछताये." चाची उसके सामने ही कह देतीं कि सुनकर शायद कुछ संभल जाये.

श्यांग लिन की पत्नी की अवस्था सुधरी नहीं, सुधरने की कोई आशा भी नहीं दिखाई देती थी. चाचा-चाची सोच रहे थे कि उससे कैसे पीछा छूटे, उसे वेइ की बुढ़िया के यहां ही भेज दें. मैं लूचन में था तो यह बात चल ही रही थी, परंतु बाद की घटनाओं से जान पड़ता है कि उसे निकाल ही दिया होगा. यह कह सकना कठिन है कि श्यांग लिन की पत्नी को जब चाचा ने काम से हटा दिया, तभी वह भीख मांगने लगी या पहले वेइ की बुढ़िया के यहां गयी और बाद में भीख मांगने लगी.

▣

सहसा मेरी नींद टूट गयी. ऐसा जान पड़ा, मानो बहुत समीप ही किसी ने पटाखे छोड़ दिये हों. आंख खुली तो सब ओर दीवाली-सी छिटकी हुई थी, जैसे रंग-बिरंगे प्रकाश के मनके बिखर गये हों. कान पटाखों की गूंज से भर गये थे. चाचा के यहां पूजा की बलि दी जा रही थी. समझ लिया, पौ फटने की बेला हो गयी है. आकाश दूर-दूर तक पटाखों की गूंज से भरा था, जैसे गड़गड़ाहट के साथ बादल उमड़ते चले आ रहे हों. आकाश में भवरों में चक्कर काटती बर्फ की पंखुड़ियां नगर को ढके दे रही थीं. मैं स्वस्थ चिंतामुक्त हो गया. विश्वास हो गया कि आकाश और पृथ्वी के देवताओं ने पूजा की बलि को स्वीकार कर लिया है और देवता आकाश व्याप्त धूप-दीप की सुवास से संतुष्ट और मुग्ध होकर लूचन निवासियों को चिर-सुख-सौभाग्य का आर्शीवाद देने के लिए तत्पर हो रहे हैं. ☐

● प्रस्तुति : भ.ना.मु.

गुज़रे ज़माने का दर्द

लू शुन

लू शुन और प्रेमकथा, बड़ा अजीब लगता है—एक सामंतवाद विरोधी, क्रांतिकारी, और जनवादी लेखक के साथ इसका जुड़ना. लेकिन यह सच है कि मानवीय संवेदना चाहे किसी लड़की के प्रति हो या प्रेमिका के या समाज के प्रति, लू शुन ने कभी नजरअंदाज नहीं की. प्रस्तुत है उसी संवेदना के दर्द को उजागर करती एक लंबी कहानी का सार-संक्षेप. इसका चित्रांकन एक चीनी कलाकार द्वारा ही किया गया है.

चाहता हूं, जैसे भी बन पड़े, च-चुन की स्मृति में अपने दुख-दर्द की कहानी लिख डालूं. हॉस्टल के उपेक्षित कोने में यह गंदी कोठरी कितनी वीरान है! समय कैसे उड़ता चला जाता है! पूरे एक वर्ष पहले हमारा प्रेम आरंभ हुआ था. इस सूनेपन में मेरा उसका प्रेम एकमात्र सहारा था. मेरा दुर्भाग्य , लौटकर आया हूं तो फिर यही कोठरी खाली मिली. फिर वही टूटी हुई खिड़की, खिड़की के बाहर लोकाट का सूखा-सा पेड़ और वही पुरानी विस्तारिया की बेल. कोठरी में वही चौकोर मेज—सब कुछ वही था. फिर वही सीलन से गीली पलस्तरवाली दीवारें, वही ढीला चरमराता तख्त. इस कोठरी में उसी तख्त पर अकेला पड़ा रात की सूनी घड़ियां बिता देता हूं. च-चुन का प्रेम पाने से पूर्व यही अवस्था थी. बीच में बीते एक वर्ष का कहीं कोई चिह्न या संकेत नहीं है—जैसे मैं इस गंदी कोठरी को छोड़कर कहीं न गया हूं, जैसे मैंने अनंत आशाएं और उत्साह लेकर चीचाओ गली में अपना छोटा-सा घोंसला न बसाया हो.

इतना ही नहीं, यह सूनापन और वीरानी इस कोठरी में वर्षभर पहले भी थी जरूर, परंतु तब कुछ अंतर था. तब आशा और प्रतीक्षा का सहारा था. च-चुन के आने की प्रतीक्षा में अधीरता से घंटों कान लगाये बैठा रहता था. ईंट के फर्श पर ऊंची एड़ी की टक-टक सुनकर मेरे रक्त में बिजली-सी दौड़ जाती थी. च-चुन का प्यारा पीले रंग का गोल चेहरा सामने आ जाता. हंसते समय उसके गालों पर गड्ढे पड़ते थे. उसकी गोरी दुबली बाहें, धारीदार सूती कपड़े का ब्लाउज और काली छोटी स्कर्ट. च-चुन लोकाट के सूखे-से पेड़ से कोई नया पत्ता या विस्तारिया की बेल से जामुनी फूलों का गुच्छा लिये रहती. विस्तारिया की बेल बहुत बूढ़ी-पुरानी हो चुकी थी. उसका तना सूखकर लोहे जैसा काला-भूरा हो गया था. परंतु अब तो वही पुराना सन्नाटा और वीरानी है. च-चुन अब नहीं आयेगी. . .कभी नहीं आयेगी!

एक वक्त था, जब मैं उसकी प्रतीक्षा में व्याकुल हो जाता था. क्यों नहीं आयी? उसके रिक्शे को तो कुछ नहीं हो गया? या रास्ते में किसी मोटर-लारी से टकरा तो नहीं गयी. . .? अधीर होकर उसे ढूंढ़ने के लिए चल देने को तैयार हो जाता.

सहसा च-चुन के कदमों की आहट सुनाई पड़ जाती. आहट समीप आती जाती. प्रत्येक कदम अधिक समीप आता प्रतीत होता. उसके स्वागत के लिए कोठरी से बाहर निकल ही रहा होता कि च-चुन विस्तारिया की झाड़ी के नीचे पहुंच जाती. उसके गालों पर मुस्कान से गड्ढे बन जाते. मेरा उद्वेग शांत हो जाता. कई पल हम दोनों मौन एक-दूसरे को अपलक देखते रहते.

च-चुन ने कहा था या किया था, स्मृति में बहुत दूर पीछे चला गया है और धुंधला हो गया है. बस इतना याद है कि उसने मेरा प्रणय-निवेदन स्वीकार कर लिया था. च-चुन का चेहरा सहसा बिल्कुल पीला पड़ गया. फिर शनै-शनै उस पर गुलाबी झलक आने लगी और थोड़ी देर में उसका चेहरा लाली से दमक उठा. च-चुन पर वैसी लाली फिर कभी नहीं दिखाई दी.

पिछले वर्ष वसंत के आखिरी दिनों में हमारा सुख चरम सीमा पर पहुंच गया था. तब हम लोग अत्यंत व्यस्त हो गये थे. मेरा मन भी उतना उद्विग्न नहीं था. अलबत्ता कभी-कभी कुछ आशंकाएं सिर उठाने लगतीं. हम दोनों साथ-साथ घूमने भी जाने लगे. कई बार घूमने के लिए पार्क की ओर चले जाते, परंतु प्रायः अपने लिए मकान की खोज में ही जाना पड़ता था. मकान मिल जाना साधारण बात नहीं थी. लोग प्रायः

[illegible] बहाने टाल देते. कहीं लोग साफ कह देते—ऐसे लोगों को कौन मकान दे! आरंभ में तो कई मकान हमें पसंद नहीं आये. यह नहीं कि हम किसी बहुत ही अच्छी जगह की तलाश में थे. दरअसल अधिकांश मकान रहने लायक थे ही नहीं. आखिरकार थककर तैयार हो गये कि जैसी-तैसी जो भी जगह मिल जाये, ले लेंगे. बीस-बाइस मकान देख लेने के बाद गुजारे लायक जगह मिल सकी. ची चाओ गली में एक छोटे से मकान में दो कमरे मिल गये.

कुछ ही दिनों में च-चुन प्रफुल्लित दिखलाई देने लगी. च-चुन को पशु-पक्षी पालने का बड़ा शौक था. हो सकता है, यह शौक मकानमालकिन के उदाहरण से जाग उठा हो. अभी एक महीना भी नहीं बीता था कि च-चुन चार चूजे ले आयी. हमारे चूजे मकानमालकिन के एक दर्जन चूजों में मिलकर आंगन में दाना चुगते रहते. दोनों घरवालियों को अपने-अपने चूजे पहचान लेने में कोई दुविधा या उलझन नहीं होती थी. फिर एक छोटा-सा चितकबरा पिल्ला भी आ गया था. हमारी वे शामें भी क्या थीं—सुखद और संतोषपूर्ण.

▣

सुख-शांति को चिरस्थायी बना सकने के लिए उनका संवर्द्धन और पोषण होता रहना चाहिए. जिन दिनों हम लोग हॉस्टल में थे, तो कभी न कभी एक-दूसरे की स्थिति अथवा बात को ठीक से न समझ सकने का अवसर आ ही जाता था, लेकिन चीचाओ गली में जगह मिल गयी तो हमारे बीच ऐसे छोटे-मोटे मतभेद भी खत्म हो गये. शाम के वक्त हम दोनों लैंप के प्रकाश में पास-पास बैठे रहते, पुरानी बातों की चर्चा कर लेते और आपस के छोटे-मोटे झगड़ों के समाप्त हो जाने के बाद अटूट प्रेम के सुख का रस लेते रहते.

एक बात से मेरा मन खिन्न हो जाता था. शाम को दफ्तर से घर लौटकर देखता कि च-चुन अपनी थकावट और उदासी छिपाने का यत्न कर रही है. मेरा दिल रखने के लिए वह मुस्कराने का यत्न करने लगती तो मेरे लिए और भी असह्य हो जाता. गनीमत थी कि मैं उदासी का कारण जान गया. मकानमालकिन से उसकी कुछ कहा-सुनी हो जाया करती थी. झगड़े का कारण थे चूजे, परंतु मुझसे यह बात छिपाने की क्या आवश्यकता थी? मैं खुद ही दफ्तर की कुछ बातों से खिन्न रहता था.

आखिर एक दिन बिजली गिर ही पड़ी. बहुत समय से उसकी आशंका थी. दसवें मास की दसवीं तिथि के उत्सव से पूर्व की एक शाम थी. च-चुन सांझ की ब्यालू के बाद बर्तन धो रही थी. मैं निठल्ला बैठा था. किवाड़ों की सांकल खटकी. बाहर जाकर देखा, दफ्तर का चपरासी मेरे लिए एक टाइप किया हुआ कागज लेकर आया है. आशंका से दिल धड़कने लगा. रोशनी के समीप जाकर पढ़ा.

कमिश्नर साहब के आदेशानुसार श च्वान-शङ को नौकरी से बर्खास्त किया जाता है.

सचिवालय
9, अक्तूबर

जब हम लोग हॉस्टल में ही थे, तभी से इस बात की आशंका हो गयी थी. क्रीम-पाउडर पोतनेवाले छोकरे का कमिश्नर के साहबजादे की ताश की महफिल में बहुत आना-जाना था. निश्चित था कि वह चुगली किये बिना नहीं मानेगा और कुछ न कुछ मुसीबत खड़ी कर देगा. ताज्जुब यही था कि बात इतने दिनों तक टली रही. मैं तो पहले से ही तैयार था. उपाय भी सोच लिया था, कहीं और नौकरी कर लूंगा. क्लर्क का काम तो मिल ही जायेगा. कहीं ट्यूशन भी पढ़ा सकता हूं. कठिन तो होगा, परंतु अनुवाद का काम भी कर लूंगा. 'स्वतंत्रताप्रेमी' के संपादक से परिचय था. दो मास पूर्व उससे पत्र-व्यवहार भी हुआ था. फिर भी घबराहट जरूर हुई.

"क्या चिंता है," च-चुन ने कहा, "कोई दूसरा काम ढूंढ़ लेंगे. ऐसी क्या बात है! है ना?. . ."

च-चुन की बात आधी ही रह गयी. उसका गला रुंध गया. जान पड़ा, कोठरी में प्रकाश बहुत कम हो गया. आदमी भी क्या अजीब तमाशा है! जरा-जरा-सी बात से कातर हो जाता है. कुछ देर हम दोनों मौन बैठे रहे. फिर बात करने लगे. क्या करना होगा? निश्चय कर लिया कि जेब के पैसे को बहुत संभालकर खर्च करें. अखबार में क्लर्क या अध्यापक की नौकरी के लिए विज्ञापन दे देंगे. 'स्वतंत्रताप्रेमी' के संपादक को भी एक पत्र लिख दिया जाये. उसे अपनी कठिनाई बताकर सहायता के लिए कोई अनुवाद का काम दे देने के लिए अनुरोध करना ठीक होगा.

'काल करै सो आज कर!' यह अभी ही क्यों न आरंभ कर दिया जाये, और मैं मेज पर जा बैठा.

अखबार में दिये गये विज्ञापन से तुरंत ही नौकरी पा जाने की आशा नहीं थी. अनुवाद कर सकना भी उतना आसान नहीं था. आप एक चीज पढ़ते हैं तो विश्वास होता है कि उसे समझ लिया, परंतु वही बात दूसरी भाषा में कहते समय शब्द-शब्द पर कठिनाई अनुभव होने लगती है. घंटों लगे रहिए तो पैरा-दो पैरा कर पायेंगे, परंतु निश्चय कर लिया कि इस कार्य को यथासामर्थ्य निबाहूंगा. दो सप्ताह में ही मेरी उंगलियों के स्पर्श से शब्दकोष के पन्नों के किनारे काले पड़ गये. समझ लीजिए, कितनी तत्परता से काम में लगा हुआ था. 'स्वतंत्रता-प्रेमी' के संपादक ने आश्वासन दिया था कि उनकी पत्रिका अच्छे लेखों को स्वीकार करेगी.

▣

मुसीबत यह थी कि निर्विघ्न काम कर सकने के लिए मकान में कोई स्थान नहीं था. च-चुन में विचित्र परिवर्तन आ गया था. उसका सदा शांत और सहनशील स्वभाव न जाने कहां चला गया था! कमरे में सब ओर बर्तन-भांडे, कपड़े फैले रहते, धुआं भरा रहता. वहां जमकर काम कर सकना संभव नहीं था, पर दोष किसे देता? मैं किराया नहीं दे सकता था तो अच्छी जगह कहां मिल पाती? उस पर घर में मौजूद पिल्ला और मुर्गियां. चूजे अब अच्छी-खासी बड़ी मुर्गियां बन गये थे. उनकी वजह से दोनों परिवारों में नित्य विवाद खड़ा हो जाता.

खाने-पकाने के चक्कर का भी अंत नहीं था. च-चुन

को उससे कभी फुर्सत न होती. मनुष्य खाने के लिए कमाता है और कमा सकने के लिए खाता है. परंतु पिल्ले और मुर्गियों के पेट भरने का भी तो सवाल था! च-चुन को पढ़ने-लिखने से कोई सरोकार नहीं रह गया था. जान पड़ता था, पिछला पढ़ा-लिखा सब भुला चुकी है. जब-तब कुछ खाने के लिए पुकार बैठती. उसे इतना खयाल भी न आता कि मेरी एकाग्रता में खलल पड़ जायेगा, विचारों का सूत्र टूट जायेगा. मैं कभी-कभी खीझ उठता या पुकार को अनसुनी कर काम में लगा रहता. इस पर भी उसे खयाल न आता, चपड़-चपड़ खुद खाये चली जाती.

यह बात समझने में उसे सवा महीना लग गया कि काम के समय खाने का आग्रह करके मेरे काम में विघ्न डालना उचित नहीं. फिर भी किसी तरह खाना मिलता रहे, यह चिंता तो मुझे थी ही. ठंडे-बासी की तो उतनी परवाह नहीं थी कम से कम पेट भर सकने योग्य तो होना ही चाहिए था. वैसे तो पूरे दिन बैठे-बैठे दिमागी काम में लगे रहने से भूख भी कम हो जाती थी. फिर भी जो भात मिलता, उससे पेट नहीं भर पाता था. भात में से पिल्ले का भाग भी निकालना आवश्यक था. मांस तो कभी-कभार ही मयस्सर होता था, परंतु होने पर पिल्ले के लिए भी चाहिए था. "देखो तो बेचारा कितना कमजोर है," च-चुन करुणा से द्रवित स्वर में कह देती, "मकान मालकिन देख लेती तो हंसे बिना न रहती." अपने ऊपर किसी का हंस देना च-चुन नहीं सह सकती थी.

मेरे बहुत आग्रह और तर्क का यह फल हुआ कि मुर्गियों का उपयोग रसोई में होने लगा. दस-बारह दिन हम दोनों और हमारा पिल्ला भी उनका स्वाद पाते रहे. मुर्गियों में अधिक मांस क्या निकलता! कई दिनों से बेचारियों को बाजरे का दाना भी नाममात्र को ही डाला जाता था. उसके बाद मकान में शांति तो काफी हो गयी, परंतु मुर्गियों के वियोग से च-चुन उदास रहने लगी. उसे अब किसी भी बात में रुचि और उत्साह नहीं रहा. मनुष्य को बदलते क्या देर लगती है!

▣

पिल्ले को पालना भी कठिन हो गया था. नौकरी मिल जाने की सभी आशाएं मिटती जा रही थीं. पिल्ले के लिए ग्रासभर भात या रोटी बचा लेना कठिन हो रहा था. च-चुन बेचारी क्या दिखाकर पिल्ले को हाथ उठाकर मांगने या दो टांग पर खड़े हो जाने को कहती. जाड़ा सिर पर आ गया था. कोठरी में आग के बिना रह सकना संभव नहीं था. पर अंगीठी के लिए क्या उपाय करते! पिल्ले की भूख को न जाने क्या हो गया था? उसे संतुष्ट कर सकना हमारी क्षमता के बाहर था. उसे पाल सकना अब हमारे लिए संभव नहीं था.

आखिर एक दिन पिल्ले की आंखों पर पट्टी बांधकर पश्चिमी दरवाजे से शहर की फसील के बाहर ले गया और उसे वहां छोड़ आया. लौट रहा था तो पिल्ला मेरे पीछे-पीछे दौड़कर आने लगा. अंत में उसे एक गड्ढे में धकेलकर पीछा छुड़ाया. गड्ढा गहरा नहीं था.

घर लौटकर अनुभव किया कि पहले की अपेक्षा शांति थी. परंतु च-चुन को देखकर हैरान रह गया. उसके चेहरे पर व्यथा की ऐसी गहरी छाप कभी नहीं देखी थी. कारण पिल्ला ही था.

संध्या तक च-चुन के भाव और व्यवहार में अजीब विरक्ति समा गयी.

"च-चुन सच बताओ, तुम्हें क्या हो रहा है?" मुझे पूछना ही पड़ा.

"क्या?" च-चुन ने मेरी ओर आंखें भी नहीं उठायीं.

"ऐसा लगता है, तुम्हें. . ."

"कोई बात नहीं, कुछ नहीं है."

▣

च-चुन की खिन्नता और झुंझलाहट बढ़ती गयी. एक दिन प्रातःकाल ही यह परिवर्तन आरंभ हुआ. . .कम से कम मैंने उसी दिन अनुभव किया. उस दिन भयंकर जाड़ा था. उसके नये व्यवहार पर मन ही मन खिन्न होकर मुस्करा दिया. उसका निर्भय, उदार और समझदार बनना महज एक आडंबर था. वास्तव में वह कुछ भी नहीं समझती थी. कुछ भी नहीं सीख सकी थी. पढ़ना उसने बिल्कुल छोड़ दिया था. उसे यह भी नहीं मालूम था कि जीवन के संघर्ष में सबसे पहला कर्त्तव्य जीविका की चिंता है और उसके लिए प्रयत्न करना चाहिए. इस संघर्ष में पति-पत्नी को कंधे से कंधा मिलाकर या अकेले ही कदम उठाना चाहिए. वह तो निर्वाह के लिए किसी से चिपट भर जाना चाहती थी, ताकि तैर सकने वाले के गले का बोझ बन जाये—उसे डुबो दे. स्वयं भी डूब जाये.

अपने और च-चुन, दोनों के कल्याण के लिए मुझे एक ही मार्ग दिखाई देता था. वह था कि दोनों अलग-अलग अपना-अपना रास्ता चुन लें. च-चुन को यह संबंध तोड़ देना चाहिए था. अचानक विचार आया. . .च- चुन की मृत्यु हो जाये तो! अपने प्रति बहुत लज्जा और ग्लानि अनुभव हुई. मैं कितना नीच हूं. अभी सुबह ही थी. च-चुन को ढंग से समझा-बुझा सकने के लिए शाम तक का बहुत समय था. हम दोनों अपनी-अपनी नयी राह बना सकेंगे या नहीं, यह इसी निर्णय पर निर्भर करता था.

सोच-विचारकर मैंने बात आरंभ की. प्रसंग वहीं से उठाया गया कि हम दोनों का परिचय किस प्रकार हुआ था. कुछ साहित्य की चर्चा की. विदेशी लेखकों और उनकी पुस्तकों की बातें कहीं. इब्सन के नाटक 'गुड़िया का घर' और 'समुद्र की नारी' की चर्चा की. नौरा के साहस और दृढ़ निश्चय की सराहना की. . .

च-चुन सुनकर गर्दन के संकेत से हामी भरती जा रही थी. वह मौन थी. मैंने अपनी बात संक्षेप में कह डाली. मैं कह चुका तो चारों ओर घोर सन्नाटा छा गया. उस शून्यता में मेरा स्वर भी डूब गया.

"ठीक है," च-चुन कुछ पल मौन रहकर बोली, "परंतु. .. च्वान शङ, तुम आजकल बिल्कुल ही बदल गये हो. क्या बात है, सच -सच बताओ?"

च-चुन की बात से मुझे भारी धक्का लगा, परंतु किसी प्रकार अपने को संभाला. उसे अपने विचार और सुझाव बताये. जीवन को नये सिरे से आरंभ करना आवश्यक है. बिल्कुल नये सिरे से नयी परिस्थितियों में प्रयत्न करना चाहिए, वरना दोनों का ही जीवन एक साथ बर्बाद हो जायेगा.

अपना निश्चय स्पष्ट कर देने के लिए मैंने दृढ़ता से कह दिया. . ."पुराने संस्कारों और व्यर्थ की भावुकता में कुछ नहीं रखा है. तुम्हें आगे बढ़ना चाहिए. तुम स्वयं चाहती हो कि मैं सच-सच कह दूं. सच्चाई यही है कि हम लोगों को पाखंड और धोखे में नहीं पड़ना चाहिए. सच्चाई यही है कि अब मेरे मन में प्रेम नहीं है. यह वास्तव में तुम्हारे लिए भी अच्छा है, तुम पर कोई बंधन नहीं रहेगा, तुम बिना किसी खेद और संकोच के अपना रास्ता बना सकोगी."

▣

आशंका थी कि च-चुन यह सब सुनकर न जाने क्या कोहराम मचा देगी. परंतु वह मौन रही. उसका चेहरा बिल्कुल पीला पड़ गया, जैसे शरीर का संपूर्ण रक्त खिंच गया हो.

उस समय च-चुन के समीप, उसके सामने रहना मेरे लिए संभव नहीं था. अभी सुबह ही थी. शरीर को बेधती सनसनाती हवा की परवाह न कर घर से निकल पड़ा और पुस्तकालय की ओर चला गया.

पुस्तकालय में 'स्वतंत्रताप्रेमी' का अंक दिखाई दे गया. मेरे भेजे गये छोटे-छोटे निबंध प्रकाशित हो गये थे. मुझे एक साथ विस्मय और हर्ष का अनुभव हुआ. जीवन में नयी स्फूर्ति अनुभव हुई. 'मेरे लिए बीसियों रास्ते खुले हैं', मन में आया, 'अपनी हालत को बदलने का उपाय करना ही होगा.'

मुझे लग रहा था कि मैं जीवन के नये मोड़ पर आ पहुंचा हूं. यहां से नया जीवन आरंभ होने को है.

पीकिंङ के हड्डियां कंपा देने वाले जाड़े के पूरे मौसम में हम दोनों उसी मकान में रहे. हमारा साथ भी अजीब था, जैसे दो लखैरियों को धागे से एक साथ बांध कर, उड़ा-उड़ा कर, उन्हें सताकर अपना खेल कर रहे हों. जाड़े के अंत में प्राण तो बचे थे, परंतु दोनों के शरीर टूटकर निढाल हो गये थे. मालूम होता था कि प्राण कुछ ही समय के मेहमान हैं.

'स्वतंत्रताप्रेमी' के संपादक को तीन पत्र लिख चुकने के बाद उसका उत्तर आया. लिफाफे में तीस और बीस सेंट के दो कूपन निकले. इन कूपनों से उनके यहां प्रकाशित कोई पुस्तक या बदले में कोई दूसरी पुस्तक ही खरीदी जा सकती थी. पारिश्रमिक के लिए भजे गए पत्रों पर नौ सेंट खर्च कर चुका था. इसके लिए एक दिन भूखे रह जाना पड़ा था. उसका यह परिणाम सामने आया.

क्या कर सकता था! मन को समझाया, जिस चीज की आशंका थी वही सामने आ गयी.

नित्य की भांति शिथिल कदमों से घर की ओर लौट रहा था. मकान का दरवाजा दिखाई दिया तो कदम और भी शिथिल हो गये. फिर भी मकान में पहुंच ही गया. भीतर अंधेरा था, तो लैंप जला लेना जरूरी था. टटोलकर माचिस उठायी. तीली जलायी. अंधेरा हट जाने पर कमरा और भी अधिक सूना और वीरान होकर सांय-सांय करने लगा.

मैं पहले कुछ भी न समझ सका, खड़ा ही रह गया. खिड़की से मकान मालकिन की आवाज सुनाई दी.

"आज चु-चुन का पिता आया था," मकान मालकिन बोली, "और उसे साथ ले गया."

मेरा मस्तिष्क जैसे एक भारी पत्थर की चोट से सुन्न हो गया. कई पल निश्चल, अवाक् खड़ा रहा. . .यह क्या हो गया!

"चली गयी?" किसी तरह पूछ लिया.

"हूं."

"कुछ . . .कुछ कह गयी है?"

"ऊं हूं. बस यही, तुम आओ तो कह दूं कि चली गयी है."

कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था, परंतु आंखों के सामने कमरा खाली और सुनसान था. आंखें फाड़-फाड़कर कमरे में चारों ओर ढूंढ़ने लगा. च-चुन कहां है, कहां छिपी है? बदरंग, टूटी-फूटी मेज, कुर्सी, खाट पड़ी थी. उनके पीछे किसी को छिपा देने या छिपा रहने के लिए स्थान नहीं था. सोचा, शायद कुछ लिखकर छोड़ गयी हो. चारों ओर आंखें दौड़ाईं, कुछ नहीं था. मेज पर नमक का डिब्बा, कुछ सूखी मिर्चें,

परछाईं की बिदाईं

▣ त्सू शुन्न

जब कोई आदमी सो जाये और उसे समय का कोई ध्यान न रहे तो मुमकिन है, उसकी परछाईं उसके पास आकर कुछ इस तरह कहते हुए विदा मांगे. . .

'स्वर्ग में कुछ ऐसा है जिसकी मुझे चाह नहीं है. मैं वहां जाना नहीं चाहती. नर्क में भी कुछ ऐसा है, जिसकी मुझे चाह नहीं है, मैं वहां भी जाना नहीं चाहती. तुम्हारे भविष्य के सुनहरे लोक में कुछ ऐसा है जिसकी मुझे चाह नहीं है, मैं वहां भी जाना नहीं चाहती.

जो भी हो, वह तुम हो जिसकी मुझे चाह नहीं है.

मित्र, मैं नहीं चाहती तुम्हारा पीछा करना, मैं नहीं चाहती रहना यहां.

मैं नहीं चाहती!

ओह नहीं, मैं नहीं चाहती, मैं इसकी अपेक्षा शून्य में विचरण करना अधिक अच्छा समझूंगी.

मैं केवल एक परछाईं हूं, तुमसे विदा होना चाहती हूं तथा अंधेरे में खो जाना, यद्यपि अंधेरा फिर मुझे निगल जायेगा, प्रकाश फिर मुझे नष्ट करने का कारण बनेगा.

लेकिन मैं उजाले और अंधियारे के बीच भटकना

नहीं चाहती, इसकी अपेक्षा में अंधियारे में खो जाना चाहती हूं.

तो भी मैं अभी तक उजाले और अंधियारे के बीच भटक रही हूं. गोधूली है या प्रभात, मैं नहीं जानती. शराब की प्याली खाली करने के अंदाज में मैं संकोच के साथ अपना राख जैसा सलेटी हाथ ऊपर उठाती हूं. उस क्षण में समय की सीमा से निकलकर अकेली कहीं दूर चली जाऊंगी.

अफसोस, अगर गोधूली होती तो काली रात में अवश्य ही मैं समा जाती या फिर अगर अब प्रभात होता तो मैं उजले दिन द्वारा नष्ट कर दी जाती.

मित्र! समय नजदीक है.

मैं अंधेरे की तरफ जाऊंगी शून्य में भटकने के लिए.

तुम अभी भी मुझसे कोई सौगात मिलने की उम्मीद करते होगे. मैं तुम्हें दे ही क्या सकती हूं! कुछ भी तो नहीं. मगर मेरे पास अंधेरा और शून्य को छोड़कर देने को कुछ नहीं है.

पर मैं केवल इसी अंधेरे के लिए इच्छुक हूं, जो तुम्हारे दिन के उजाले में नष्ट हो सकता है, मैं केवल इसी शून्य के लिए इच्छुक हूं, जो कभी तुम्हारे हृदय पर अधिकार नहीं करेगा.

मैं इच्छुक हूं,

मैं अकेली दूर चली जाऊंगी, जहां न केवल तुम बल्कि, अंधेरे में फिर दूसरी परछाइयां भी न हों, केवल अंधेरे में डूब जाऊं मैं, यह संसार पूरी तरह मेरा अपना होगा. □

थोड़ा-सा आटा और आधी पातगोभी एक साथ रखे हुए थे. वहीं चालीस-पचास तांबे के सिक्के भी सहेजे हुए थे. संसार में यही हमारी संपत्ति थी. इसे वह सावधानी से मेरे लिए सहेज गयी थी. बिना बोले संकेत से कह गयी थी—जब तक संभव हो, मैं अपना निर्वाह कर लूं, अपने प्राण बचा लूं.

अब चीचाओ गली के मकान का सूनापन मुझे काटने को दौड़ता था. उस मकान में रह सकना मेरे लिए संभव नहीं था. खयाल था, यदि इस परिस्थिति से भाग सकूं तो च-चुन के अभाव के कांटे की पीड़ा से बच सकूंगा. कल्पना में उसे अपने समीप अनुभव कर सकूंगा. कम से कम यही कल्पना कर सकूंगा कि वह इसी शहर में तो है. फिर किसी दिन हम दोनों का उसी प्रकार मिलन हो सकता है, जैसे हॉस्टल में रहते समय हो गया था.

नौकरी के लिए दी हुई मेरी दरख्वास्तों और पत्रों का कोई भी उत्तर नहीं आया. अब एक ही सहारा था. मेरे चाचा के एक पुराने सहपाठी थे, बहुत बड़े विद्वान . उनका बहुत नाम और प्रभाव था. वर्षों से उनके यहां नहीं गया था. सोचा, जाकर उनसे ही प्रार्थना करूं.

चौकीदार ने सीधे मुंह बात नहीं की. मेरे कपड़ों की अवस्था ही ऐसी थी. बहुत कठिनाई से घर के भीतर जा पाया. उन्होंने मुझे पहचान लिया, परंतु बोले बहुत रुखाई से. हम लोगों के विषय में उन्हें सब कुछ मालूम हो चुका था.

"यहां तो जगह मिल सकना मुश्किल है." उन्होंने कह दिया. मैंने अनुरोध किया, "आपकी बहुत कृपा होगी, कोई भी काम दिला दीजिए." उत्तर मिला, "बहुत मुश्किल है, फिर तुम रहोगे कहां?" उन्होंने पूछ लिया, "तुम्हें तो मालूम ही होगा, तुम्हारी वह च-चुन मर चुकी है."

मैं अवाक् रह गया.

"सच? आपने कैसे सुना?" अपने आपको संभालकर मैंने पूछा.

बुजुर्ग को हंसी आ गयी, "शक की बात क्या है, वह लड़की हमारे नौकर वाड. शड. के गांव की ही तो थी."

"कैसे मर गयी?"

"कौन जाने! इतना मालूम है कि मर गयी."

मालूम नहीं, उनके यहां से घर तक कैसे पहुंचा. च-चुन के बारे में वह आखिरी झूठी बात क्यों कहते. च-चुन सदा के लिए चली गयी थी. अब गत वर्ष की तरह वह फिर कभी नहीं आयेगी.

घर पर रह सकना संभव नहीं था. परंतु कहां जाता?

सभी ओर अभाव और शून्य था, केवल मृत्यु का सन्नाटा. कल्पना में एक ही बात समा रही थी—प्रेम में ठुकराया गया व्यक्ति मृत्यु के समय कैसी निबिड़ निराशा का अंधकार देखता होगा. ऐसी अवस्था में मरनेवालों की आर्त चीत्कारों से मेरा दिल दहलने लगता.

चीचाओ गली का मकान छोड़ देना पड़ा. बहुत सोच-विचार कर और सभी बातों का खयाल करके मैं इस परिणाम पर पहुंचा कि मेरे लिए हॉस्टल ही उपयुक्त स्थान हो सकता है. अब फिर हॉस्टल की उसी बेरौनक कोठरी में आ गया हूं. वही काठ का तख्त, खिड़की के बाहर वही लोकस्ट का अधसूखा पेड़ और विस्तारिया की वही पुरानी बेल मौजूद है. परंतु अब स्नेह और जीवन, संतोष और आशा की किरण लुप्त हो गयी है. अब केवल अभाव और निष्प्रयोजन जिंदगी ही है. यह मैंने 'सच' के मूल्य के रूप में पाया है.

▣

मेरे हृदय का अभाव और शून्य, मृत्यु के अभाव और शून्य से भी अधिक गहन है. शुरू बसंत की इस रात का अंत कब होगा. शरीर में प्राण है तो जीवन का आरंभ फिर करना ही होगा, कदम उठाना ही होगा. पहला कदम यह है कि च-चुन की स्मृति में और अपने आत्मसंतोष के लिए मैं उसके प्रति अपने मन के खेद और अवसाद भी लिख डालूं.

जीवन के लिए नया कदम उठाना अनिवार्य है. उस 'सच' को अपने घायल हृदय की गहराई में छिपाकर चुपचाप कदम बढ़ाना होगा. विस्मृति और आत्मप्रवंचना ही मेरा मार्गदर्शन करेंगी. . .

● प्रस्तुति : अ. ना. मुद्गल

लू शुन की दो लघुकथाएं

गर्मी की तीन बलाएं

गर्मी आ रही है. हमें तीन बलाओं का सामना करना पड़ेगा—वे हैं पिस्सू, मच्छर और मक्खियां.

अगर कोई मुझसे पूछे कि मैं इन तीनों में से किसे पसंद करता हूं तो मैं उनमें से एक नाम अवश्य ही लूंगा और, युवकों के लिए आवश्यक पढ़ाई समाग्री' की बात की तरह खाली जगह छोड़ना नहीं चाहूंगा. तब मेरा उत्तर होगा—पिस्सू!

यद्यपि पिस्सू तब अप्रिय प्रतीत होते हैं जब तुम्हारा खून चूसते हैं. जिस ढंग से निःसंकोच होकर बिना शब्द किये तुम्हें काटते हैं, वह बहुत तकलीफ-देह होता है. मच्छर उनसे अलग हैं. यद्यपि उनके चमड़ी छेदन का ढंग बहुत सुंदर तथा निर्मम होता है, लेकिन काटने से पहले वे निरंतर भिनभिनाते रहते हैं जो चिढ़ उत्पन्न कर देता है. इतना ही नहीं, यदि वे मानव के खून पर पलने के अपने तर्क और विश्वास पर निरंतर जमे रहें तो यह भी चिढ़ा देने वाला है. मैं खुश हूं कि मैं उनकी भाषा नहीं जानता.

जब कोई चिड़िया या हिरण आदमी के हाथ आते हैं, वे सदैव छूटने की कोशिश करते हैं. वास्तव में पहाड़ों और जंगलों में गिद्ध और बाज हैं, और साथ ही चीते और भेड़िए हैं, जरूरी नहीं कि वहां ऐसे छोटे जानवर मानवीय हाथ की तुलना में अधिक सुरक्षित रह सकें. तब क्या वजह है कि ये हमसे तो दूर नहीं भागते, पर गिद्धों, बाजों, चीतों और भेड़ियों से दूर भागते हैं. ऐसा शायद इसलिए है कि गिद्ध, बाज, चीते भी उनके साथ ऐसा ही बर्ताव करते हैं जैसा पिस्सू हमारे साथ. जब वे भूखे होते हैं तो स्वयं को बिना सफाई दिये जाने की जरूरत महसूस किये, कोई चाल चले, हमें काट खाते हैं. और जो खाते हैं वे कभी नहीं स्वीकारते कि वे भी खाये जाने के हकदार बने हैं, या वे खाये जाने से खुश हैं. इस विश्वास में वे जीते हैं और फिर मर जाते हैं. चूंकि मानवजाति इस प्रकार की चीजों में कुछ ज्यादा ही व्यस्त है, अतः छोटे जानवर इससे कम बुराई को अपनाने का रास्ता अख्तियार करते हैं, तथा आदमियों से जितना शीघ्र हो सके, उतना दूर भागते हैं, इस प्रकार वे बहुत ही अक्लमंदी दिखाते हैं.

जब मक्खियां अपनी प्रथम भिनभिन के बाद नीचे उतरती हैं तो पहला काम वे यह करती हैं कि पसीने और चिकनाई को चाटती हैं. अगर वे घाव या जले स्थान को पा जाती हैं तो उसे ज्यादा मजा लेकर चाटती हैं और हर सुंदर तथा साफ चीज पर थोड़ा-सा मल छोड़ना उनका नियम है. वे सामान्यतः थोड़ा-सा पसीना या चिकनाई चाटती हैं या थोड़ा-सा मल डाल देती हैं. वैसे मोटी चमड़ी वाले जो कोई तकलीफ अनुभव नहीं करते, उन्हें जाने दें. अभी चीनी लोग भी इस बात का अनुभव नहीं करते कि मक्खियां कीटाणु फैला सकती हैं, अतः उन्हें मार भगाने का आंदोलन खटाई में पड़कर रहा जा रहा है तथा उनको बाद की पीढ़ी के लिए छोड़ दिया जा रहा है, जब वे इससे कई गुना बढ़ जायेंगी. लेकिन ऊपरी तौर पर यद्यपि वे अच्छी, सुंदर और साफ चीजों पर मल छोड़ने के बाद कभी नहीं देखतीं कि उन्होंने क्या किया है तथा अपने छोड़े मल पर वे हंसती हैं. कुछ भी हो, उनमें इतनी शालीनता तो है ही.

भूत और वर्तमान के भद्र पुरुषों ने मनुष्य को पशु कहकर गाली दी है यद्यपि कई दृष्टियों से छोटे कीड़े भी मानव के लिए अच्छे उपमान होने योग्य हैं. □

चीन की महान दीवार

हमारी अद्भुत महान दीवार!

अभियांत्रिकी का यह कमाल दुनिया के नक्शा पर अपना एक खास स्थान रखता है. और शायद इस पूरी दुनिया में जो थोड़े भी पढ़े-लिखे लोग हैं, वे इसे जानते हैं. वास्तव में जो काम सदैव इसने किया है वह है बहुतों की अनिवार्य मौत—इसने कभी हूणों से सुरक्षा प्रदान नहीं की. अब यह केवल एक पुरातन स्मृति चिह्न मात्र है. पर अभी यह हमेशा के लिए नष्ट नहीं हुआ, यहां तक कि हो सकता है इसकी अब सुरक्षा की जाये.

मैंने सदा ही इस महान दीवार से घिरे होने के कारण अपने आपको सचेत पाया है. पुराने पत्थरों को निकालकर अब इसमें नये पत्थर लगा दिये गये हैं. और यह सब उस दीवार को पुख्ता बनाने के लिए मिलाये गये हैं, जिसके आगोश में हम बंदी हैं.

कब हम इस महान दीवार की मजबूती के लिए नये पत्थरों की आहुति को रोक पाने में समर्थ होंगे?

धिक्कार है! यह अद्भुत महान दीवार! □

● अनुवाद : सत्यप्रकाश

औषधि

लू शुन

● चित्रांकन : त्यागी

पतझड़ की एक रात का आखिरी पहर था. चांद आकाश की अपनी यात्रा समाप्त कर चुका था और आकाश पर अंधेरे की नीली चादर पसर गयी थी. सब सो रहे थे, सिवाय हुआ लाओ-शुआन के. वह उठकर बिस्तर पर बैठ गया और माचिस की एक तीली घिसकर लैंप की बत्ती से छुआयी. एक धुंधला-सा उजास उस चायघर की दोनों कोठरियों में भर गया था.

"शियाओ-शुआन के बापू, अभी से जा रहे हो?" एक स्त्री की आवाज ने सवाल किया था. इसके साथ ही पीछे की छोटी-सी कोठरी से खांसी की आवाज आने लगी थी.

शुआन होंठों में कुछ बुदबुदाया और फिर कपड़े पहनने लगा. फिर पत्नी की ओर हाथ बढ़ाते हुए कहा, "लाओ, दो."

हुआ ता-मा ने तकिये के नीचे कुछ टटोला और फिर चांदी के कुछ डालर निकालकर उसे दे दिये. उसने बड़ी बेकरारी से उन्हें जेब में रख दिया और फिर जेब को दो-तीन बार थपथपाकर तसल्ली कर ली कि पैसे जेब में ही हैं. फिर उसने लैंप बुझाकर एक कंदील जला ली. कंदील लेकर वह पिछवाड़े की छोटी कोठरी में गया. खांसी की आवाज बढ़ गयी थी. जब खांसी थमी तो लाओ-शुआन ने धीमी आवाज में पुकारा, "शियाओ-शुआन, उठना मत बेटे, दूकान का काम तुम्हारी मां संभाल लेगी."

लड़के ने कोई जवाब नहीं दिया. शुआन ने सोचा कि उसे अब सोने ही दिया जाये और दरवाजे से बाहर गली में आ गया. अंधेरे में गली की भूरी पट्टी के अलावा और कुछ भी दिखाई नही दे रहा था. कंदील की रोशनी का दो फुट का दायरा उसके साथ-साथ चल रहा था. कुछ कुत्ते इधर-उधर दिखते और फिर गायब हो जाते, कोई भौंकता तक नहीं. बाहर हवा ठंडी थी. वह लंबे-लंबे डग भरने लगा. धीरे-धीरे उजाला बढ़ने लगा और सड़क की और चीजें भी दिखने लगीं.

अपनी ही धुन में चलते-चलते लाओ-शुआन अचानक अपने सामने चौराहा देखकर घबरा गया. वह रुका, दो-चार कदम पीछे हटा और एक बंद दूकान के छज्जे के नीचे जाकर खड़ा हो गया. थोड़ी ही देर में उसकी हड्डियां तक कंपकंपाने लगीं. उसने आंखें बंद कर लीं.

"कोई बूढ़ा आदमी लगता है!"

"है हिम्मती, इतनी जल्दी जाग गया. . ."

आंख खोलने पर लाओ-शुआन ने देखा कि कुछ लोग पास से गुजर रहे हैं. एक आदमी पीछे मुड़कर उसकी ओर ध्यान से देख रहा है. वह उसे ठीक से पहचान नहीं पा रहा था. उसका ध्यान अपनी कंदील की ओर गया. कंदील बुझ गयी थी. उसने जेबें टटोलीं. खुरदरे डालर वहीं थे. उसे लगा, घबराने की कोई बात नहीं है.

उसे भीड़ में कुछ सैनिक भी दिखाई दिये. उनके कोटों पर आगे और पीछे, दोनों तरफ सफेद कपड़े की गोल थेगलियां लगी थीं, जो दूर से ही दिखाई दे जाती थीं. पास आने पर सिपाहियों की वर्दियों के किनारों पर गहरे लाल रंग के बॉडर भी दिखाई देने लगे थे. वे कदम से कदम मिलाते चल रहे थे. चौराहे पर पहुंचकर वे रुक गये. फिर सैनिकों का एक और जत्था आकर उसके पीछे अर्धवृत्ताकार में खड़ा हो गया. लाओ-शुआन की ओर उनकी पीठ थी.

उनकी गर्दनें तनी हुई थीं और किसी एक ही दिशा की ओर ताक रही थीं, जैसे बत्तखों की गर्दनों को किसी अज्ञात हाथ ने खड़ा कर रखा हो. कुछ देर सन्नाटे के बाद एक आहट हुई और वे लोग बिखरने लगे. फिर अचानक वे भागने लगे. दो-चार धक्के लाओ-शुआन को भी लगे.

"ए बूढ़े, एक हाथ से पैसे दे, दूसरे हाथ से अपनी चीज ले." पूरी तरह काले कपड़ों में लिपटा एक व्यक्ति उसके सामने आ खड़ा हुआ. उसकी आंखें गर्म लोहे-सी सुर्ख थीं. शुआन घबरा गया और उसने अपनी जेब से डालर निकालकर उसके हाथ में रख दिये. काले आदमी ने हाथ बढ़ाकर डालर लिये और भाप छोड़ती एक बेलनाकार चीज उसकी ओर बढ़ा दी, जिसमें से लाल-लाल बूंदें टपक रही थीं. शुआन को झिझकते देख उसने डांट लगायी, "घबरा क्यों रहा है! ले पकड़!" फिर भी जब शुआन ने हाथ नहीं बढ़ाया तो उसने शुआन के हाथ से कंदील छीनकर फाड़ दी और उसके कागज में वह चीज लपेटकर उसके हाथों में जबरन थमा दी. फिर मुड़ा और बुदबुदाता हुआ चला गया, "बेवकूफ! गधा कहीं का!"

"कोई बीमार है क्या?" किसी ने लाओ-शुआन से पूछा, पर उसने कोई उत्तर नहीं दिया और कागज में लिपटी उस चीज को बड़े जतन से संभालकर घर की ओर लौट पड़ा. अब वह आश्वस्त था कि अपने बेटे को बचा सकेगा.

सूर्योदय हो गया था. घर की ओर जाने वाली सड़क सामने थी और वह सीधा चला जा रहा था.

▣

शुआन लौटा तो तब तक दूकान की सफाई आदि का काम निपट चुका था. मेजें कतार से लगी चमचमा रही थीं, पर अभी तक कोई ग्राहक नहीं आया था. सिर्फ दीवार के पास लगी एक मेज पर उसका बेटा शियाओ-शुआन बैठा खाना खा रहा था. उसके माथे से पसीना टपक रहा था. उसकी हड्डियां निकल आयी थीं. बेटे की यह हालत देखकर लाओ-शुआन उदास हो गया. तभी उसकी पत्नी हड़बड़ी में रसोई से बाहर निकल आयी और आंखों में उत्सुकता भरकर पूछ लिया, "ले आये न?"

"हां, ले आया हूं."

फिर वे दोनों कुछ सलाह करने के लिए रसोई में चले गये. थोड़ी ही देर बाद बुढ़िया बाहर निकलकर गली में चली गयी और तत्काल लौट आयी. उसके हाथ में एक सूखा कमल का पत्ता था. पत्ता उसने मेज पर फैला दिया. लाओ-शुआन ने कागज की तहें खोलकर वह चीज बाहर निकाली और पत्ते पर रख दी. शियाओ-शुआन खाना करीब-करीब खत्म कर चुका था. वह उठ न जाये, यही सोचकर उसकी मां ने कहा, "बेटे, अभी उठना नहीं."

अब तक मिट्टी की अंगीठी भी सुलग गयी थी. बूढ़े ने पत्ते पर रखी वह चीज अंगारों पर रख दी. एक अजीब-सी गंध कमरे में भर गयी.

"अरे भाई, बड़ी अच्छी महक आ रही है, क्या खा रहे हो तुम लोग?" कुबड़ा अंदर घुसता हुआ जोर-जोर से सांस खींच रहा था. वह अक्सर सुबह ही इस चायघर में आ जाता और फिर रात को ही टलता. उसका पूरा दिन यहीं बीतता था. अपने सवाल का कोई जवाब न सुनकर वह एक कोने की मेज पर बैठ गया और बुदबुदाया, "अरे भाई, कमसे कम चाय तो पिला दो." शुआन बिना कुछ बोले चाय बनाने लगा.

"शियाओ, जरा भीतर तो आओ," हुआ ता-मा ने उसे भीतर बुला लिया. कमरे के बीच में एक स्टूल रखा था. वह उस पर बैठ गया. उसकी मां ने धीरे-से कहा, "यह खा लो, खाते ही तुम्हारी बीमारी छू मंतर हो जायेगी." और उसे एक तश्तरी पकड़ा दी, जिस पर काले रंग की कोई गोल-सी चीज रखी थी.

शियाओ-शुआन ने उसे उठा लिया. कुछ क्षणों तक वह उसे विचित्र-सी नजरों से घूरता रहा, जैसे अपने हाथों में उसने अपनी जान ही पकड़ी हुई हो. उसके दिल में कुछ-कुछ होने लगा था. उसने बड़ी सावधानी से उस चीज को तोड़ा. तोड़ते ही सफेद-सी भाप उसके भीतर से निकली और जरा देर में हवा में घुल गयी. अब शियाओ-शुआन को पता चला कि यह तो आटे की पिंडी है, जो आधी पकी हुई है. जल्दी ही वह उसे निगल गया. इतनी जल्दी कि उसका स्वाद भी महसूस न कर सका. अब सामने खाली तश्तरी थी, जिसके एक ओर उसका पिता खड़ा था और दूसरी ओर उसकी मां. उनकी आंखों में न जाने क्या झलक रहा था कि जैसे वह उसके भीतर कुछ डाल लेना चाहते हों और उसमें से कुछ निकाल लेना चाहते हों. इस दृष्टि को वह समझ नहीं पा रहा था और उसका नन्हा-सा दिल जोर-जोर से धड़कने लगा. वह दोनों हाथों से सीने को दबाते हुए खांसने लगा.

"थोड़ी देर सो जाओ बेटे, तुम अब जल्दी ठीक हो जाओगे." शियाओ-शुआन खांसता हुआ अपने बिस्तर पर लेट गया और जल्दी ही सो भी गया. मां ने जब देखा कि उसे नींद आ गयी तो उसे एक पुराना-सा लिहाफ उढ़ा दिया, जिस पर जगह-जगह टल्लियां लगी थीं.

चायघर ग्राहकों से भरा था. लाओ-शुआन के हाथ मशीनी ढंग से चाय की केतली चढ़ा और उतार रहे थे. उसकी आंखों

के बीचे गढ़े पड़ गये थे.

"क्या बात है लाओ-शुआन, तबीयत कुछ खराब है क्या?" खिचड़ी दाढ़ी वाले आदमी ने उससे पूछ लिया.

"नहीं, ठीक हूं."

"ठीक कहां दिखते हो! तुम्हारी मुस्कान तो. . ."

"लाओ-शुआन बेचारा कैसे मुस्करायेगा! एक तो इतना काम और फिर उसका बेटा. . ." कुबड़ा अभी बोल ही रहा था कि तभी भारी भरकम चेहरे पर बड़ी-बड़ी मूछों वाला एक व्यक्ति दूकान के अंदर घुसा. उसका शरीर भी चेहरे के अनुरूप ही भारी था. वह कत्थई कुरता पहने था, जो कमर पर पेटी से बंधा था. कमीज के बटन खुले थे. भीतर घुसते ही वह शुआन से बोला, "खाया उसने, कुछ फायदा हुआ? यह तो तुम्हारा सौभाग्य ही था शुआन, अगर समय से मुझे पता न चलता तो. . ."

शुआन के हाथ में केतली थी. उसने हाथ फैलाकर उस व्यक्ति के प्रति आदर प्रकट किया. उसके होंठों पर स्वागत की मुस्कान थी. पीछे की कोठरी से हुआ ता-मा भी निकल आयी थी. उसकी आंखों से चिंता झलक रही थी. वह भी उस व्यक्ति की ओर देखकर मुस्करायी. उसके हाथ में एक कप था, जिसमें चाय की ताजा पत्ती और जैतून का एक टुकड़ा पड़ा था. शुआन ने उसमें केतली से गर्म-गर्म पानी डालकर चाय तैयार कर दी और उस व्यक्ति को प्याला पकड़ा दिया.

"पक्का इलाज है, बेहतरीन. याद है, बिल्कुल गरम-गरम लाकर दिया था मैंने. तुमने भी उसे गरम-गरम ही खिलाया था न?" वह व्यक्ति बोला.

"यह तो सच है कि अगर खांग साहब हमारी मदद न करते तो यह काम नहीं हो पाता!" हुआ ता-मा ने चापलूसी के स्वर में कहा.

"पक्का इलाज है. आदमी के ताजा गरम खून में तर आटे की पिंडी खिलाने से तो कैसा भी तपेदिक ठीक हो सकता है." तपेदिक शब्द कान में पड़ते ही बुढ़िया का चेहरा अचानक फीका पड़ गया, पर जल्दी ही उसने उस पर मुस्कान लपेट ली. उस व्यक्ति ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया. वह जोर-जोर से बोलता जा रहा था. उसकी आवाज सुनकर भीतर सोया हुआ शियाओ-शुआन जाग गया था और खांसने लगा था.

"यह तो शियाओ का ही भाग्य था कि मौका हाथ आ गया. अब तो यह ठीक हो ही जायेगा. तभी तो देखो न, लाओ-शुआन भी कैसे मुस्करा रहा है." कहते-कहते दाढ़ी वाला भी उस व्यक्ति के करीब आकर बैठ गया, "मैंने सुना है कि आज किसी अपराधी की गर्दन काटी गयी है, वह शिया परिवार का लड़का था. किसका लड़का था? उसने किया क्या था?"

"और कौन होगा!" वह बोला, "शियाओं की चौथी बहू का लड़का था वह बदमाश!" और जब उसने देखा कि सब लोग गौर से उसे सुन रहे हैं तो उसकी कटपटियों की नसें उभर आयीं और स्वर तेज, "वह लौंडा तो जीना ही नहीं चाहता था. उसे जीवन से लगाव ही नहीं था. बस, मार

"पक्का इलाज है! आदमी के ताजा गरम खून में तर आटे की पिंडी खिलाने से तो कैसा भी तपेदिक ठीक हो सकता है!"

डाला गया. और फिर उसके मरने से भी हमें क्या मिल गया. उसके कपड़े तक वह लाल आंखों वाला जेलर आह यी ले गया. सबसे अधिक फायदा तो चाचा शुआन का ही हुआ है. इसके बाद नंबर आता है उस लड़के के छोटे ताऊ का, उस अकेले को इनाम के रूप में पचीस औंस चांदी मिली. अपने पल्ले से तो उसे एक पाई भी नहीं लगानी पड़ी."

तभी शियाओ-शुआन अपनी छाती को दोनों हाथों से दबाये खांसता हुआ अपनी कोठरी से बाहर निकल आया. फिर वह रसोई में घुसा और वहां एक कटोरे में बासी भात निकालकर खाने लगा. हुआ ता-मा उसके पीछे-पीछे चली आयी थी. उसने प्यार से उसकी पीठ पर हाथ रखते हुए पूछा, "शियाओ बेटे, तबीयत तो ठीक हो रही है न, भूख लगने लगी है अब?"

"अब बिल्कुल ठीक हो जायेगा. मैं शर्त लगा सकता हूं." लड़के पर एक नजर डालते हुए खांग ने कहा और फिर जल्दी से भीड़ को संबोधित करते हुए कहने लगा, "उस लड़के का छोटा ताऊ बड़ा चालाक आदमी है. अगर उसने इसकी सारी रिपोर्ट ऊपर अधिकारियों तक न पहुंचा दी होती तो पूरे परिवार की ही गर्दन साफ हो जाती. सारी जायदाद सरकार छीन लेती. यह सब तो उसने बचाया ही, ऊपर से इनाम भी मार लिया. यह लड़का शिया पू था बहुत बेवकूफ. देखो न, जेलर को ही बागी बनने की शिक्षा दे रहा था!"

"क्या सच? जरा सोचो भला." पीछे की मेज पर बैठे बीस-बाईस साल के एक लड़के ने साश्चर्य कहा.

अब वह लाल आंखों वाला आह यी तो उससे ज्यादा से ज्यादा जानकारियां लेना चाहता था, इसलिए वह उससे बातें करने लगा. तो वह लड़का बोला कि ता चिंग परिवार का यह सारा राज दरअसल हमारा है. अब इसका क्या मतलब हुआ. क्या कोई आदमी ऐसी बात कह सकता है? वह लाल आंख वाला जेलर जानता था कि घर पर सिर्फ उसकी मां ही है, पर उसने यह नहीं सोचा था कि इन तिलों में एक भी बूंद तेल नहीं है. इस सबसे खुंदक तो वह खा ही रहा था और इधर यह लड़का शेर के मुंह में जानबूझकर हाथ डाल रहा था. आह यी ने धर दिये दो हाथ उसके थोबड़े पर."

"आह यी तो मुक्केबाज भी रहा है. उसके घूंसे तो लड़के को रास्ते पर ले आये होंगे." कोने की मेज पर बैठा कुबड़ा चहक उठा था.

"ऐसा नहीं हुआ. यह पिद्दी तो जरा भी नहीं डरा. उलटे कहने लगा कि उसे तरस आ रहा है."

"क्या बात है, पिटने वाला ही तरस खा रहा है. मुझे तो वह पागल हो गया लगता है." कुबड़ा फिर चहका.

शियाओ-शुआन जोर-जोर से सांस लेता अपना भात खत्म कर चुका था. उसका माथा पसीने से तर था.

"बिल्कुल पागल." पीछे की मेज पर बैठा लड़का बोला.

चायघर में बैठे लोगों में फिर से फुर्ती आ गयी थी. वे गप्पों और ठहाकों में डूब गये. शिआओ-शुआन को फिर से खांसी का दौरा पड़ गया था और वह पूरी ताकत से खांसने लगा था. खांग उठकर उसके पास गया. उसके कंधों को थपथपाता हुआ कहने लगा, "शियाओ शुआन, यह पक्का इलाज है. तुम्हें अब खांसना नहीं चाहिए. . . ."

"पागल हो गया है." कुबड़ा गर्दन हिलाता हुआ बोला.

■

शहर के पश्चिम द्वार के पीछे दीवार के साथ लगी जमीन पहले सरकारी थी. पहले किसी पैदल चलने वाले ने रास्ता छोटा करने के लिए इसके बीच से कदम रखे होंगे और फिर लोगों के पांवों ने चल-चलकर यहां पगडंडी बना दी. अब यह पगडंडी भी एक सीमा रेखा का काम करती है. इसके बायीं ओर मृत्युदंड की सजा पाये या जेल में मरे लोगों की कब्रें हैं और बायीं तरफ गरीब और भिखारियों को दफनाया जाता है. ये पंक्तिबद्ध कब्रें ऐसी लगती हैं, जैसे किसी अमीर के जन्मदिन पर तरह तरह की डबलरोटियों की कतारें लगी हों.

जिस दिन आकाश खुला होता है, लोग इन कब्रों पर फूल चढ़ाने आते हैं, लेकिन इन दिनों सुबहें कुछ ज्यादा ही ठंडी हो गयी थीं. बिलो के वृक्षों पर अभी कलियां फूट ही रही थीं. हुआ ता-मा दायीं ओर एक कब्र पर चार तश्तरियां और एक कटोरे में चावल रखकर कुछ कागज के नकली नोट जला चुकी थी. अब वह चुपचाप आवाज की ओर एकटक दृष्टि गड़ाये जड़-सी बैठी थी, जैसे किसी का इंतजार कर रही हो, लेकिन किसका. यह वह खुद भी नहीं जानती थी. हवा का एक हल्का-सा झोंका आया तो उसके छोटे-छोटे सफेद बाल छितरा गये. एक ही साल में ये कितने सफेद हो गये थे.

अब पगडंडी पर उसी की तरह पके बालों वाली और चिथड़े जैसे कपड़े पहने एक बुढ़िया आ रही थी. उसके हाथ में एक पुरानी लाल रंग की टोकरी थी, जिसमें से रस्सी से बंधे कागज के नकली नोट बाहर झांक रहे थे. वह रुकती चल रही थी. फिर उसकी नजर हुआ ता-मा पर पड़ी. उसे अपनी ओर देखता पाकर वह सकुचा गयी और फिर घूमकर बायीं ओर की एक कब्र के पास अपनी टोकरी रख दी.

वह कब्र इसके ठीक सामने पगडंडी के दूसरी तरफ थी. उस बुढ़िया ने चार तश्तरियां और एक कटोरा चावल निकाला और फिर नकली नोट जलाने लगी. हुआ ता-मा यह सब देखती रही. सब काम निपटाकर वह रोने लगी थी. वह कब्र जरूर इस बुढ़िया के बेटे की होगी. अब बुढ़िया उठी, चलने की कोशिश में दो-तीन कदम रखे और फिर गिर पड़ी. अब वह पथरीली-सी आंखों से आकाश की ओर देखने लगी थी. हुआ ता-मा घबरा गयी. कहीं यह बेचारी बेटे की मौत से पगला तो नहीं गयी है. फिर वह पगडंडी पार करके उसके पास गयी और सांत्वना के स्वर में बोली, "बूढ़ी मां, अब ज्यादा दुख न करो. आओ घर चलें." बुढ़िया ने पता नहीं किस खयाल में गर्दन हिलायी. अचानक वह चौंकी और चिल्लाकर बोली, "देखो, वह क्या है?"

हुआ ता-मा ने उस बुढ़िया की उंगली की दिशा में देखा. गौर से देखने पर उसे कब्र पर लाल और सफेद फूल एक माला के आकार में उगे हुए नजर आये. वह चकित रह गयी.

उन दोनों की नजरें पिछले कई सालों से कमजोर थीं. फिर भी, उन्हें ये ताजा फूल अच्छी तरह से दिखाई दे रहे थे. बड़े करीने से लगे थे. हुआ ता-मा ने अपने बेटे की कब्र पर और आसपास की कब्रों पर नजर डाली. वहां इधर-उधर कहीं नीले मुरझाये हुए फूल उगे थे. उनमें कोई तरतीब नहीं थी और सर्दी में वे सब ठिठुरते से लगते थे. उसे अपने भीतर एक अज्ञात-सा खालीपन महसूस हुआ. वह समझ नहीं पा रही थी कि क्यों दूसरी वृद्धा अपने बेटे की कब्र के बिल्कुल करीब पहुंचकर नीचे झुककर उन फूलों को देखने लगी थी. फिर वह बुदबुदायी, "क्या बात हो सकती है. . ."

उसकी आंखों से आंसुओं की लड़ियां निकलने लगीं और वह आतुर स्वर में चिल्ला-सी उठी, "यू, मेरे बेटे! तुम्हारे साथ अन्याय हुआ है, पर यह भूलना नहीं. कहीं तुम्हारा हृदय अब भी दुख से भरा ही तो नहीं है? क्या यही बात बताने के लिए आज तुमने यह तरीका अपनाया है?" फिर उसने आसपास नजरें घुमायीं. एक डाली पर एक कौआ बैठा दिखाई दे गया, "यू, यू, मेरे प्यारे बेटे, यह एक धोखा था. उन्होंने तुम्हें जीते जी ही दफना दिया. यह ईश्वर जानता है या फिर तुम्हारी आंखें. अगर तुम इसी कब्र में हो और मेरी बात सुन रहे हो तो उस कौए को उड़ाकर अपनी कब्र पर बिठा दो, मुझे पता चल जायेगा."

हवा थम गयी थी. आसपास की घास तांबे के तारों की तरह खड़ी थी. एक हल्की-सी सरसराहट हवा में कहीं हुई और फिर खुद ही हल्की होते-होते विलीन हो गयी. एक बार फिर से मौत का सन्नाटा छा गया. वे दो बूढ़ी औरतें सूखी घास पर खड़ी एकटक कौवे को देख रही थीं. पेड़ की सीधी टहनी पर गर्दन झुकाये बैठा कौवा हिल भी नहीं रहा था, लगता था, जैसे लोहे की मूर्ति वहां रखी हो.

काफी देर बीत गयी. कब्रिस्तान में आने वालों की संख्या बढ़ने लगी थी. हुआ ता-मा को लगा कि उसके दिल पर से एक भारी बोझ उतर गया हो. उसने अपनी साथिन से कहा, "आओ, चलें."

वह थोड़ा झिझकी. फिर उसने स्वयं को संभाला, कटोरा और तश्तरियां उठा लीं. एक क्षण के लिए वह रुकी, फिर आखिरकार धीरे-धीरे कदम उठाती चल पड़ी. वह बुदबुदा रही थी, "पता नहीं, क्या बात थी. . ."

अभी वे दोनों करीब तीस कदम ही चली होंगी कि उन्हें कौवे की तीखी कांव-कांव सुनायी दी. अपनी गर्दनें पीछे घुमाकर उन्होंने देखा कि कौवे ने पहले पंखों को फैलाकर तौला, फिर अपने को आगे की ओर झटका दिया और पंख फटकारता हुआ दूर क्षितिज की ओर उड़ गया. ■

● रूपांतर : सुरेश उनियाल

तस्वीर बोलती है

छाया :
▣ आर. के. गोयल,
7, खुड़बुड़ा, देहरादून (उ.प्र.)

यह तस्वीर क्या बोलती है?—इस चित्र का कोई मनपसंद शीर्षक, सिर्फ पोस्टकार्ड पर अपने नाम-पते सहित, 30 सितंबर, 81 तक इस पते पर भेज दें—**संपादक सारिका (तस्वीर बोलती है)**, 10 दरियागंज, नयी दिल्ली-110002. चुने गये दो शीर्षकों पर पचास रुपये के नकद पुरस्कार दिये जायेंगे. आप कितने भी शीर्षक भेज सकते हैं, लेकिन हर पोस्टकार्ड पर दाहिनी तरफ प्रकाशित 'तस्वीर बोलती है' बतौर कूपन **चिपकाना आवश्यक है.**

एकांकी

राहगीर

• लु-शुन

चित्रांकन : त्यागी

समय : कोई एक शाम.
स्थान : कोई भी जगह.
पात्र :

बूढ़ा आदमी : काले चोगे में, उम्र लगभग सत्तर साल, दाढ़ी और बाल सफेद.

लड़की : उम्र लगभग दस साल, सुनहरे बाल, काली आंखें, एक सफेद चोगा, जिस पर काले चौकोर निशान.

राहगीर : उम्र लगभग तीस-चालीस साल, थका और चिड़चिड़ा. दृष्टि में एक सुलगन लिये, काली मूंछें और अस्त-व्यस्त बाल, जीर्ण-शीर्ण जाकेट तथा पतलून, जूते इतने फटे-पुराने कि पैर लगभग नंगे, कंधे से झूलता एक थैला, एक लंबे डंडे पर झुका हुआ.

पूर्व की ओर कुछ वृक्ष और खंडहर. पश्चिम की ओर एक सुनसान कब्रिस्तान, उनके बीच दूर तक धंसती दीख पड़ती एक अस्पष्ट-सी पगडंडी, एक छोटी-सी झोपड़ी जिसका द्वार उस पगडंडी की ओर खुलता है. द्वार के साथ धरती के सीने में सूखा दरख्त ठूंठ की शक्ल में.

(लड़की बूढ़े आदमी को उस ठूंठ से नीचे उतरने में सहायता देती हुई)

बूढ़ा आदमी : बेटी...! तुम रुक क्यों गयीं?

लड़की : (पूर्व की ओर देखती हुई) देखो! देखो! कोई आ रहा है.

बूढ़ा : कोई बात नहीं! मुझे अंदर ले चलो! सूरज छिप रहा है.

लड़की : पर मैं एक बार देखना चाहती हूं.

बूढ़ा आदमी : कैसी बच्ची हो तुम? प्रतिदिन आकाश, पृथ्वी और हवा देखती हो, क्या उतना ही काफी नहीं है? उधर देखने से कोई लाभ नहीं होने वाला. फिर भी तुम देखना चाहती हो कि कौन आ रहा है? सूरज छिपने के बाद जो भी आयेगा, निश्चय ही तुम्हारी कोई भलाई नहीं कर सकता, बेहतर है, हम अंदर चलें.

लड़की : लेकिन...लेकिन वह तो बिल्कुल पास आ गया. ए...यह तो भिखारी है.

बूढ़ा आदमी : भिखारी? वह तो ऐसा नहीं है.

राहगीर पूर्व की दिशा से झाड़ियों के पीछे से प्रकट होता है. और एक क्षण के बाद झिझकता हुआ धीरे-धीरे बूढ़े और लड़की की ओर बढ़ता है.

राहगीर : नमस्कार, श्रीमान.

बूढ़ा आदमी : नमस्कार! नमस्कार!

राहगीर : श्रीमान, क्या मुझे पानी का एक प्याला मिलेगा? चलते-चलते मुझे बहुत प्यास लग आयी है, और रास्ते में कोई भी तालाब या कुआं नहीं मिला.

बूढ़ा आदमी : हां—हां—क्यों नहीं, तुम बैठो. **(लड़की से)** बेटी! थोड़ा पानी लाओ. देखना, प्याला साफ हो.

(लड़की धीरे-से झोपड़ी की ओर जाती है.)

बूढ़ा आदमी : बैठो अजनबी!... क्या नाम है तुम्हारा?

राहगीर : मेरा नाम? वह मैं नहीं जानता. जहां तक मुझे याद है, मैं अपने पर निर्भर हूं, इसलिए कभी वास्तविक नाम की आवश्यकता ही नहीं पड़ी. जब मैं अपने रास्ते जाता हूं तो लोग कभी इस नाम से पुकारते हैं, तो कभी उस नाम से—जो भी उन्हें पसंद आता है. पर मैं उन्हें कभी याद नहीं रखता और मुझे कभी एक ही नाम से दुबारा नहीं पुकारा गया.

बूढ़ा आदमी : ओ...ठीक है, ठीक है, पर यह तो बताओ, तुम कहां से आ रहे हो?

राहगीर : (थोड़ा रुकता हुआ) मैं नहीं जानता, जहां तक मैं याद कर सकता हूं, बस मैं ऐसे ही हमेशा चलता आया हूं.

बूढ़ा आदमी : ओह! अच्छा, यह तो बताओ, तुम किधर जा रहे हो?

राहगीर : बताता हूं, बताता हूं. बात दरअसल यह है कि मैं नहीं जानता. जहां तक मुझे स्मरण है, मैं हमेशा ऐसे ही चलता रहा हूं, एक के बाद एक स्थान छोड़ते लांघते. मैं यही जानता हूं कि मैंने बहुत लंबा फासला तय किया है और मैं अब यहां हूं. इसके बाद मुझे उस दिशा में **(पश्चिम की ओर इशारा करते हुए)** आगे बढ़ना है. (लड़की

सावधानी से लकड़ी के एक प्याले में पानी लिये आती है, पथिक को देती है.)

राहगीर : (प्याला लेकर) : धन्यवाद बेटी. (**वह पानी को दो ही घूंटों में पी जाता है तथा प्याला वापस कर देता है.**) धन्यवाद बेटी. ऐसे दयालु लोगों से मिलना कम ही होता है. मैं वास्तव में नहीं जानता कि कैसे तुम्हारा धन्यवाद करूं.

बूढ़ा : इतना धन्यवाद देने की कोई जरूरत नहीं. हमने तुम्हारा कोई उपकार नहीं किया.

राहगीर : यह सही है कि तुमने मेरा कोई उपकार नहीं किया, लेकिन अब मैं कुछ अच्छा अनुभव कर रहा हूं. मुझे अब आगे चलना चाहिए. अच्छा, क्या तुम जानते हो कि आगे कैसी जगह है?

बूढ़ा आदमी : आगे? आगे तो कब्रिस्तान है?

राहगीर : कब्रिस्तान?

लड़की : (**बात काटती हुई**) नहीं, नहीं गलत. आगे बहुत से जंगली गुलाब और कुमुदनी के फूल हैं. मैं प्रायः वहां खेलने, उन्हें देखने के लिए जाती हूं.

राहगीर : (**पश्चिम की ओर मुस्कराता है**) हां, हां, वहां बहुत से जंगली गुलाब और कुमुदनी के फूल हैं, मैं अक्सर उन्हें देखने वहां गया हूं लेकिन वे कब्रिस्तान हैं. (**बूढ़े से**) श्रीमान, कब्रिस्तान से परे क्या है?

बूढ़ा आदमी : कब्रिस्तान से परे? वह मैं नहीं जानता. मैं कभी उससे आगे नहीं गया.

राहगीर : तुम भी नहीं जानती?

लड़की : मैं भी नहीं जानती.

बूढ़ा आदमी : जो मैं जानता हूं वह है उत्तर, पूर्व और दक्षिण जहां से तुम आये हो, वे ऐसे स्थान हैं जिन्हें मैं अच्छी तरह जानता हूं, और वह शायद तुम्हारे लिए भी अच्छी जगहें होंगी. मैंने जो कहा है, उसका बुरा मत मानना. पर तुम पहले ही इतने थके हुए हो कि, अच्छा होगा अगर तुम वापस चले जाओ. क्योंकि अगर तुमने सफर जारी रखा, तो शायद तुम अपनी मंजिल के अंत तक न पहुंच सको.

राहगीर : क्या मैं कभी अंत तक नहीं पहुंच पाऊंगा? (**वह इस पर सोचता है, फिर जाने को उठता है**) असंभव. मुझे अवश्य चलते रहना चाहिए. अगर मैं वापस चला गया. . . यहां कोई ऐसी जगह नहीं, जहां बड़े लोग नहीं, जहां जमींदार नहीं, जहां निष्कासन शिविर और कटघरे नहीं हों, कोई ऐसी जगह नहीं, जहां शर्म से भरी मुस्कराहट न हो और घड़ियाली आंसू न हों. मैं उनसे नफरत करता हूं. मैं वापस नहीं जाऊंगा.

बूढ़ा आदमी : तुम गलत भी हो सकते हो! तुम्हें शायद ऐसे आंसू भी दिखाई पड़ें, जो हृदय की तड़प से निकलते हैं, जो वास्तव में करुणा के स्रोत होते हैं.

राहगीर : नहीं, मैं हृदयों से निकले आंसू या वास्तविक करुणा, आदि कुछ भी नहीं देखना चाहता.

बूढ़ा आदमी : तब तो—(**अपना सिर हिलाता है**) तुम्हें जाना ही पड़ेगा.

राहगीर : हां, मुझे जाना ही पड़ेगा क्योंकि आगे से एक आवाज मुझे निरंतर बुला रही है, जो कभी मुझे चैन नहीं लेने देती. मुसीबत यह है कि मेरे पैर सफर से इतने घायल और लहूलुहान हो गये हैं कि मेरा बहुत सारा खून नष्ट हो गया है. (**वह बूढ़े को दिखाने के लिए एक पैर उठाता है**) मुझमें ज्यादा खून नहीं है. मुझे कुछ पीने की आवश्यकता है. पर कहां मैं इसे पाऊंगा? इसके अतिरिक्त मैं दूसरे का खून भी नहीं पीना चाहता. इस कमी को पूरा करने के लिए मुझे पानी पीना पड़ता है. मेरे रास्ते में पानी सदा रहता है, वास्तव में मैंने कभी इसकी कमी अनुभव नहीं की. पर मेरी शक्ति घट रही है, क्योंकि मेरे खून में बहुत ही पानी है, और आज मैं कम चला हूं. शायद इसलिए कि मुझे पानी का छोटा-सा भी सोता नहीं मिला.

बूढ़ा आदमी : शायद यह कारण न हो. सूरज डूब चुका है, मैं सोचता हूं, अच्छा होगा अगर तुम मेरी तरह ही आराम कर लो.

राहगीर : पर आगे की आवाज, मुझे चलते रहने के लिए प्रेरित कर रही है.

बूढ़ा आदमी : मैं जानता हूं.

राहगीर : तुम जानते हो? तुम उस आवाज को जानते हो?

बूढ़ा आदमी : हां! ऐसा लगता है कि यह आवाज मुझे भी पहले बुलाया करती थी.

राहगीर : वही आवाज, जो अब मुझे बुलाती है? है न?

बूढ़ा आदमी : वह मैं नहीं कह सकता. मुझे कई बार बुलाया. पर मैंने इसकी ओर ध्यान नहीं दिया और यह बंद हो गयी. इतना तो मुझे अच्छी तरह याद है.

राहगीर : आह, तुमने उसको ओर ध्यान नहीं दिया. . . (**वह इस पर सोचता है, जाने को होता है तथा सुनता है**) नहीं! मुझे जाना चाहिए. मैं आराम नहीं कर सकता. यह दुःख की बात है कि मेरे पैर बेहद बुरी हालत में हैं. (**जाने को तैयार होता है**)

लड़की : यहां. . . (**वह उसे कपड़े का एक टुकड़ा देती है**) अपने पैरों पर पट्टी बांध लो.

राहगीर : धन्यवाद, लड़की! (**वह कपड़ा लेता है**) सचमुच. . .सचमुच, ऐसे दयालु कम होते हैं. . .इसे लपेटकर मैं आगे चल सकता हूं. (**वह एक पत्थर पर बैठकर घुटने के इर्द-गिर्द कपड़ा लपेटने लगता है**) नहीं, यह पूरा नहीं आयेगा. (**वह अपने पैरों को फैलाता है**) लड़की, इसे वापस ले लो. यह पट्टी के लिए पूरा नहीं है. तुम इतनी दयालु हो कि मैं नहीं जानता कैसे तुम्हारा धन्यवाद करूं?

बूढ़ा आदमी : उसे धन्यवाद देने की कोई आवश्यकता नहीं. उसने तुम्हारा कोई उपकार थोड़े ही किया.

राहगीर : नहीं, मैं जानता हूं, मेरा उसने कोई उपकार नहीं किया, लेकिन मेरे लिए तो यह श्रेष्ठ भिक्षा है. क्या इसकी तुलना में कोई भी चीज ठहर सकती है?

बूढ़ा आदमी : तुम्हें इतना गंभीर होने की आवश्यकता नहीं.

राहगीर : मैं जानता हूं, पर मैं इसकी कोई सहायता नहीं कर सकता. मुझे डर है किंतु यह मेरा अपना ढंग है. अगर मुझे भिक्षा ग्रहण करनी होती तो मेरी दृष्टि उन गिद्धों जैसी होती, जो लाश के इर्द-गिर्द मंडराते हैं, और चाहते हैं कि लाश जल्दी से जल्दी गल जाये. और मैं अपने समेत तथा लाश को छोड़कर प्रत्येक वस्तु की तबाही को

समाधि-लेख

लू शुन

मैंने सपने में अपने आपको एक कब्र के समाधि-लेख के सामने खड़ा पाया. मैं समाधि-लेख पर खुदी इबारतों को पढ़ना चाह रहा हूं मगर इसका घटिया जीर्ण-शीर्ण बलुआ पत्थर और इस पर उग आये घने मांस के गुच्छे मुझे ऐसा करने से रोकते हैं. इन सब बाहरी आक्रमणों के बाद केवल यही बची-खुची इबारतें रह गयी हैं :

". . .सारी हंसी-खुशी और रंगरेलियों को पाला मार गया; स्वर्ग में रसातल देखा, सारी आंखों में शून्यता पायी, निराशा में मोक्ष मिला. . .

". . .एक यायावर आत्मा है जो एक विषदंतयुक्त अजगर का रूप धारण कर लेती है. औरों को डसने के बजाय यह खुद को डस लेती है और फना हो जाती है. . .

". . .चले जाओ! . . ."

जब मैं समाधि-लेख के पीछे घूमकर गया तो मुझे कब्र दिखाई दी. अकेलेपन से त्रस्त—एकमात्र कब्र. कोई एक पत्ती तक इस टूटी-फूटी कब्र पर नहीं उगी हुई थी. एक काफी चौड़ी दरार से मुर्दा दिख रहा था—आंतें, हृदय और जिगर गायब थे. फिर भी उसके चेहरे से न खुशी झलक रही थी, न गम—धुएं की तरह रहस्यमय चेहरा.

संदेह और डर के बीच बंटा मैं अभी वापस जाने की सोच ही रहा था कि मेरी नजर समाधि-लेख के पीछे लिखी अर्धमिटी इबारतों पर पड़ी :

". . . मैंने अपना दिल खाने के लिए खसोट लिया—इसका असली जायका मालूम करने के लिए. लेकिन दर्द ही इतना तेज हुआ कि मैं जायका कैसे मालूम कर सकता था?. . .

". . .जब दर्द धीरे-धीरे कम हुआ तो मैंने दिल का स्वाद लेना शुरू किया. लेकिन तब तक तो यह बासी हो चुका था. . . मुझे इसका वास्तविक स्वाद कैसे मालूम पड़ सकता था. . .

". . .जवाब दो या चले जाओ. . ."

मैं जाना चाहता भी था. लेकिन कमबख्त मुर्दा अपनी कब्र में उठकर बैठ गया. बिना होंठ हिलाये उसने कहा :

"जब मैं खाक हो जाऊंगा, तब तुम मुझे मुस्कराते देखोगे!"

मैं अपने सिर पर पैर रखकर वहां से भागा और पीछे पलटकर भी नहीं देखा, इस डर से कि कहीं वह मेरे पीछे ही न आ रहा हो. □

● अनुवाद : राजीव शर्मा

आमंत्रित करता. पर मैं एसा नहीं हूं. अगर मैं होता भी तो मैं ऐसा अंत कभी न चाहता, जिसे वे न चाहें. मैं सोचता हूं, यह ठीक ही है (**लड़की से**) यह कपड़े का टुकड़ा ठीक है, पर यह बहुत छोटा है इसलिए मैं इसे तुम्हें देता हूं.

लड़की : (**डर से पीछे हटती हुई**) मुझे इसकी चाह नहीं. तुम रख लो.

राहगीर : (**मुस्कराते हुए**). . .ओह! . . .क्योंकि मैंने इसे छुआ है?

लड़की : (**सिर हिलाती है तथा उसके थैले की ओर संकेत करती हुई**). . . इसे उसमें रख लो, मजाक के लिए ही सही.

राहगीर : (**निराश होकर पीछे हटता हुआ**) पर इसको अपनी पीठ पर लादे मैं कैसे चल सकता हूं?

बूढ़ा आदमी : इसीलिए तो कहा कि तुम आराम चाहते हो इसलिए कुछ नहीं उठा सकते. थोड़ा आराम कर लो, तब तुम बिल्कुल ठीक हो जाओगे.

राहगीर : यह ठीक है कि आराम. . . (**वह विचार करता है और खड़ा होता हुआ सुनता है**) . . .नहीं, मैं नहीं कर सकता. मेरे लिए चलना ही अच्छा होगा.

बूढ़ा आदमी : तुम आराम नहीं करना चाहते?

राहगीर : हां, करना चाहता हूं.

बूढ़ा आदमी : तब ठीक है—थोड़ा आराम कर लो.

राहगीर : पर मैं कर नहीं सकता.

बूढ़ा आदमी : तुम अब भी सोच रहे हो कि तुम्हारा जाना ही बेहतर है?

राहगीर : हां मेरा जाना ही बेहतर है.

बूढ़ा आदमी : बहुत अच्छा, तब तुम जा सकते हो.

राहगीर : (**अंगड़ाई लेता हुआ**). . . अच्छा, तब मैं विदा लेता हूं. मैं तुम्हारा बहुत कृतज्ञ हूं (**लड़की से**) मैं यह तुम्हें वापस दूंगा. कृपया इसे ले लो. (**डर से लड़की अपना हाथ पीछे करती है तथा झोपड़ी में जाने की सोचती है.**)

बूढ़ा आदमी : इसे ले लो. अगर यह इतना ही भारी है तो जब तुम चाहो इसे कब्रिस्तान में फेंक सकते हो.

लड़की : (**आगे कदम बढ़ाती हुई**) ओ नहीं, ऐसा नहीं होगा.

राहगीर : नहीं, ऐसा नहीं होगा.

बूढ़ा आदमी : तब, इसे किसी जंगली गुलाब या कुमुदनी पर टांग देना.

लड़की : (**हंसती हुई ताली पीटती है**) ठीक!

राहगीर : आह. . . .!

(**एक क्षण के लिए खामोशी**)

बढ़ा आदमी : तब अलविदा! तुम शांति से रहो. (**वह खड़ा होता है तथा लड़की से**) बच्ची, मुझे अंदर चलने में सहायता दो. देखो, सूरज पहले ही डूब चुका है (**वह द्वार की ओर मुड़ता है**)

राहगीर : दोनों को धन्यवाद! तुम भी चैन से रहो (**वह कुछ कदम उठाता है. . .विचारों में खोया-सा आगे बढ़ता है**) लेकिन मैं ऐसा नहीं कर सकता. मेरे लिए चल देना ही अच्छा है (**अपना सिर उठाता है और निर्णय की स्थिति में पश्चिम की ओर चल देता है. लड़की बूढ़े आदमी को झोपड़ी के अंदर जाने में सहायता देती है, तब द्वार बंद कर लेती है. पथिक निस्तेज-सा उजाड़ की ओर बढ़ता है और पीछे रात उतर आती है.**) □

● **अनुवाद : सत्यप्रकाश**

छायांकन : एक चीनी चित्रकार
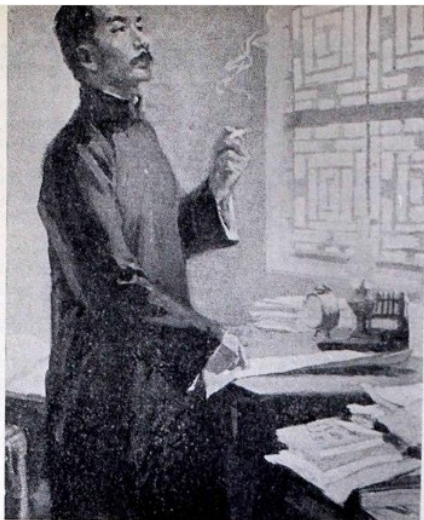
लू शुन ने कहा है :

'सामंती इतिहास का मतलब है— लोगों को खाओ!'

▣ ये ईह्य न

यह एक संयोग ही है कि एशिया के दो प्रमुख देशों में दो महान कथा-शिल्पी लगभग एक ही समय में पैदा हुए. उनका रचनाकाल लगभग एक ही रहा. एक ही तरह से उनका जीवन संघर्ष में बीता. लगभग एक ही समय में उनकी मृत्यु हुई, और आज हम उन दोनों को ही अपनी-अपनी भाषा के यथार्थवादी गद्य का जनक मानते हैं. ये हैं भारत के प्रेमचंद और चीन के लू शुन. यहां प्रस्तुत है लू शुन के दुधर्ष चरित्र की संक्षिप्त संघर्ष-गाथा, चीनी लेखक संघ के शंघाई शाखा के सचिव के शब्दों में.

लू शुन का जन्म 25 सितंबर, 1881 को यांग्त्से के दक्षिण में एक छोटे से कस्बे शाओ-शिंग में हुआ था. उनका बचपन अधिकतर नानी के घर पर बीता. वहां पर कई किसानों के लड़के उनके दोस्त बन गये थे. तत्कालीन अर्धसामंती, अर्धउपनिवेशीय समाज में किसान बुरी तरह से अत्याचारों तले पिस रहे थे, लू शुन के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा.

पिता की जल्दी मृत्यु हो जाने के कारण लू शुन को अपनी पढ़ाई जारी रखने में काफी कठिनाई हुई. अठारह वर्ष की कच्ची उम्र में ही उन्हें घर छोड़कर नानकिंग स्थित सरकारी सहायता प्राप्त कॉलेज में दाखिला लेने जाना पड़ा. छात्र जीवन में ही लू शुन अपने देश को सामंती चंगुल से मुक्त कराने के लिए कटिबद्ध हो गये. उन्होंने आधुनिक वैचारिक मान्यताओं का अध्ययन करना शुरू कर दिया.

1902 में वे आगे की पढ़ाई के लिए जापान गये. वहां उन्होंने मेडिकल कॉलिज में दाखिला लिया, ताकि अपने देशवासियों को रोगों से छुटकारा दिलाने के लिए उनके पास वैज्ञानिक जानकारी हो. 1905 में रूस-जापान युद्ध के दौरान उन्होंने एक फिल्म में देखा कि अच्छे-तगड़े चीनी भी आसानी से जापानियों की गिरफ्त में आ जाते. इससे लू शुन की समझ में आ गया कि दबे-पिसे लोगों को दवा की इतनी जरूरत नहीं है, जितनी उनके दृष्टिकोण में बदलाव लाने की है, और यह काम साहित्य ही कर सकता है. बस फिर उन्होंने अपनी मेडिकल की पढ़ाई यहीं छोड़कर कलम हाथ में ले ली. 1908 में वे टोकियो में कुंग फू लीग में शामिल हो गये. ये लोग एक लोकतांत्रिक क्रांति के लिए काम कर रहे थे.

1908 में लू शुन चीन लौट आये. अक्टूबर 1911 में चीन में पहली लोकतांत्रिक क्रांति हुई और मांचू सरकार का तख्ता पलट दिया गया. लू शुन उस समय शाओशिंग मिडिल स्कूल में थे. वे छात्रों की एक सशस्त्र टुकड़ी को संगठित करके सड़कों पर ले आये, उन्हें क्रांति का महत्त्व समझाया.

1911 की क्रांति के तत्काल बाद लू शुन शिक्षा मंत्रालय में आ गये. 1912 में जब राजधानी नानकिंग से पीकिंग आयी तो वे भी वहां आ गये.

रूस में 1917 में अक्टूबर क्रांति की सफलता ने चीन के दबे-पिसे लोगों में उत्साह भर दिया. चीन के प्रगतिशील बुद्धिजीवी लोगों को क्रांति के अनुभव तथा मार्क्सवाद के बारे में बताने लगे. इन प्रारंभिक चीनी मार्क्सवादियों में लू शुन को एक नये युग की पहली किरण के दर्शन हुए. मई 1918 में प्रकाशित उनकी कहानी **एक पागल की डायरी** (सारिका, नवंबर-एक 1979) सामंतवाद के सामने एक चुनौती रखती है और चीन के नये साहित्य की नींव का काम करती है. इसके बाद उन्होंने उसी विषय पर **खुंग-ई-ची** और **औषधि** जैसी कहानियां और कई निबंध लिखे, जो बाद में **गर्म हवा** नाम से एक संकलन में प्रकाशित हुए.

4 मई, 1919 को इन प्रारंभिक मार्क्सवादियों के नेतृत्व में युवा बुद्धिजीवियों ने साम्राज्यवाद और सामंतवाद के विरोध में एक आंदोलन छेड़ दिया. शीघ्र ही यह आंदोलन पीकिंग के बाद शंघाई और अन्य स्थानों पर भी फैल गया. अकेले शंघाई में ही छात्रों पर चलने वाले मुकद्दमों के विरोध में और पीकिंग के आंदोलन के समर्थन में 70,000 मजदूरों ने हड़ताल कर दी. लू शुन इस आंदोलन से जुड़े रहे.

इन दिनों लू शुन 'न्यू यूथ' के संपादक मंडल में थे. यह अखबार सांस्कृतिक क्रांति और साहित्य में क्रांति लाने के लिए कई मुहिम छेड़ चुका था. यहां काम करते हुए लू शुन चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के जनकों में से एक, लि था-चाओ के निकट संपर्क में आये और इन दोनों व्यक्तियों ने मिलकर बूर्जुवाजी उदारवादिता और संशोधनवादी प्रवृत्तियों का विरोध किया. 1920 के आखिरी दिनों में एक बूर्जुवा बुद्धिजीवी हु शिह ने 'न्यू यूथ' के संपादक मंडल को एक पत्र भेजा जिसमें उन्हें कहा गया था कि वे राजनीति से दूर रहने की अपनी पुरानी नीतियों पर वापस आ जायें और तत्संबंधी घोषणा भी जारी कर दें.

> "लू शुन ने कहा, 'मुझे लगता है कि 'न्यू यूथ' में विभाजन होना अब निश्चित हो गया है. इस दरार को पाटने की कोशिश बेकार है. . .'"

इसे स्वीकार करने का मतलब था प्रतिक्रियावादी ताकतों के सामने सिर झुका लेना. लू शुन और लि था-चाओ ने इसका विरोध किया. लू शुन ने कहा, "मुझे लगता है कि 'न्यू यूथ' में विभाजन होना अब निश्चित हो गया है. इस दरार को पाटने की कोशिश बेकार है . . . .जहां तक राजनीति से दूर रहने की घोषणा को प्रकाशित करने का सवाल है, मैं इसकी कोई जरूरत नहीं समझता." इससे लू शुन की राजनीतिक प्रवृत्ति स्पष्ट हो जाती है.

अक्टूबर 1927 में लू शुन शंघाई चले गये. इस समय क्रांति की ज्वाला मंद पड़ गयी थी और यह समय क्रांतिकारियों के लिए काफी खतरनाक था. इस दौरान लू शुन कलाओं के मार्क्सवादी सिद्धांतों का अध्ययन करते रहे. प्रतिक्रियावादी बूर्जुवा लेखकों और प्रतिक्रियावादी साहित्य के विरुद्ध साहित्य को हथियार के रूप में इस्तेमाल करने के लिए उन्होंने जोउ शि और यिन फू के साथ मिलकर मोर्चा खोल दिया.

1930 के बसंत में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में लू शुन तथा अन्य क्रांतिकारी लेखकों ने क्रांतिकारी साहित्य का एक संयुक्त मोर्चा—'वामपंथी लेखकों की चीनी लीग' शुरू कर दिया. लू शुन इनके आदर्श थे. 1930 से 1936 तक पार्टी के नेतृत्व में और कई युवा क्रांतिकारी लेखकों के सहयोग से लू शुन कोमितांग सरकार की दमनकारी हरकतों का मुकाबला करते रहे. उन्होंने और उनके साथियों ने मिलकर क्रांतिकारी साहित्य लिखने और उसे जन-जन तक पहुंचाने का आंदोलन छेड़ दिया. प्रतिक्रियावादी विचारकों के सभी हमलों का उन्होंने मुंहतोड़ जवाब दिया और धीरे-धीरे सर्वहारा का क्रांतिकारी साहित्य ही चीन का एकमात्र साहित्य बन गया.

1931-33 के दौरान लू शुन चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के एक नेता छ्यू छ्यु-पाय के निकट संपर्क में आये. उन्होंने मिलकर 'लेखन में स्वतंत्रता' का समर्थन करने वाले बूर्जुवा लेखकों के खिलाफ जेहाद छेड़ दिया और कला के मार्क्सवादी सिद्धांतों से पाठकों का परिचय करवाया. छ्यू छ्यु-पाय ने लू शुन के निबंधों का अध्ययन किया और उनमें से कुछ को चुनकर एक संकलन तैयार किया, जिसकी भूमिका भी उन्होंने खुद लिखी. इसमें हमें लू शुन के विचारों के विकास का एक क्रमबद्ध और व्यापक विश्लेषण मिलता है, और साथ ही चीन में चल रही वैचारिक लड़ाई में उनकी भूमिका के महत्त्व का भी पता चलता है. इससे लू शुन का काफी उत्साहवर्धन हुआ, उन्हें संघर्ष में अपनी भूमिका को और अधिक साफ तौर पर देखने, अपने दृष्टिकोण की कमियों को जानने और एक स्पष्ट लक्ष्य को प्राप्त करने की प्रेरणा मिली. इस प्रकार वे क्रांति के सूत्रधार और आधुनिक चीन के श्रेष्ठ विचारक और लेखक बन गये.

1935 के आखिरी दिनों में लू शुन बीमार पड़ गये. जब जापान ने चीन पर आक्रमण किया तो बीमार होने के बावजूद लू शुन ने जापान के विरुद्ध मोर्चों में हिस्सा लिया.

एक लंबी बीमारी के बाद 19 अक्टूबर, 1936 को लू शुन की मृत्यु हो गयी. उनके अंतिम संस्कार के लिए दस हजार लोग एकत्र हुए थे.

लू शुन की मान्यता थी, "लेखक का कार्य समाज का अति संवेदनशील चित्रण है. यह कार्य जितना अधिक प्रभावकारी होगा, समाज को उतना ही अधिक प्रभावित करके परिवर्त्तन का मार्ग प्रशस्त करेगा."

उनकी अधिकतर कहानियां 1918 से 1925 के बीच की लिखी हुई हैं. इनमें उनके 1911 की क्रांति से लेकर चार मई आंदोलन तक के अनुभवों का

चित्रण है. उन्होंने कहा भी है, "मेरे विषय अधिकतर असामान्य समाज की दुर्भाग्यपूर्ण स्थितियां हैं. . .ताकि उनकी ओर लोगों का ध्यान जा सके." उनकी पहली कहानी **एक पागल की डायरी** एक तरह से सामंतवाद के विरुद्ध युद्ध की घोषणा ही है. उनका पागल कहता है :

"मैं इस ओर ध्यान देता हूं, पर हमारे इतिहास में तो इसका कोई क्रमबद्ध विवरण है ही नहीं. . .फिर मैंने शब्दों के भीतर छिपे अर्थों को पढ़ना शुरू किया तो पाया कि पूरी किताब तीन ही शब्दों से भरी पड़ी है—लोगों को खाओ!"

अर्धसामंती और अर्धउपनिवेशीय चीन के अभागों के प्रति लू शुन के मन में बहुत अधिक प्रेम और संवेदना है. उन 'अभागों' में सबसे अधिक संख्या दलित किसान स्त्रियों की है, क्योंकि सामंती चीन में गरीब किसान सबसे अधिक शोषण का शिकार हुआ है और इस वर्ग की स्त्री का दर्जा तो और भी नीचे है. आ क्यू एक गरीब और भूमिहीन किसान है. **मेरा पुराना घर** में च्युन-थु एक मेहनती, सीधा-सादा और दलित किसान है जिसे 'कभी पेट भर खाना भी नसीब नहीं हुआ.' **नव वर्ष की पूजा** में शियांग लिन की पत्नी की स्थिति यह है कि क्रूर दुर्भाग्य ने उससे उसके पति और बच्चे को छीन लिया है. वह भीख मांगने के लिए मजबूर हो जाती है, और पता नहीं कब बिना किसी के जाने मर भी जाती है. ये विभिन्न चेहरे चीनी पाठक की स्मृतियों में जीवित हैं क्योंकि यही तो 1911 की क्रांति से लेकर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के गठन तक वहां के गांवों की स्थिति रही थी. इन चरित्रों के प्रति लू शुन के मन में मानवीय सहानुभूति थी. उनके दुखों का चित्रण करते हुए लू शुन की कलम बहती चली जाती है. यह सही है कि लू शुन ने इन पात्रों की मूर्खता व उदासीनता की, और जिस तरह ये लोग शासक वर्ग की चक्की के पाटों के बीच मूर्खतापूर्ण ढंग से पिसे जा रहे हैं, निंदा की है. साथ ही अक्सर उन्होंने एक अच्छे भविष्य के प्रति भी आश्वस्त किया है. **मेरा पुराना घर** में वे कहते हैं, "उन्हें एक नया जीवन मिलना चाहिए, एक ऐसा जीवन जो कभी हमने नहीं भोगा. . .जब यह धरती बनी थी तब इस पर रास्ते नहीं थे. वह तो लोग ही थे जिन्होंने चल-चलकर रास्ते बनाये हैं." वे उस दिन की प्रतीक्षा कर रहे थे जब ये अभागे लोग जागेंगे और अपनी सामूहिक शक्ति से वह रास्ता बनायेंगे.

"लेखक का कार्य समाज का अति संवेदनशील चित्रण है. यह कार्य जितना अधिक प्रभावकारी होगा, समाज को उतना ही अधिक प्रभावित करके परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त करेगा."—लू शुन

लू शुन के दूसरी तरह के अभागे पात्र हैं जो शहरों के दलित हैं. ये दयालु, मेहनती और ईमानदार हैं जैसे **कल** का शान परिवार. ये अपने बच्चों से प्यार करते हैं. दूसरों के दुखों को देखकर खुद भी दुखी हो जाते हैं. पर उस क्रूर समाज में जहां एक आदमी दूसरे पर घात लगाये बैठा हो, ये लोग अपने बच्चों को बचा पाने में भी अशक्त हैं. जब उनका बच्चा बीमार पड़ता है तो यह भी नहीं जानते कि उसका इलाज या देखभाल किस तरह की जाये. उनकी अक्ल पर सामंती रूढ़िवाद का पर्दा पड़ा है. शासकों और उनके चाटुकारों द्वारा फैलाये गये पाखंडों में फंसकर ये पैसा-पैसा जोड़कर इकट्ठा की गयी अपनी छोटी-सी रकम को अपने बच्चे को बचाने के लिए गंवा देते हैं. और इतना करने के बाद भी बच्चे को बचा नहीं पाते. बच्चे की मौत के बाद उनके बाल अधिक तेजी से सफेद पड़ने लगते हैं और उन्हें अपना घर असहनीय रूप से निःशब्द और खाली लगने लगता है. वे अपनी इस क्षति का कारण नहीं समझ पाते और न अपनी असफलता के कारणों का विश्लेषण ही कर पाते हैं . . . लू शुन की उनसे सहानुभूति तो है, पर वे इसका कोई हल नहीं दे पाते.

बौद्धिक पात्रों के प्रति हम लू शुन में संवेदना से अधिक आलोचना पाते हैं. पर **औषधि** का युवा बुद्धिजीवी श्या यू एक अपवाद है. यह पात्र 1911 की क्रांति से पहले ही मर जाता है. यद्यपि यह कहानी में सीधे-सीधे नहीं आता. लू शुन ने अप्रत्यक्ष रूप से ही इसके अविस्मरणीय चित्र में रंग भरे हैं. गिरफ्तार होने के बाद भी श्या क्रांतिकारी कार्य करता रहता है. जेल में वह मांचू सरकार का तख्ता पलटने के लिए लोगों को तैयार करता है एक वीर मृत्यु प्राप्त करने के बाद लेखक उसकी कब्र पर लाल और सफेद फूलों का एक गुलदस्ता रखता है, जो संकेत है कि लोग उसके अधूरे काम को भूल नहीं पायेंगे.

शासक वर्ग के लोगों के प्रति लू शुन के मन में बहुत घृणा और निंदा का भाव है. **आ क्यू की सच्ची कहानी** के श्री चाओ नैतिकता के कर्णधार बनते हैं, पर आह क्यू जो चोरी का माल लाता है, उसे सस्ते में खरीदने का कोई भी मौका ये नहीं चूकते. **चाय के प्याले में तूफान** में भी चाओ गांववालों को इन अफवाहों से डराते हैं कि राजा फिर से गद्दी पर आ गया है. इसलिए "यदि तुम बाल रखोगे तो गर्दन साफ हो जायेगी. तो गर्दन को बचाये रखने के लिए अपने बालों को साफ कर दो."

लू शुन की कहानियां संक्षिप्त और सुगठित हैं, क्योंकि उन्होंने लेखन की पारंपरिक चीनी पद्धति का प्रयोग किया. **नये वर्ष की पूजा** में जिस जमींदार घर में शियांग लिय की पत्नी काम करती है, उसके विलासितापूर्ण जीवन का वर्णन करने की लू शुन कोई जरूरत नहीं समझते. सिर्फ एक-आध डांट-फटकार और पढ़ने के कमरे में रखी थोड़ी-सी पुस्तकों से ही उस व्यक्ति के दृष्टिकोण और चरित्र का पता चल जाता है, और यह भी कि इस तरह के समाज में शियांगलिन की पत्नी पर आगे क्या कुछ गुजरने वाली है.

जाहिर है लू शुन ने लेखन की अपनी एक शैली तलाश की और चीन की नये यथार्थवादी साहित्य की नींव रखी. □

● **प्रस्तुति : सुरेश उनियाल**
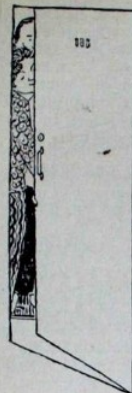
वृद्धों की उपेक्षा और पीड़ा का मसला चीन का ही नहीं, भारत और दुनिया के लगभग सभी देशों का है. वही मसला जब मानवीय संवेदनाओं से न जुड़कर सुविधा और आर्थिक संदर्भों से जुड़ जाता है तो उसका स्वरूप क्या होता है? प्रस्तुत है चीन की जमीन पर मां-बेटे के रिश्ते का एक नया आयाम.

• चओ शि

बड़का चौथी कक्षा में था. वह अपनी डेस्क पर झुका हुआ एक निबंध लिखने की कोशिश कर रहा था और अपना सिर खुजलाता हुआ निबंध के दोनों विषयों पर सोच रहा था. विषय थे—'दादी मां को एक पत्र' या 'मेरी दादी मां'. वह किसी विषय पर भी नहीं लिख पा रहा था, क्योंकि उसकी कोई दादी थी ही नहीं.

अपनी ठोढ़ी को उसने दांतों द्वारा कुतरी हुई पैंसिल पर टिका दिया था. अपने किये हुए काम पर दोबारा नजर डाली. दो कागजों पर दो अलग-अलग दादी मांओं का चित्रण था. हाथ में एक कलछी पकड़े हुए दादी मां पहले निबंध की दादी थी और हाथ में एक टोकरी पकड़े हुए दूसरे निबंध की. वह एक कल्पनाशील लड़का था. वह कल्पना कर रहा था कि यदि यह बंद दरवाजा खुले और एक अदद दादी मां अंदर आ जाये तो . . .

टन, टन, टन! . . .बड़ी घड़ी ने सात बजाये. बड़का उछल पड़ा. सत्यानाश! पिताजी ने उससे स्टोव जलाकर थोड़ा दलिया बनाने को कहा था, लेकिन वह उसके बारे में भूल ही गया. उसने घड़ी की तरफ देखा और गहरी सांस छोड़ी. फिर उसने दरवाजा खोला.

आंखें मलते हुए उसने देखा कि सफेद बालों और सरल स्वभाव की लगने वाली बूढ़ी औरत उसे देखकर मुस्करा रही है. उसके पीछे उसके पिता एक नीला बंडल अपनी बगल में दबाये खड़े थे. उसकी मां छोटू को गोद में लिये पीछे खड़ी थी.

जांग ने बंडल नीचे रखा और उसकी मां को अर्थपूर्ण नजरों से कुछ इशारा किया. वह चकित खड़े बड़का से बोली, "बुद्धू की तरह क्या देख रहा है! यह तुम्हारी दादी मां हैं."

"दादी मां! दादी मां!" छोटू चिल्लाया.

बुद्धू-सा बड़का बुदबुदाया, "दादी मां?"

नयी दादी मां झट से अपने हाथ अपनी जैकेट से पोंछती हुई बंडल खोलने लगीं. बड़का उन्हें बंडल में से कलम निकालते हुए देखता रहा. पिता का प्रोत्साहन पाकर वह पैंट से हाथ पोंछता हुआ उसे लेने के लिए बढ़ा. वह जोर से बोला, "धन्यवाद दादी मां."

आश्चर्य है, निबंध लिखे बिना ही उसे वैसा ही कलम मिल गया था, जैसा कि प्रतियोगिता में जीतने वाले को मिलना था. और यह सच था, सपना नहीं.

मां मिल गयी? क्या मजाक है, लेकिन कभी-कभी ऐसा हो जाता है. कोई अपनी मां को त्याग देता है कि कोई दूसरा अपना लेगा और दूसरा अपना लेता है.

यह एक साधारण कहानी थी. एक मां एक चौराहे पर बैठी रो रही थी. वह किसी बात का जवाब नहीं देती थी, सिर्फ यही पूछती थी कि किसी को घर के लिए नौकरानी तो नहीं चाहिए, लेकिन कोई भी उसे ले जाने को तैयार नहीं हुआ. इसलिए जांग उसे अपने घर ले आया. उसने बड़के और छोटू को यही बताया कि यह उनकी दादी मां हैं, जो अभी-अभी गांव से आयी हैं. यह बात गलत नहीं थी और आसानी से समझायी जा सकती थी.

● चित्रांकन : ही योंग

नयी दादी मां बहुत अच्छी थीं. वह उन्हें नये-नये खेल सिखाती थीं, बड़के की पैंट ठीक करती थीं और उसे कभी नहीं मारती थीं. बड़का उनकी सिली हुई चीजों पर हाथ फेरता और कहता, "हमारी दादी तो कपड़े सीने की मशीन हैं."

उसके बाद से बड़के को कभी समय के लिए परेशान नहीं होना पड़ा. उसे अपना स्कूल का काम करते समय छोटू की ही चिंता रहती थी. दादी मां में और भी कई अच्छाइयां थीं.

एक दिन उनकी मां साइकिल खरीदने के लिए एक कूपन लायी. तब तक दादी मां को आये डेढ़ साल हो गया था. जांग भी उसे सहज ही मां पुकारने लगा था. छोटू नर्सरी पास कर चुका था.

साइकिल घर के लिए एक जरूरी चीज थी. जांग और उसकी पत्नी इस बारे में बातें करने लगे, लेकिन बचत के नाम पर उनके पास सिर्फ तीस येन थे. दोनों ने सलाह करके कूपन पड़ोसी को दे देने का निश्चय किया.

दादी मां खेल छोड़कर मेज की तरफ बढ़ीं. वहां उन्होंने जैकेट उलटकर दस-दस येन के बारह नोट निकाले और बिना कुछ कहे बड़के की मां के हाथ में थमा दिये.

उनकी मां ने अपने पति की तरफ देखा. उसने दादी मां की तरफ देखते हुए कहा, "मां, तुम ..."

"इनसे अपनी साइकलि ले लो. मुझे ये नहीं चाहिए. तुम्हें मालूम है कि यहां आने से पहले मैंने गांव में अपना मकान बेचा था."

काफी देर चुप रहने के बाद जांग ने कहा, "ठीक है, लेकिन मैं तुम्हें यह पैसा बाद में वापस कर दूंगा."

दादी मां को इस बात से बहुत कष्ट हुआ. वे भरे गले से बोलीं, "बेटा, मां से भी इस तरह की बात करते हैं?" वह फिर छोटू के पास जाकर उससे खेलने लगीं.

इस तरह जांग को मां के साथ-साथ एक साइकिल भी मिल गयी.

जांग ने जो कुछ अच्छा किया था, वह बात तो दबी रही, लेकिन साइकिल की बात बहुत जल्दी फैल गयी.

"जांग सचमुच किस्मत वाला है. उसको मां और साइकिल, दोनों चीजें मिल गयीं."

"अगर तुम्हें जलन हो रही है तो तुम भी एक मां ढूंढ़ लो."

"मैंने सुना है कि बूढ़ी औरत अपने पोते को पालती थी, लेकिन जब वह बड़ा हो गया तो उसको बाहर निकाल दिया."

"तुम्हें कैसे मालूम हुआ? मैं और जांग एक ही घर में रहते हैं, लेकिन मैंने कोई ऐसी कहानी नहीं सुनी."

"कोई भी मां अपने बेटे को अपमानित करना नहीं चाहती. कुछ लोग कहते हैं कि जब वह गांव से अपने बेटे के पास रहने आयी, तो उसने उसे पहचानने से इंकार कर दिया. खैर..."

पुरानी कहावत के अनुसार अच्छी बातें घर में ही रह जाती हैं, जबकि अफवाहों के पंख निकल आते हैं. एक दिन में आठ दस मील तक तो पहुंच ही जाती हैं.

▣

एक सप्ताह बाद बिजली वालों की बस्ती से एक दंपती आये. वे बहुत अच्छे कपड़े पहने थे. उनके साथ एक छह साल का बच्चा भी था. वह एक सेब कुतर रहा था.

वे दोनों बस में चढ़ते समय भी झगड़ रहे थे.

"मैंने कहा था कि अभी उसको भेजने की कोई जल्दी नहीं है, लेकिन तुमने नहीं सुना. अब हमारा नाम भी बदनाम हो रहा है और..." पति ने शिकायत की.

"काफी दिन पहले तुमने ही कहा था कि उसको अभी, या बाद में जाना ही पड़ेगा. फर्क क्या पड़ता है? तुम सिर्फ मुझे ही दोषी नहीं ठहरा सकते. किसने सोचा था कि उसके पास एक साइकिल और सिलाई की मशीन खरीदने का पैसा होगा? बूढ़े जांग की तो किस्मत ही खुल गयी." पत्नी ने कहा.

"अब छोड़ो भी." आदमी ने कहा, "लोग कहते हैं कि जब वह जांग को मिली थी, तो भूख से बेहोश थी. उसकी पत्नी ने उसे इंजेक्शन दिया, फिर घर लायी. क्या वह सचमुच मेरी मां थी?"

"और क्या! उन लोगों ने जिक्र नहीं किया था. वह चुड़ैल एक नीला बंडल लिये थी? वह जरूर ही रुपयों से भरा होगा!" औरत ने यकीन के साथ कहा, "मुझे सिर्फ यही चिंता है कि जांग ज्यादा तमाशा न करे."

"उसकी यह हिम्मत! वह 'मेरी' मां है. अगर वह तमाशा करता है तो मैं उसे खत्म कर दूंगा."

वे लोग बस से उतरे. बच्चा अपने चमड़े के जूते पहने गाड़ी में घिसट रहा था. दोनों की समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि इतना पैसा होते हुए भी बूढ़ी भूख से बेहोश कैसे हो गयी.

"कोई भी मां अपने बेटे को अपमानित करना नहीं चाहती... जब वह गांव से अपने बेटे के पास रहने आयी तो उसने उसे पहचानने से इंकार कर दिया..."

"कौन-सा जांग? यहां पर बहुत जांग रहते हैं?" उस आदमी ने पूछा, "उसका दूसरा नाम क्या है? वह कौन-से कारखाने में काम करता है?"

"मुझे यह सब नहीं मालूम," पूछने वाले ने कहा, "मुझे सिर्फ इतना मालूम है कि वह एक बूढ़ी औरत को लेकर आया है."

"और बूढ़ी ने उसे एक साइकिल..." औरत बोली.

"अच्छा, वो! मैं उस जांग को जानता हूं. सीधे जाकर मुड़ जाना, फिर कुछ कदम चलकर ही तीसरा घर उसका है..." उस आदमी के बात खत्म करने से पहले ही औरत अपने पति को खींचती हुई आगे बढ़ गयी.

बूढ़ी औरत ने दरवाजा खोला. दोनों लोग 'मां' कहते हुए आगे बढ़े. फिर औरत ने अपने बच्चे से कहा, "दादी मां को प्रणाम करो."

छह साल के बच्चे ने एक नजर बूढ़ी पर डाली. फिर गुस्से से सेब का टुकड़ा फेंक दिया. सिर घुमाकर वह चुप खड़ा रहा. दादी मां की आंखें भर आयीं. उनके सामने उनके मृत पति की एकमात्र निशानी उनका बेटा खड़ा था. तीन साल की उम्र से मुसीबतें झेलते हुए उन्होंने बेटे को बड़ा किया था.

इसी तरह की मिली-जुली भावनाओं सहित वह रसोई की तरफ बढ़ी और वहां से एक सेब उठा लायी. सेब को अपनी जैकेट से पोंछकर उसने अपने सगे पोते को दिया.

लड़के ने उसे टेढ़ी नजरों से देखा और बोला, "मां कहती है कि तुम्हारे हाथ में कीड़े हैं."

ठक्! सेब जमीन पर गिर पड़ा. बड़के ने दौड़कर सेब उठा लिया और पानी से धोकर उसे पकड़ा दिया. जल्दी ही उन तीनों में अच्छी दोस्ती हो गयी.

"क्या वह यहां बहुत दिन से रह रही है?" छोटे मेहमान ने पूछा.

"कौन?" छोटू ने पूछा.

"वह बूढ़ी चुड़ैल," उसने इशारा करते हुए कहा. जैसे ही वह अपने जैकेट की बांह से अपनी आंखें पोंछने लगीं, उनकी बहू ने एक रंगीन रूमाल उन्हें थमा दिया. दादी मां ने मुंह फेर लिया. छोटू दौड़ता हुआ आया और पूछा, "दादी मां, क्या तुम्हारी आंख में फिर मिट्टी गिर गयी?"

दादी मां की आंखों में इतनी मिट्टी गिर गयी थी कि उसके छोटे-छोटे हाथ दादी मां के आंसू नहीं रोक सके. एक हाथ से छोटू का हाथ पकड़कर और दूसरे से बड़के को सहलाते हुए दादी मां ने चुपचाप सिर हिला दिया.

आदमी जांग से बातें कर रहा था, "मेरी मां छह महीने से तुम्हारे ऊपर बोझ बनकर रही हैं. अब मैं उन्हें ले जाऊंगा."

"मां, आज तुम हमारे साथ जा रही हो. यहां रहने से क्या फायदा है. फिर यह घर उतना आरामदेह भी तो नहीं है. मैं ठीक कह रही हूं न मां?" औरत ने कहा.

जांग और उसकी पत्नी समझ नहीं पाये कि क्या बोलें. उन्होंने अपनी धर्म मां की तरफ देखा. वह चुपचाप बड़के के बाल संवारती रही.

मेहमान उसे 'मां, मां' पुकारते रहे. बहू बहुत प्यार से बोली, "मां, जबसे तुम गयी हो, हमारे घर का सरपरस्त कोई नहीं रहा. हम तीनों अकेले ही सारा दिन पड़े रहते हैं. हम लोगों की भूख खत्म हो गयी है. रोज बहुत-सा खाना बच जाता है और खराब जाता है. तुम्हारे बेटे का वजन कम हो गया है. मां, तुम्हारा पोता तुम्हारी ही बातें करता है. जब कभी भी दरवाजे पर आहट होती है, हम तीनों ही यह सोचकर कि तुम आयी हो, लपककर बाहर भागते हैं. मां, मैं..."

वह ऐसे बोल रही थी, जैसे मोती बिखेर रही हो. दादी मां को अजीब-सा लगा. उसके शब्द उनको शूल से चुभ रहे थे. फिर भी उनको देखकर उनका मन उनकी ओर खिंचा जा रहा था. उनकी आंखों से मोती की टूटी लड़ी जैसे आंसू फिर बह निकले.

"देखो, हमारी मां यहां कितनी दुखी हैं. मांएं ऐसी ही होती हैं." बहू बोली.

इन शब्दों को सुनकर दादी मां के आंसू थम गये. थरथराते हुए उन्होंने मूढ़ा सरकाया और दरवाजे के पास बैठ गयीं. बहू की ओर देखते हुए उनको ऐसा लगा कि वह उनसे कुछ छीन लेगी. अचानक बहू जैसे कुछ याद करते हुए साइकिल की

एक चीनी बोधकथा

पहाड़ खोदने वाला बेवकूफ बूढ़ा

तेहांग और वेंगवु पहाड़ सात सौ मील के घेरे में फैले हुए थे. उनकी ऊंचाई हजारों फीट थी. इन पहाड़ों के उत्तर में नब्बे साल का एक बेवकूफ बूढ़ा रहता था. उसका घर पहाड़ों से सटा हुआ था. उसके निकास को पहाड़ों ने रोक रखा था. उसे बाहर आने-जाने में बड़ी असुविधा होती थी. एक दिन उसने अपने परिवार के साथ बैठकर इस समस्या पर विचार किया. उसने सुझाया, "अगर हम मिलकर पहाड़ों को समतल कर दें, तो युनन से हेनीन तक रास्ता बनाया जा सकता है. तुम लोगों की क्या राय है?"

सबको सुझाव पसंद आया. सिर्फ उसकी पत्नी ने शंका की, "तुम च्यु फु जैसी छोटी पहाड़ी को तो काट नहीं सकते, फिर इतने बड़े पहाड़ों को कैसे हटाओगे?. . .और फिर इतनी मिट्टी और चट्टानें कहां फेंकोगे?"

सबने एक स्वर में कहा, "समुद्र में फेंक देंगे."

फिर वह बेवकूफ बूढ़ा अपने लड़के और पोतों के साथ पहाड़ काटने चल दिया. उन्होंने चट्टानें और मिट्टी खोदी और उन्हें बोहाई नदी के किनारे ले गये. इस काम में पड़ोसी विधवा के एक सात-आठ साल के बच्चे ने भी मदद की. चट्टानों और मिट्टी की ढुलाई के एक ही फेरे में उन्हें सर्दियों से गर्मियों तक का समय लग गया.

बोहाई नदी के किनारे एक बुद्धिमान बूढ़ा रहता था. उसने उन लोगों का मजाक उड़ाया और कहा, "अरे, यह बेवकूफी बंद करो. तुम्हारे जैसा बूढ़ा और कमजोर आदमी पहाड़ का रत्तीभर हिस्सा तो हटा नहीं सकता, फिर इतनी मिट्टी और चट्टानों की बात ही क्या है."

उस बेवकूफ बूढ़े ने गहरी सांस भर कर कहा, "तुम बेहद सुस्त और आलसी हो. तुममें विधवा के इस बच्चे जितनी भी अक्ल नहीं. . .यह ठीक है कि एक दिन मैं मर जाऊंगा, लेकिन अपने पीछे अपने लड़के, लड़कों के लड़के और इस तरह पीढ़ियों का एक लंबा और अंतहीन सिलसिला छोड़ जाऊंगा. . .और पहाड़ तो इतने ही रहेंगे, उनमें तो किसी तरह की बढ़ोतरी होगी नहीं, इसलिए कोई वजह नहीं कि हम इन्हें समतल न कर सकें.

और बुद्धिमान बढ़ा कोई जवाब न दे सका. □

● ली छि

(पांचवीं-चौथी शताब्दी ईसापूर्व)

तरफ बढ़ी, "मां, क्या यह वही साइकिल है, जो तुमने खरीदी थी? आह, देखो न मां! यहां से रंग भी उखड़ गया है."

किसी के जवाब देने से पहले ही वह भीतर के कमरे की तरफ भागी. जो वस्तु वह देखने गयी थी, उसे वहां पर न पाकर वह तुरंत बाहर आयी, "मां, वह सिलाई की मशीन कहां है?" छोटू की मां ने सिर हिलाया और मुस्करायी.

"...अगर मां यहां से जाती है तो साइकिल भी निश्चय ही साथ-साथ जायेगी. हम उससे कभी-कभी मिलने भी आया करेंगे." जांग अब भी उस आदमी से बातें कर रहा था.

"और मशीन भी." औरत जल्दी से बोल उठी.

बड़का दादी मां की तरफ बढ़ा, "दादी मां, क्या तुम सचमुच ही जा रही हो?"

दादी मां ने दृढ़ता से सिर हिलाया. फिर भी उसने कुछ नहीं कहा. अंतिम बार उसने अपनी जैकेट का सिरा उठाया. जब दादी मां ने जाने से साफ इंकार कर दिया तो मेहमानों ने समझा कि जांग चाल खेल रहा है. वह मामले को दोनों फैक्टरियों के मुखिया के पास ले गये.

▣

दोनों मुखिया पहले भी कई बार मिलकर निर्णय कर चुके थे, लेकिन इस प्रकार का मामला पहली ही बार आया था. दोनों ने एक दूसरे को देखकर कुछ इशारा किया, फिर एक दूसरे के कान में कुछ फुसफुसाये. दोनों मुस्कराते हुए अलग हो गये. तभी दादी मां ऑफिस में आयीं. उनका बेटा और बहू एक-एक बांह थामे हुए थे. जांग और उसकी पत्नी पीछे थे. आगे वाला जोड़ा लगातार बोले जा रहा था, जबकि पीछे वाले खामोश थे. बूढ़ी ने उन दोनों मुखियों पर नजर टिका दी, जो कि उसके भाग्य का निर्णय करने वाले थे.

एक-दूसरे का अभिवादन करते हुए एक ने दूसरे से बोलने के लिए कहा. दूसरा अपनी मुस्कराहट दबाकर खांसता हुआ बोला, "आपसी बातचीत के बाद हमने तीन बातों का निर्णय लिया है." वक्ता ने देखा, बूढ़ी की आंखें फैली थीं और बहू का मुंह खुला हुआ था. दोनों ही बेसब्री से निर्णय का इंतजार कर रही थीं.

उसने गंभीर वाणी में कहा, "बूढ़ी की मर्जी है कि वह अभी कहीं नहीं जायेगी. अब से उसका बेटा हर महीने उसे पंद्रह येन उसकी परवरिश के लिए देगा. बाद में कोई गड़बड़ न हो, इसलिए हर महीने हमारी फैक्टरी सीधा ही जांग की फैक्टरी के एकाउंटेंट को पैसा भिजवा देगी?"

बहू और बेटे को जैसे काठ मार गया. उन्हें ऐसा लगा कि वे बीच बाजार रंगे हाथों चोरी करते पकड़े गये हैं और उनके पास सफाई देने को कुछ नहीं है.

खैर, एक बड़े चिंतक का कहना है कि कोई भी निर्णय दोनों वादियों को पूरी तरह संतुष्ट नहीं कर सकता. नतीजा कुछ भी हो, हमें कोई मतलब नहीं. हम उन दोनों निर्णायकों का धन्यवाद करते हैं, जिन्होंने हमारी छोटी-सी कहानी को सुखांत बना दिया. □

● अनुवाद : रानी चैटर्जी
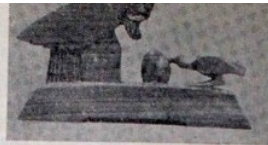
● दोनों बोधकथाओं के चित्र : ल्यू जेंगदे

चिड़िया और सीप

एक सीप ने धूप खाने के लिए अपना मुंह खोला. जल चिड़िया उस पर झपट पड़ी. सीप ने उसकी चोंच मुंह में भर ली और मुंह बंद कर लिया. चिड़िया ने कहा, "अगर आज या कल बारिश नहीं हुई तो लोग देखेंगे कि यहां एक मुर्दा सीप पड़ी है."

सीप ने भी तुर्ती-फुर्ती जवाब दिया, "अगर आज या कल तक मैंने तुझे नहीं छोड़ा तो लोग यह भी देखेंगे कि यहां एक जल चिड़िया मरी पड़ी है."

दोनों में से किसी ने किसी को नहीं छोड़ा. तब तक एक मछेरा आया और उन दोनों को पकड़ लिया. □

● वॉरिंग स्टेट्स का एक उपाख्यान (दूसरी-तीसरी शताब्दी ईसापूर्व)

ड्रेगनप्रेमी लॉर्ड

यी का लॉर्ड छि गाओ ड्रेगनों को बहुत पसंद करता था. उसने पूरे घर में उनके चित्र बना रखे थे और दीवारों पर उन्हें आंक रखा था. एक बार स्वर्ग के ड्रेगन ने अपने प्रति लॉर्ड के प्रेम की चर्चा सुनी. वह नीचे आया और लॉर्ड के दरवाजे पर अपना सिर रखकर और खिड़की में पूंछ लपेटकर बैठ गया. उसे देखकर लॉर्ड की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी. वह बुरी तरह डर गया. तब पता चला कि वह ड्रेगन से मिलती-जुलती तस्वीरों से प्यार करता था, असली ड्रेगन से नहीं. □

● श्येन छि (चौथी शताब्दी ईसापूर्व)

दोबारा चुनाव

● शि जोंगशिंग

शाम का समय था. एक भूरे रंग की सीडन ने आराम से डांगफेंग विश्वविद्यालय के परिसर में प्रवेश किया. विश्वविद्यालय दल समिति का सचिव जिआंग हाओ नगर निगम की मीटिंग से लौटा था. वह इमारत में आया. उसकी बगल में एक मोटा-सा चमड़े का बैग था.

अब विश्वविद्यालय दल सभा की कार्यसूचि में एक ही विषय बचा था, और वह था, चुनाव का फिर से होना. उम्मीदवारों की सूची सब विभागों के प्रतिनिधियों को विचार करने के लिए बांट दी गयी थी. उसने कार्यालय में प्रवेश करते ही दल समिति कार्यालय के निर्देशक को बुलवा भेजा. जब वह आ गया, जिआंग ने बड़ी शांति से पूछा, "क्या सब विभागों ने उम्मीदवारों की सूची के बारे में तर्क करना खत्म कर दिया है?" शेन रिशॉग योग्य और अनुभवी निदेशक था. उसने संक्षिप्त उत्तर दिया, "मैंने उसके बारे में एक छोटी-सी सूचना लिखी है और उसे छपवा दिया है." और सावधानीपूर्वक उस सूचना की एक प्रति जिआंग की मेज पर रख दी. जिआंग को उसकी तत्परता पसंद आयी. उसकी आंखों में संतुष्टि का भाव तैर गया.

वह सूचना पत्र उठाते हुए जिआंग ने अपनी घड़ी की ओर देखा. उस समय ठीक साढ़े आठ बजे थे, यह समाचार प्रसारित होने का समय था और वह उन्हें सुनने से कभी नहीं चूकता था. उसने मेज पर रखा ट्रांजिस्टर खोल दिया और एनाउंसर की मधुर आवाज सुनने लगा, जो कह रही थी, "डॉगफेंग विश्वविद्यालय में भौतिकी विभाग के प्राध्यापक मी गुओरेन ने एनर्जी स्पेक्ट्रम पर एक महत्वपूर्ण परीक्षण किया है, जिसके प्रति देश-विदेश के वैज्ञानिकों में दिलचस्पी पैदा हो गयी है." जिआंग ने बड़े ध्यान से यह खबर सुनी और फिर दल समिति के उपसचिव डिंग शानचेंग को फोन किया.

"हेलो डिंग, क्या तुमने आज की खबरों का प्रसारण सुना? अभी-अभी मी गुओरेन की महत्वपूर्ण खोज की घोषणा हुई है." स्पष्ट हो गया कि डिंग को यह खबर मालूम न थी, क्योंकि वह बड़बड़ाया, "तो क्या हुआ? हम सब जानते हैं कि अमरीकन वैज्ञानिक अनुसंधान में हमसे कहीं आगे हैं. हम उनका मुकाबला नहीं कर सकते." (चीन में 'अमरीकन' को मी गुओरेन कहते हैं).

"अमरीकन!" जिआंग जोर से बोला, "यह मी गुओरेन है जो कि भौतिकी विभाग का एक प्राध्यापक है, और जिसे पिछले माह दक्षिणपंथी होने के कलंक से मुक्ति मिली है. तुम ध्यान रखना कि जितना जल्दी हो सके उसकी पदवी उसको वापस मिल जाये!"

उसने सूचना की प्रति फिर से उठा ली. वह बड़ी ही व्यवस्थित और संक्षिप्त थी. प्रतिनिधियों की सामान्य प्रतिक्रिया अच्छी ही थी. उन्होंने उम्मीदवारों को हार्दिक प्रोत्साहन दिया था. उनका विश्वास था कि उम्मीदवारी के लिए चुने गये लोग योग्य और विश्वसनीय थे. और वे दल के सदस्यों, प्रशासन के अधिकारियों, प्राध्यापकों और विद्यार्थियों की इच्छाओं के अनुकूल हैं.

उसने सोचा कि डिंग के सिवाय वह और किसी को नामांकित नहीं कर सकता. उसको आश्चर्य हुआ कि यह सब बोलनेवाला वह कौन था! जब उसने टैंग झोओलिन का नाम देखा तो उसकी आंखें उत्साह से चमकने लगीं.

▣

जिआंग क्योंकि अभी ही आया था, इसलिए उसे नहीं मालूम था कि पिछले वर्षों में विश्वविद्यालय में क्या बदलाव आ गये थे. पर टैंग के बारे में उसकी कुछ धारणा थी. जिआंग के यहां आने के तीसरे दिन डिंग ने उसे मोनोक्रिस्टल फरनेस के आयात के परीक्षण और स्वीकृति के लिए एक आवेदन पत्र दिया था. इससे जिआंग परेशान-सा हो उठा, क्योंकि न तो वह उनका इस्तेमाल ही जानता था और न ही उसकी कीमत. जैसे ही वह विज्ञान विभाग के साथियों से उसके बारे में पूछने लगा, तभी एक दुबली और नाजुक-सी युवती नीला स्वैटर पहने अंदर आयी. उसने दावा किया कि

जब भी कोई गलत राजनीति हावी होती है प्रगति की रफ्तार रुक जाती है और सही व्यक्ति का अनादर होता है, पर उस गलत राजनीति की पोल खुलते ही सारे कोहरे छंट जाते हैं. इस कहानी के लेखक 'वैन हुई बाओ' के संपादक हैं.

दल समिति ने आवेदन पत्र में एक गलती की है. उनके विभाग को एक एनर्जी स्पैक्ट्रम उपकरण चाहिए था, न कि मोनोक्रिस्टल फरनेस, जिसका उत्पादन उन्होंने परीक्षण के तौर पर पहले ही कर लिया है और आयात करने पर जिसकी कीमत लगभग दस लाख यूआन बैठेगी. जिआंग के हाथ-पैर ठंडे पड़ गये. अगर इस पर उसने इत्तफाक से हस्ताक्षर कर दिये होते तो देश का इतना पैसा बेकार चला जाता. यह युवती टैंग थी, जो कि भौतिकी विभाग के दल की शाखा की सचिव थी.

जिआंग कुछ कागजों को देखकर कार्यालय से बाहर आ गया. जब वह पुराने व्याख्यान कक्ष के पास से गुजरा, जो कि देवदारों के वृक्षों के पीछे था, तो उसे एक युवती की साफ और मीठी आवाज सुनाई दी.

ये कौन हो सकता है? जिआंग परेशान होकर रुक गया. यहां शाम को अधिकतर व्याख्यान नहीं होते थे. देवदारों के वृक्षों के बीच में से अपने लिए रास्ता बनाते हुए वह व्याख्यान-कक्ष के पास पहुंचा और खिड़की में से अंदर झांका. यह कक्ष पूरा भरा हुआ था. श्रोताओं में से काफी लोग विश्वविद्यालय प्रशासन के थे. नीले स्वैटर में मंच पर खड़ी हुई व्याख्याता और कोई नहीं, टैंग थी.

जिआंग को यह आशा थी कि टैंग के व्याख्यान से उसका ध्यान प्रोफेसर शाओ के पास जाने से बट जायेगा. जैसे ही व्याख्यान समाप्त हुआ, वह देवदार के वृक्षों का चक्कर लगाकर तेजी से उस तरफ बढ़ गया.

प्रो. शाओ काम करने वालों के घरों के पूरब में एक-दो मंजिला मकान में रहते थे. जब जिआंग उधर से निकल रहा था तो उसे ऊपर से जोर की आवाज सुनाई दी. वह जल्दी से अंदर गया और ऊपर की ओर भागा. वहां उसने देखा कि प्रो. मेज पर खड़ा है और ऊपर के खाने से कुछ किताबों निकालने की कोशिश कर रहा है. 'सॉलिड स्टेट फिजिक्स' की एक प्रति जो बहुत ही मोटी थी, उसके हाथ से नीचे गिरी जिससे टकराकर थर्मस टूट गया. श्रीमती शाओ यह आवाज सुनकर अंदर आ गयी थीं और कांच के टुकड़ों को झाड़ती हुई उसे डांटती जा रही थीं, "तुम पागल हो जो इस तरह से ऊपर-नीचे चढ़-उतर रहे हो. क्या तुम नहीं जानते कि तुम अब जवान नहीं हो?"

अपनी हंसी दबाते हुए शाओ ने बाल पीछे की ओर संवारे और भोलेपन से उत्तर दिया, "तुम क्या सोचती हो, मैं बूढ़ा हो गया हूं? ये तिहत्तर वर्ष मेरे लिए सैंतीस वर्ष के समान हैं." जब उसने आंख उठाकर देखा कि दल समिति का सचिव मुस्कराता हुआ दरवाजे पर खड़ा है, तो वह एकदम से छोटे बच्चे की तरह शरमा गया.

"यह अक्सर इतना खुश नहीं होता," उसकी शांत और अच्छे संस्कारोंवाली पत्नी ने समझाया, "प्रसारण में इसने सुना कि मी गुओरेन के अनुसंधान ने वैज्ञानिकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है. इसलिए यह खुशी के मारे कुछ नहीं बोल पा रहा."

नीचे झुककर किताब उठाते हुए शाओ हंसते हुए बोला, "मैं इतना प्रसन्न इसलिए हूं कि मी गुओरेन का यह कार्य 'सोलिड स्टेट फिजिक्स' के परीक्षण में एक नया रास्ता दिखाता है."

"इसलिए भी, कि उसके अध्यापक ने उसे अच्छी तरह पढ़ाया है." जिआंग भी हंसते हुए बोला.

वृद्ध प्रोफेसर ने जिआंग से बैठने का आग्रह किया और खुद भी बैठते हुए एक आह भरी, मुझे ये कहते हुए शर्म आती है कि मी गुओरेन का अध्यापक होते हुए भी मैंने कुछ नहीं किया. झोओलिन को ही इसका श्रेय मिलना चाहिए."

"तुम्हारा मतलब टैंग झोओलिन से है?"

जिआंग की ओर मुड़ते हुए शाओ आगे बोला, "हां हां. उसने अपने नाम से बहुत सामान व पुस्तकें लीं जो मी गुओरेन को अपने अनुसंधान के लिए चाहिए थीं."

▣

जिआंग जब शाओ के घर से निकला तो उसके दिमाग में खलबली मची हुई थी. वह धीरे-धीरे कुछ सोचता हुआ आगे बढ़ा. एक ट्राइसिकल अपने पीछे ऑक्सीजन का सिलेंडर लिये हुए उसके पास से गुजरती महिला बराबर घंटी बजा रही थी. उसकी दुबली काया को देखकर जिआंग उसे पुकार बैठा, "टैंग झोओलिन!"

वह रुक गयी. जिआंग उसकी ओर तेजी से बढ़ा और उत्सुकता से पूछा, "तुम अभी तक गयी क्यों नहीं?"

"प्रसारण पर वह समाचार सुनकर," टैंग ने उत्तर दिया, "हमारे कामरेड बड़े उत्साहित हो गये हैं. एक रात और चाहिए, फिर हम लोग सिलिकॉन स्लाइस की चमकाई का पुराना तरीका त्याग देंगे. एक बात है, संगठन विभाग हमारी आलोचना कर रहा है कि हमने मी गुओरेन का काफी इस्तेमाल किया है. लेकिन हम उससे सहमत नहीं हैं. हमें दल शाखा समिति से चार में से एक वोट की स्वीकृति मिली है कि हम कामरेड मी गुओरेन का नाम एनर्जी स्पैक्ट्रम के पढ़ाने और अनुसंधान के निर्देशक के लिए दे सकते हैं. यह हमारी नियमानुसार सूचना है." साथ ही उसने एक कागज अपनी जेब में से निकाला और जिआंग के हाथ में दे दिया.

जब जिआंग घर पहुंचा तो उसकी बेटी टेलीविजन देख रही थी. एक और महिला उसके पास बैठी थी.

"ओह म्योहुआ! तो तुम हो." जिआंग ने उसका स्वागत किया.

"मैं तुम्हारा कबसे इंतजार कर रहा हूं," ली म्योहुआ ने कटुता से कहा. वह डिंग शानचॉंग की पत्नी थी और संगठन विभाग की निर्देशक. यह पति-पत्नी जिआंग के पुराने मित्र थे.

अपनी पीठ सीधी करके, उसने कुछ तेज स्वर में कहा, "एक बात की सूचना मैं तुम्हें देना चाहती हूं," जिआंग सावधान हो गया, "एक व्यक्ति है जो लोगों को डिंग को वोट न देने के लिए भड़का रहा है."

"कौन?" जिआंग ने ली की ओर संशय से देखते हुए पूछा.

"वह कोई दल की साधारण सदस्या नहीं है," ली अपने आक्रोश को दबा नहीं पा रही थी, "वह है टैंग झोओलिन, दल शाखा की सचिव."

शांति से जिआंग ने एक नजर उस पर डाली, फिर बोला, "मैंने सुना है, टैंग ने उम्मीदवार की आलोचना की थी, लेकिन इसमें कोई बुराई नहीं है."

जिआंग की इस बेरुखी से ली उदास हो गयी. वह उठी और जिआंग की ओर देखकर तेजी से बाहर चली गयी.

जिआंग शांतिपूर्वक उसको जाते हुए देखता रहा. कुछ समय बाद वह उठा और खिड़की की ओर बढ़ा. ठंडी हवा उसके जलते हुए चेहरे से टकरायी. उसके अंदर एक तूफान उमड़ रहा था. वह अपनी जेब में हाथ डालकर कमरे में चारों ओर चक्कर काटने लगा. तभी उसके हाथों से एक कागज का टुकड़ा टकराया, जिससे उसे टैंग की रिपोर्ट का ध्यान आया. उसको बाहर निकालकर वह उसकी तरफ साफ और नाजुक लिखाई पर आश्चर्य करने लगा. क्या वह उसी कामरेड की नहीं, जिसकी वह तलाश कर रहा है? एक न भूलने वाला दृश्य उसके मानसपटल पर आ गया. . .

▣

सांस्कृतिक क्रांति के दौरान एक दिन उसे विश्वविद्यालय में आलोचना के लिए ले जाया गया. जब तक मीटिंग समाप्त हुई, चारों ओर अंधकार छा गया था. अलग-अलग पक्षों के नेता, जो मीटिंग की अध्यक्षता कर रहे थे, जिआंग को पीटने लगे. उसे तब तक घूसों और ठोकरों से मारते रहे जब तक वह बेहोश न हो गया. उन आदमी ने, जिसे जिआंग को घर पहुंचाना था, विश्वविद्यालय से सिर्फ दो सौ मीटर दूर जीप में से धक्का दे दिया. जिआंग जब होश में आया तो उसने अपने को घर में बिस्तर पर पाया. चारों ओर शांति थी. लैंप की धीमी रोशनी से उसे अपने तकिये के पास नोट बुक में से फटा हुआ कागज का टुकड़ा मिला, जिस पर लिखा था—"अपनी गलतियों को सुधारो, सच्चाई को अपनाओ, तुम तब भी हमारे अच्छे नेता रहोगे." निश्चय ही यह उसी ने यहां छोड़ा होगा, जो उसे घर लाया होगा. यों तो उसका सारा शरीर जख्मी था, पर उस छोटे से नोट से वह उत्साहित हो गया.

अब यह पहचाना हुआ-सा लेख अचानक उसकी आंखों के सामने आ गया. वह अपनी मेज की ओर जल्दी से बढ़ा, दराज खोली और एक नीले कवर की नोट बुक निकाली. उसमें से उसने वह कागज का टुकड़ा निकाला, जिसको तबसे संभालकर रखा हुआ था. सावधानी से उस लेख को टैंग की रिपोर्ट के लेख से मिलाकर, मेज पर हाथ मारकर वह चिल्लाया, "वह निश्चय ही टैंग झेओलिन थी."

▣

अगले दिन दोपहर को पांच बजे, चुनाव का निर्णय डाक द्वारा कक्ष में भेज दिया गया था. लाल रंग के बड़े से कागज पर, जिआंग हाओ का नाम सूची में सबसे ऊपर था और उसके 315 मत थे. सर्वसम्मत से सिर्फ तीन कम. आखिरी नाम डिंग शानचिंग का था. 159 मतों के साथ. कुल मतों का बिलकुल आधा. कागज की सीधी तरफ उन कामरेड के नाम थे, जिनका नाम सूची में नहीं था और जिन्हें मत मिले थे. पहला नाम टैंग झोओलिन का था और उसके मत भी डिंग के बराबर थे.

अभी जिआंग को मीटिंग से कार्यालय पहुंचे कुछ समय भी न बीता था कि दरवाजा तेजी से खुला और भारी कदमों से डिंग अंदर आया. उसका चेहरा उतरा हुआ था और उसका मांसल मुख कांप रहा था. वह सोफे पर शांति से पाइप पीता हुआ बैठ गया. जिआंग ने उसे पानी का गिलास दिया और धीरे से कहा, "तुमको चुनाव के निर्णय को मानना होगा."

डिंग ने मुंह से पाइप निकाला और रुंधे हुए कंठ से बोला, "उन्होंने मुझे बेवकूफ बनाया है."

जिआंग इसके विपरीत अनुभव कर रहा था. उसने डिंग की ओर इशारा किया, "तुमको विचार करना चाहिए कि किस कारण से बहुत सारे कामरेडों ने तुम्हें मत नहीं दिया."

जिआंग के चुप होने के कुछ देर तक डिंग पाइप मुंह में लिये रहा, फिर बोला, "कुछ लोग वास्तव में चौगुटे से प्रभावित हैं और टैंग झेओलिन उनमें से एक है. यह असाधारण चुनाव उसी की करतूतों का नतीजा है."

"तुम उस पर इतना विश्वास करते हो, पर क्या उसके चरित्र के बारे में जानते हो?"

डिंग की ओर एक नजर फेंकते हुए जिआंग उसके बोलते रहने का इंतजार करने लगा. उसी क्षण प्रो. शाओ ने प्रवेश किया. वह जिआंग के साथ किसी भोज में जाने के लिए आया था.

डिंग ने अपना पाइप भरा, मानो एक नये आक्रमण के लिए तैयार हो रहा हो. उसे जलाया और दो लंबे कश लिये. फिर नाक सिकोड़ते हुए बोला, "मुसीबत के समय वह अपने मित्र के भी विरुद्ध हो गयी थी."

"क्या मतलब?" जिआंग ने उसकी ओर देखा.

"सांस्कृतिक क्रांति के दौरान उसने अपने मित्र से सारे संबंध तोड़ लिये थे, क्योंकि उसने झेंग चुकियो के चरित्र की आलोचना करते हुए एक पोस्टर बनाया था और उसे एक विरोधी क्रांतिकारी का नाम दे दिया गया था."

उसके इस काईयांपन पर अचंभित और क्रोधित होकर

वृद्ध प्रोफेसर ने गंभीरता से डिंग की ओर देखा और निर्णायक स्वर में कहा, "उपसचिव डिंग, तुमने उसकी झूठी निंदा की है."

डिंग इस प्रहार से एकदम भौंचक्का रह गया. उसने जबरदस्ती एक खोखली हंसी हंसकर प्रत्युत्तर दिया, "प्रोफेसर शाओ, मैं जानता हूं कि तुम टैंग झेओलिन के प्रशंसक हो, पर तुम्हें उसकी गलतियां नहीं छिपानी चाहिए."

"क्या? सच तो यह है कि मैंने उसकी अच्छाइयों के बारे में बहुत कम कहा है."

▣

फिर प्रोफेसर डिंग के पास वाली कुर्सी पर बैठ गया. जिआंग की ओर मुड़ कर बोला, "मैं बताता हूं. झेओलिन का मंगेतर शेन रिशेंग था. उसके संबंध विच्छेद का कारण डिंग की बतायी कहानी से अलग है."

क्या कारण था कि पोस्टर बनाने के अगले दिन टैंग ने शेन से संबंध विच्छेद किया? काफी लोग अब भी अंधेरे में थे. पहले शाओ को भी इसका कारण मालूम न था, क्योंकि शेन ने अपने पक्ष में अफवाहें फैला दी थीं, जबकि टैंग ने इस बारे में कुछ भी बताने से इंकार कर दिया था. लेकिन वह 1976 की एक न भुलायी जाने वाली खुशनुमा शाम थी. 'चांडाल चौकड़ी' का पतन हो चुका था. एक समारोह के प्रदर्शन से वापस लौटते समय टैंग शाओ के साथ घर आ रही थी. वहां शाओ की लगातार प्रार्थना को न ठुकरा सकने के कारण टैंग ने अंत में उसे सब कुछ सच-सच बता दिया.

"आपने देखा प्रो. शाओ," टैंग ने शुरू किया, "उसने मेरे साथ पोस्टर बनाया था, पर अगले दिन जब झेंग चुंकियो की आलोचना करने वालों से जवाब तलबी हुई तो वह मेरे पास आया और धीरे से मुझसे बोला, 'जल्दी से एक अपनी आलोचना लिख दो. जिन लोगों को बहाकाया गया है, उन्हें सजा नहीं मिलेगी. जब यह सब खत्म हो जायेगा तो मैं विश्वास दिला सकता हूं कि तुम्हें कुछ नहीं होगा.' मैंने उससे पूछा, 'तुम इतनी निश्चिंतता से कैसे कह सकते हो?' वह रहस्यपूर्ण होकर बोला, 'मैंने सब इंतजाम कर लिया है और पहले से ही झेंग को एक घोषणापत्र भेज दिया है.' पहले इस बात का मतलब मेरी समझ नहीं आया. बाद में उसने मुझे बताया कि उसने एक पत्र झेंग चुंकियो को वर्ग संघर्ष में एक नयी प्रवृत्ति के बारे में चेतावनी देते हुए भेजा—कि तुम लोग झेंग के विरुद्ध एक बड़ा कदम उठाने का आयोजन कर रहे हो. कोई आश्चर्य की बात नहीं, शेन ने मुझे वास्तविक पोस्टर नहीं बनाने दिया और न उसको नकल करने में सहायता की. उसने चतुराई से दोनों की मुसीबत दूर करने के लिए एक योजना बनायी. प्रो. शाओ, आप ही सोचिए, मैं अपना जीवन एक ऐसे आदमी के साथ कैसे बिता सकती थी? यह सोचकर ही मुझे उल्टी आने लगती है!"

इसलिए शेन और टैंग एक-दूसरे से अलग होकर अपने-अपने रास्ते चले गये. कार्यालय के सामने खड़ी गाड़ी के हॉर्न ने उन्हें याद दिलाया कि वह इंतजार कर रही है. अपनी घड़ी की ओर देखता हुआ शाओ, जिआंग से बोला, "जाने का समय हो रहा है."

"मैं तैयार हूं," जिआंग ने कहा, "भौतिकी विभाग की ओर से होते हुए चलेंगे."

गाड़ी भौतिकी विभाग की अनुसंधानशाला के सामने रुकी. जिआंग और शाओ, दोनों गाड़ी से उतरे. तभी टैंग की दुबली-सी काया नीले स्वैटर में द्वार पर नजर आयी. वह उनका अभिवादन करने के लिए उत्साहपूर्वक तेजी से उनकी ओर बढ़ी, "प्रोफेसर शाओ, कामरेड जिआंग, हमने सिलिकॉन स्लाइस को चमकाने की कला को सुधारने में सफलता प्राप्त कर ली है."

शाओ प्रसन्नतापूर्वक हंसा और आश्चर्य से बुदबुदाया, "मैंने अभी उसी दिन तो सलाह दी और तुमने इतने जल्दी कर भी लिया."

टैंग जल्दी से हाथ-मुंह धोकर, कपड़े बदलकर आयी और कार में बैठ गयी. ड्राइवर के पास बैठी हुई वह आगे की ओर देखकर जिआंग की कही हुई बात पर विचार करने लगी.

जिआंग ने धीरे-से अपनी ऊपर की जेब से कागज का टुकड़ा निकाला और आगे की सीट पर बैठी हुई टैंग को देने से पहले काफी देर उसको देखता रहा, "क्या यह तुमने कभी देखा है, कामरेड टैंग?" उसने पूछा.

अपनी लिखाई पर नजर पड़ते ही, उसके दिमाग में वह भयंकर दृश्य आ गया, जब जिआंग को बुरी तरह पीटा गया था. उसे लगा जैसे उसका गुस्सा बढ़ रहा है. कोशिश करके उसने अपनी भावनाओं पर अंकुश लगा लिया, और पीछे मुड़कर बड़ी शांति से बोली, "कामरेड जिआंग, तुमने अभी तक रखा हुआ है. तुम निश्चय ही एक अच्छे संग्रहकर्ता हो."

शाओ अब चुप न रह सका, "तुम किस बारे में बात कर रहे हो?" उसने पूछा.

▣

कोहनी से हल्का-सा दबाते हुए जिआंग ने पूरी कहानी सुना दी. तब वृद्ध प्रोफेसर ने टैंग से कहा, "झेओलिन, तुमने मुझसे इस बारे में कभी जिक्र नहीं किया?"

"यह कुछ बताने वाली बात नहीं थी." वह मुस्कराने लगी.

"जब यह हुआ, उस समय मैं ट्राइसिकल का सिलेंडर लेने जा रही थी, क्योंकि बाकी लोग अनुसंधानशाला का काम छोड़कर राजनीतिक झगड़ों में भाग लेने चले गये थे. विश्वविद्यालय से कुछ ही दूर मैंने देखा कि कोई सड़क के किनारे पड़ा हुआ है. वह सचिव जिआंग थे. मैं उन्हें घर ले आयी," आगे बोलने से पहले वह कुछ परेशान-सी होकर रुकी, "कमाल है कामरेड जिआंग, तुमने अभी तक रखा हुआ है!"

जिआंग के दिल में एक अजीब-सी हलचल मच गयी. जितना महत्त्वपूर्ण वह इसको नहीं समझ रही थी, उससे ज्यादा बहुमूल्य वह उसको समझ रहा था. उसके विचार फिर चुनाव की ओर घूम गये. आखिर कौन चुना जायेगा? ☐

● अनुवाद : रेखा गुरहा

चांग थ्येन-ई की यह कहानी किसी भी उस देश या समाज की कहानी हो सकती है, जहां पूंजीवादी और सामंती व्यवस्था ने समाज को इस कदर वर्गों मे विभक्त कर दिया हो कि हर वर्ग अपने से नीचे के वर्ग का शोषण करने के मौके की तलाश में रहता हो. शोषण की यह शृंखला ही वर्गों के बीच पैदा हुई उस खाई को और चौड़ा करती है. ऐसे में किसी भी संवेदनशील लेखक का काम होता है, स्थिति की इस विडंबना का सही-सही चित्रण करना. श्री थ्येन-ई का रचनाकाल मुख्यतः १९३१ से १९३७ तक रहा है, जिसमें उनके चार उपन्यास और छह कहानी संग्रह प्रकाशित हुए. इस दौरान उन्होंने अध्यापन और पत्रकारिता भी की. उनकी कहानियां अधिकतर व्यंग्यप्रधान होती हैं और इसका केंद्र वे मध्यवर्ग और स्वनामधन्य अफसरों को बनाते हैं.

चित्रांकन : हरिप्रकाश त्यागी

● च्चांग थ्येन-ई

करीब दो सौ गज की दूरी पर रिक्शा धीरे-धीरे चला जा रहा था. उसे चला रहा था एक चालीस-पचास साल का व्यक्ति, जो अपने कंधों को कसे, शरीर का पूरा जोर निचोड़ते हुए पैडल मार रहा था. पसीना उसके माथे से निकलकर नाक पर से बहता हुआ नाक की नोंक पर आकर टपकने ही वाला था.

"कहां जायेंगे साहब?"

कोई जवाब नहीं. साहब ने उसे घूरकर देखा और उनके जबड़े कसकर चिपक गये.

सब्जीवाले सड़क पर एक दूसरे को धकियाते हुए पुकार-पुकारकर अपनी सब्जियों के नाम बता रहे थे. पटरियां उनके माल से पूरी तरह भरी हुई थीं और लगता था कि अगर और जगह होती तो शायद वह भी कम पड़ती. शायद इसीलिए उन्होंने अपना सामान सड़क पर काफी आगे तक फैला दिया था.

रिक्शेवाला रिक्शे को कभी इधर करता, कभी उधर करता आगे बढ़ाये जा रहा था. जब भी रिक्शे का कोई पहिया किसी गड्ढे में गिरता तो रिक्शा तिरछा हो जाता और रिक्शेवाले के पंजों की पकड़ मजबूत हो जाती. ऐसे में साहब थोड़ा पीछे होकर अपने हाथों को बांधकर आराम से बैठ जाते, पर रिक्शा था कि उन्हें एक ओर धकेलता और कभी दूसरी ओर, जिस कारण उन्हें फिर से हाथ खोलकर अपने को ठीक से बिठाये रखने के लिए कोशिश करनी पड़ती. वे जानते थे कि ये झटके सिर्फ इसलिए लग रहे हैं कि रिक्शा धीमा चल रहा है.

"हे, क्या मामला है, तुम थक गये या कोई और बात है?"

यह सवाल ठीक उस समय आया था, जब एक पहिए के नीचे एक रोड़ा आ गया था और रिक्शेवाले का पूरा ध्यान उसे पार करने में था. इस कोशिश में वह इस कदर दोहरा हो गया था कि साहब को उसकी गर्दन के आगे उसका सिर दिखायी नहीं दे रहा था. अचानक झटके से रिक्शा आगे बढ़ गया और साहब को पीछे की ओर धक्का लगा. उन्हें सिहरन-सी आ गयी. वे गुस्से में कुछ गरजे, पर उनके शब्द उनके भिंचे हुए दांतों में ही कहीं अटक गये.

इधर रिक्शेवाला एक लड़के के साथ बहस में उलझ गया था. लड़के के गले में सब्जी की टोकरी लटकी थी. उनके चेहरे एक दूसरे से छह इंच से अधिक दूरी पर न होंगे और मुंह से धुआंधार गालियां निकल रही थीं, जैसे सुबह ही रटकर आये हों.

साहब को लगा कि इन गंदे लोगों की इस हरकत को रोकने का उन्हें पूरा हक है. जोर से पैर बजाते हुए वे बोले, "झगड़ा बंद करो! चलो जल्दी!"

रिक्शेवाले ने घूमकर उनकी ओर देखा. उसका माथा पसीने से छलछला रहा था और उसकी दो इंच लंबी दाढ़ी पसीने से तर थी.

"इसने मेरे रिक्शे के पायदान पर चढ़कर उसे तोड़ दिया है साहब. यह कोई मजाक की बात नहीं है. साला, हरामी का पिल्ला, बदतमीज, मैंने कुछ कह दिया तो अब खुंदक खा रहा है."

"तुम्हारी यह हिम्मत!" साहब आगे झुके. गुस्सा तो बस टपकने ही वाला था.

"पर साहब, मैं आपके लिए थोड़े ही कह रहा था."

"हूं. ठीक है, अभी तुम क्या कह रहे थे? क्या हो गया पायदान को, बताओ?"

रिक्शेवाले ने एक हाथ हैंडल पर से हटाया. अपने अंगोछे से अपने माथे पर आया पसीना पोंछा. ब्रेकों की पकड़ हल्की होते ही रिक्शा पीछे की ओर ढुलकने लगा तो उसने उन्हें फिर से कस लिया. अब वह रोड़ों को बचाता हुआ फिर से आगे सरकने लगा था. उसके पांवों पर नीली सूती जुराबें चढ़ी थीं और जगह-जगह उभरे हिस्से बता रहे थे कि वहां कई जगह जख्म हैं.

"अब जरा देखो," वह हल्की आवाज में बुदबुदाया, ताकि उसकी बात साहब के कानों तक न पहुंचे, "पायदान टूट गया है. इसकी मरम्मत में पैसे लगेंगे ही न. और तुम ही मुझे क्या दे दोगे? तुम्हारा इतना वजन जब इतनी दूर तक ढोऊंगा, तब जाकर चालीस तांबे के सिक्के तुम दोगे. क्या बचेगा मुझे?" फिर जरा ऊंची आवाज में बोला, "अब और कितनी दूर चलना है साहेब?"

उसने नाक सिनकी और सड़क पर उछाल दी. उसके हाथों की चमड़ी जगह-जगह से फट गयी थी और नमकीन पसीना जब फटे हुए हिस्सों पर लगता तो उसे जलन-सी महसूस होती.

साहब सोच रहे थे—ग्यारह से ज्यादा समय हो गया है. शायद बारह तो अभी नहीं बजे, पर दोपहर का खाना खाने के बाद भी उन्हें अपने काम पर लौटना है. अब चालीस तांबे के सिक्के यह रिक्शेवाला किस बात के ले रहा है!

साहब ने मुंह से कुछ नहीं कहा. अगर रिक्शेवाला बकवास करता ही रहा तो डांटकर चुप करा देंगे और कहेंगे, "अपनी जबान बंद रखो और जरा तेज चलो."

निम्न वर्ग के लोगों से वे इसी तरह का व्यवहार करते थे. एक तो वे इस रिक्शे पर एक घंटा बैठने के लिए चालीस तांबे के सिक्के दे रहे हैं और उस पर यह बदमाश भुनभुना रहा है कि मैं कम दे रहा हूं. उन्होंने अपने आपको पीछे सरकाकर हाथ फिर बांध लिये. फिर वे भी अपने को आरामदेह स्थिति में नहीं पा रहे थे. वे आमतौर पर रिक्शा नहीं लेते. अगर चेन अभी जाने वाला न होता तो वे उससे पांच डालर वसूलने के लिए आने में इतनी जल्दबाजी न करते और ऐसे शोषकों को चालीस तांबे के सिक्के कभी न देते. मुंह उन्होंने बंद ही रखा, जैसे अगर खुल गया, तो कोई उसमें कुछ डाल ही न दे.

"अभी कितनी दूर और चलना है साहेब?" रिक्शेवाले ने उच्छ्वास छोड़ते हुए कहा, पर उसे कोई जवाब नहीं मिला. दरअसल साहब को चेन के घर का दरवाजा सामने दिख रहा था. वे यह सोचकर चुप रहे कि यदि वे दूरी के अधिक होने का आभास देंगे तो रिक्शेवाला पस्त पड़ जायेगा और अगला पैडल नहीं मार पायेगा. इस तरह वे उसे कुछ भी नहीं देंगे, वरना चालीस तांबे के सिक्कों का नुकसान हो जायेगा. अचानक पीछे कार से कोई चिल्लाया. उसे रास्ता देने के लिए रिक्शा सड़क के किनारे उतारना पड़ा, जहां पर काफी गहरा कीचड़ जमा था. कार अपना हार्न बजाती बगल से गुजर गयी.

"माफ करना साहेब, माफ करना!" रिक्शेवाले ने माफी मांगी. बायां पहिया कीचड़ में गहरे धंस गया था और साहब एक ओर झुक गये थे. रिक्शे को वापस खींचने के लिए उसने अपने शरीर की पूरी ताकत हाथों में समेटी और पहिए को उल्टा घुमाने लगा. उसने खयाल ही न किया कि इस कोशिश में उसका दायां पांव काफी ऊपर उठ गया है और जब तक वह पैडल पर वापस आता, तब तक वह खुद फिसल कर जमीन पर आ गया था.

सिर्फ इतना ही होता तो गनीमत थी. रिक्शे को भी एक झटका लगा था और वह उलट गया था. साहब रिक्शे पर से उछलकर रिक्शेवाले के ऊपर गिरे और वहां से फिसलकर कीचड़ में.

▣

रास्ते की सारी भीड़ वहां घिर आयी. लोग एक दूसरे पर चढ़कर आगे झांकने की कोशिश करते और देख लेने के बाद मुंह ही मुंह कुछ बुदबुदाने लगते.

साहब किसी तरह लड़खड़ाते हुए उठ खड़े हुए और रिक्शेवाले को घूरने लगे, जो अभी कीचड़ में ही था. फिर उन्होंने देखा कि उनके हाथों और चारखाने वाले लबादे पर कीचड़ के दाग लग गये हैं.

उनका विचार था कि यह मुसीबत रिक्शेवाले ने खुद ही बुलायी है. उन्हें शिकायत थी कि जो तांबे के चालीस सिक्के उन्हें उसे देने थे, उसका यह सिला उसने दिया! अब वे उस बदमाश को अच्छा पाठ पढ़ायेंगे. वे अपनी हथेलियों से अपना घुटना मलने लगे. लोगों का खयाल था कि अब वे अपने पांयचे ऊपर चढ़ाकर सबको अपनी चोटें दिखायेंगे, पर ऐसा नहीं हुआ. उन्होंने एक गहरी नजर भीड़ पर डाली और गर्दन को ऐसा झटका दिया, जैसे कह रहे हों कि किस मुसीबत में फंस गये. फिर अपने लबादे पर लगे कीचड़ को छुड़ाने की कोशिश करने लगे. साथ ही साथ बुदबुदा रहे थे, "भाड़ में जाये..."

भीड़ लगातार बढ़ती जा रही थी और हर व्यक्ति इसी कोशिश में था कि किसी तरह बीच में पहुंच जाये, लेकिन एक ही व्यक्ति इस काम में सफल हो सका. वह पाश्चात्य ढंग का सूट पहने था. वह लोगों को इधर-उधर ठेलता हुआ सीधा बीच में आ गया था, जैसे सिर्फ उसी को ऐसा करने का अधिकार हो.

पहले तो उसने साहब के कपड़ों से कीचड़ छुड़ाने की कोशिश की और फिर रिक्शेवाले से निपटने की तैयारी करने लगा, जो बेचारा इस कांड का कारण था.

रिक्शावाला अभी उठने की कोशिश कर ही रहा था और सफल नहीं हो पा रहा था. घिसट जाने से उसके घुटने के ऊपर का काफी भाग बुरी तरह छिल गया था और पांवों की उंगलियां दर्द के मारे सुन्न-सी हो गयी थीं.

एक बूढ़े आदमी ने शुरुआत की, "सब इसी का कसूर है, इसे पता ही नहीं था कि जा कहां रहा है."

रिक्शेवाला अपना सारा वजन हाथों पर डालता हुआ थोड़ा ऊपर उठा. उसके हाथ कांप रहे थे. उसने गर्दन उठाकर साहब की आंखों में झांका. वे उसके सिर पर ही खड़े थे. उनके दोनों हाथ कमर पर थे और होंठों के दोनों किनारे तने हुए थे, "अब क्या करोगे, बताओ?"

एक मंझोले कद का स्कूली लड़का बीच में पड़ता हुआ बोला, "इसे पुलिस चौकी ले जाओ." फिर जोर से चीखा, "इसे पुलिस चौकी ले जाओ." इसके बाद मुंह बनाता हुआ एक ओर भाग गया.

रिक्शेवाला अब खड़ा तो हो गया था, पर अपनी टांगें सीधी नहीं कर पा रहा था. उसके चेहरे पर दर्द जैसे जम गया था. उसका पाजामा घुटने पर से फट गया था और उसके भीतर से छिला हुआ मांस साफ नजर आ रहा था, पर उसका ध्यान अपनी चोट पर नहीं था. वह तो रिक्शे को जगह-जगह से देख रहा था कि कहीं कुछ टूट तो नहीं गया है, लेकिन कराह उसके मुंह से सांसों के साथ घुली-मिली-सी जरूर निकल रही थी.

पश्चिमी ढंग का सूट पहने व्यक्ति ने पहले सबकी ओर देखा और भाषण देने की मुद्रा में आ गया. वह कानून झाड़ने लगा था, "कसूर और किसी का नहीं है. जब कोई रिक्शे पर चढ़ता है तो उसकी सुरक्षा की जिम्मेदारी रिक्शेवाले की ही होती है..."

"बिल्कुल सही," साहब ने उसकी बात की ताकीद की. उन्होंने गला खंखारकर बात आगे बढ़ायी, "यह साला बदमाश, बहुत देर से तो बड़बड़ाये ही जा रहा था. तुम अपने आपको आखिर समझते क्या हो? अपने रिक्शे पर बिठाते समय तो तुम भीगी बिल्ली बने हुए थे. और अब ऐसा! ठीक है!"

रिक्शेवाला अब बिजली के एक खंभे के सहारे खड़ा रिक्शे के पहियों के स्पोकों को देख रहा था. उसने गर्दन को तिरछा करके साहब की ओर देखा और आगे किसी घटना का इंतजार करने लगा.

सभी लोग साहब को कुछ न कुछ सलाह दे रहे थे. जो कुछ हुआ, वह रिक्शेवाले की लापरवाही के कारण ही हुआ है, पर उसे इतनी चोटें भी तो आयी हैं. चोटों को ही उसके अपराध की सजा माना जा सकता है. इसलिए मामले को यहीं खत्म कर देना चाहिए. पुलिस चौकी जाना तो अब कोई अच्छी बात न होगी.

अब सब चुप होकर साहब का मुंह ताकने लगे थे. उन्होंने अपनी ठोड़ी को खुजाते हुए अपने होंठ बिचकाये. फिर अचानक मुंह खोला, "ठीक है, ठीक है. मैं इसे माफ करता हूं." और घूमकर भीड़ में से रास्ता बनाते हुए बाहर निकल गये.

भीड़ में सकता-सा छा गया. बिना किसी तमाशे के यह सब खत्म हो जाना कुछ लोगों को पसंद नहीं आया. कितना भला आदमी है यह. इस बात को लेकर पाश्चात्य किस्म के सूट पहने व्यक्ति ने एक भाषण और झाड़ दिया.

रिक्शेवाले ने अपने होंठों पर जीभ फेरी और नाक सिनकी. उसकी आंखों में पानी आ गया था, "मुझे तो अभी वापस शहर जाना है. मुझे यहां तक लाने वाले तेरा सत्यानाश हो! सब सवारियां होती ही ऐसी हैं! ..."

"अब छोड़ो भी," चालीस के करीब की उम्र वाले एक अधेड़ ने उसे झिड़का, "भगवान का शुक्र मनाओ कि ऐसे दयालु आदमी से पाला पड़ा है. अगर कोई और होता तो तुम्हें लेने के देने पड़ जाते."

"वाकई बहुत दयालु आदमी था." एक और राहगीर ने उसकी बात का समर्थन किया.

सभी के देखते-देखते साहब सामने एक घर के मुख्य द्वार के भीतर चले गये.

घर के दरवाजे पर दस्तक देने से पहले उन्होंने बाहर के दृश्य पर एक नजर डाली. फिर अपना हाथ जेब के ऊपर रखा. तांबे के सिक्के वहीं थे. हल्की-सी मुस्कान उनके चेहरे पर उभरी. काश, जब भी वे रिक्शा लेते, हर बार ऐसा ही घटता! □

● रूपांतर : सुरेश उनियाल

चीनी बोधकथा
घंटी की चोरी

किसी के दरवाजे पर टंगी घंटी देखकर एक व्यक्ति ने उसे चुराना चाहा. वह जानता था कि जैसे ही वह उस घंटी को छुएगा, वह बज उठेगी. तब उसके मन में एक बात आयी. उसने सोचा, 'यदि मैं अपने कानों को बंद कर दूं तो घंटी की आवाज नहीं सुनायी देगी और मैं घंटी को आसानी से चुरा लूंगा,' परंतु उसके दिमाग में यह बात नहीं उठ रही थी कि बाकी अन्य लोगों के तो कान खुले हैं. वह अपने कानों को बंद कर, घंटी चुराने के लिए गया और ज्यों ही घंटी पर हाथ लगाया, घंटी बज गयी और वह सहज ही पकड़ लिया गया. इस प्रकार वह घंटी चुराते समय रंगे हाथ पकड़ा गया. □

● मूल चीनी से अनुवाद : सत्य प्रकाश

व्यंग्य रचना

किताब न लिखने के कुछ कारण

◘ चिन शनथान

यदि किसी आदमी ने शादी नहीं की है तो तीस वर्ष की उम्र के बाद उसे शादी नहीं करनी चाहिए और यदि वह नौकरी में नहीं है, तो उसे सरकारी नौकरी नहीं करनी चाहिए. पचासा में अपने परिवार में बृद्धि और साठा में किसी को विदेश यात्रा नहीं करनी चाहिए क्योंकि हर चीज का एक समय होता है. बेमौसम और बेवक्त काम करने पर लाभ से ज्यादा हानि होती है. पौ फटते ही एक आदमी पूर्णतया तरोताजा होकर उठता है, अपना चेहरा धोता-पोंछता है और अपने सिर पर अंगोछा बांधता है, सुबह कलेवा करता है, मिसा की टहनियों को चबाता है (अपने दांत चमकाने के लिए) और बहुत-सी चीजों में शामिल होता है. इससे पूर्व कि वह जाने कितना समय गुजर गया, वह पूछता है कि क्या यह दोपहर है और उसे यह बताया जाता है कि दोपहर बीते हुए काफी अरसा हो गया. जिस तरह सुबह चली जाती है, उसी तरह दोपहर और दिन भी चले जाते हैं. इस तरह आदमी के जीवन के 36500 दिन गुजर जाते हैं. यदि कोई आदमी ऐसी बातों से परेशान हो उठता है, तो वह जीवन का आनंद कैसे उठा सकता है! मुझे प्रायः ऐसे कथन पर अचरज होता है कि अमुक व्यक्ति की उम्र इतनी अधिक है. इसे कुछ लोग वर्षों का संग्रह मानते हैं, लेकिन यह वर्षों का संग्रह कहां हुआ? क्या कोई इन्हें बांधकर रख सकता है? या गिन सकता है? जाहिर है अतीत का 'स्व' बहुत पहले ही नष्ट हो गया है. इसके साथ ही, जब मैंने यह वाक्य पूरा किया है, तो इससे पहले वाला वाक्य पहले ही नष्ट हो चुका है. यही त्रासदी है.

इस बात से अब हम सभी सहमत हैं कि अपने जीवन में हम सबसे अधिक आनंद दोस्ती में पाते हैं और दोस्ती में सबसे आनंददायक चीज फुरसत में बातचीत करना है. लेकिन कितनी दुर्लभ हैं ऐसी चीजें! किसी दिन ठंड होती है, किसी दिन तूफान आ जाता है और किसी दिन बारिश हो रही होती है, कभी तुम बिस्तर में बीमार पड़े रहते हो और किसी दिन, जब तुम मित्र से मिलने जाते हो, तो वह घर पर नहीं होता. तुम्हें लगता है जैसे तुम एक कैदी हो. मेरे पास कुछ खेत हैं, जिनमें चिप-चिपे वाले धान के पौधे रोपे हुए हैं. (शराब बनाने के लिए.) मैं स्वयं तो शराब पी नहीं सकता लेकिन मैं चाहता हूं कि मेरे मित्र मेरे यहां आने पर पियें. मेरे घर के सामने एक चौड़ी नदी बहती है, जिसके किनारे-किनारे लंबे-लंबे वृक्ष हैं. मेरे मित्र यहां अपनी इच्छा-नुसार मटरगश्ती कर सकते हैं या पालथी मारकर बैठ सकते हैं. मेरे पास केवल चार बूढ़ी नौकरानियां हैं, जो रसोई का काम देखती हैं और मेहमानों की आव-भगत करती हैं. मेरे पास चार-दर्जन लड़के नौकर हैं, जो संदेशों को ले जाने और न्योता टंकारी का काम करते हैं. जब वे खाली होते हैं तो मैं उन्हें चटाई बुनने और झाड़ू बनाने के काम में लगाता हूं, ताकि मेरे मित्रों के आने के लिए कमरा एकदम ठीक-ठाक रहे. जब सभी मित्र मुझसे मिलने आते हैं, तो उनकी कुल संख्या सोलह होती है लेकिन ऐसा कम ही होता है कि वे सभी मेरे घर आयें. बारिश या तूफानी दिनों को छोड़कर ऐसा भी बहुत कम होता है कि उनमें से कोई भी मेरे घर की ओर न मुड़े. नियमतः छह या सात मित्र मेरे घर पर इकट्ठा होते हैं. वे राज-नीति पर बातचीत नहीं करते और ऐसा वे किसी परेशानी से बचने के लिए नहीं करते बल्कि उन्हें लगता है कि कचहरी में घटित और सुनी-सुनायी बातों पर चर्चा करने का कोई औचित्य नहीं है. ऐसी गप्पें प्रायः अफवाह होती हैं और इन पर चर्चा करना समय की बरबादी है. हम दूसरों की त्रुटियों पर भी चर्चा नहीं करते, क्योंकि आदमी कोई भी त्रुटि नहीं करता. और हम उससे कोई विद्वेष पैदा नहीं करना चाहते. हम एक-दूसरे को प्रभावित करने के लिए भी बातचीत नहीं करते और न ही हम प्रभावित होते हैं. हमारी यह इच्छा अवश्य रहती है कि लोग हमारी बात-को समझें लेकिन अंततः लोग नहीं समझेंगे. इसलिए हम जीवन की रहस्य-मय देन पर चर्चा करते हैं और लोग प्रायः अत्यधिक व्यस्त होने के कारण ऐसे प्रश्नों में दिलचस्पी नहीं रखते. मेरे मित्र अमूमन अनासक्त-सा जीवन व्यतीत करते हैं. इसलिए हम लोग प्रायः अपने इर्द-गिर्द घटित मानवीय प्रकृति के बारे में बहस करते हैं. लेकिन जैसे ही वह दिन बीतता है हममें से कोई भी उन बातों को याद नहीं रखता.

कभी-कभी हम सोचते हैं कि इस बातचीत को किताब का रूप दिया जाये ताकि भावी पीढ़ियों के लिए लाभदायक हो सके लेकिन निम्नलिखित कारणों से हम ऐसा नहीं कर सके : पहले, हममें से कोई भी ऐसा नहीं चाहता कि उसके न रहने पर इस दुनिया में उसका नाम रह जाये इसलिए ऐसा करने में हम बहुत आलस करते हैं. दूसरे, बातचीत करने में सुख है लेकिन इसे लिखना एक कष्टकर काम है. तीसरे, जब हम मर जायेंगे तो हममें से कोई भी इसको पढ़ नहीं सकेगा और चौथे, हम इस वर्ष जो लिखेंगे उस पर अगले वर्ष पछतावा करेंगे. □

● अनुवाद : विनोब

सामंतवाद के विरुद्ध चीन के मुक्तिसंघर्ष में दक्षिणी प्रांत के गुरिल्ला सैनिकों का महत्व किसी से कम नहीं है. यहीं से लाल सेना का सूत्रपात हुआ था. इस कहानी के लेखक स्वयं भी शैन्सी प्रांत के गुरिल्ला आंदोलन के संस्थापक रहे हैं. एक के बाद कई पराजयों ने इन्हें तोड़ा नहीं, बल्कि लड़ने की और अधिक ताकत दी और 1937 में जब जापान ने चीन पर आक्रमण किया तो उनकी सैनिक टुकड़ियों ने जापानी सैनिकों का डटकर मुकाबला किया. प्रस्तुत है साधनहीन लड़ाई की गुरिल्ला दास्तान.

हथियार विहीन गुरिल्ला दस्ता

काओ लांगथिंग

जमींदार की सेना सामने पहाड़ी पर बने देवी के मंदिर में अड्डा जमाये पड़ी थी. उसका कमांडर था छ्यु शुकाई. यदि हम उन पर सीध आक्रमण करके हथियार छीनने की कोशिश करते तो किसी हालत में नहीं बचते.

1932 के फरवरी महीने में हेंग की पहाड़ियों पर हमारे ऊपर घात लगाकर हमला हुआ था और हमें मुंह की खानी पड़ी थी. अब हमारे पास हथियार तो थे ही नहीं, पैसे के नाम पर केवल एक डालर बचा था और बचे थे तीन आदमी, काओ वैंकिंग, लियू शांजहोंग, और मैं. हम एक भुरभुरी दीवार पर बैठे सोच रहे थे कि क्या किया जाये.

"येनान में मैं सेना में काम करता था." काओ वैंकिंग ने चुप्पी तोड़ते हुए कहा, "वहां पर मेरे कुछ दोस्त भी हैं. हम वहां जाकर सेना में भर्ती हो सकते हैं. यहां जो कुछ हो रहा है, उसका वहां किसी को पता नहीं होगा. हम वहां सेना में विद्रोह करवा सकते हैं और वहां से कुछ राइफलें निकालकर यहां फिर से अपना काम जारी रख सकते हैं."

उसके चुप होने से पहले ही मैं तो उसकी बात से सहमत हो गया था, पर शांजहोंग ने कहा, "ठीक है, इस पर विचार कर लेते हैं." और कुछ देर की बहस के बाद हमने तय किया कि यह तरीका भी आजमा ही लेना चाहिए.

पर जब लियू शांजहोंग ने रास्ते के खर्च की बात उठायी तो मैंने एकमात्र डॉलर निकालकर सामने रख दिया.

"इससे तो कुछ नहीं होगा," उसने कहा, "हमें कुछ और इंतजाम करना होगा."

"पुराने कलैंडर के मुताबिक फरवरी की 3 तारीख हो गयी है. जब तक हम वहां पहुंचेंगे, हमें गर्म कपड़ों की जरूरत नहीं रहेगी. अगर मैं अपना यह कोट बेच दूं तो तीन-चार डॉलर और मिल जायेंगे और इतने में हमारा काम चल ही जायेगा." कहकर काओ वैंकिंग हम दोनों की ओर देखकर जवाब का इंतजार करने लगा.

◘

सात तारीख की दोपहर के बाद हम लोग हुआइयिवान पहुंचे. वहां सबसे पहले तो हमने एक सराय तलाश की, जहां खाना भी मिलता हो और वहां टिक गये. हल्का-सा खाना खाने के बाद हम लोग बैठकर बातें करने लगे.

तभी करीब चालीस साल की उम्र का सराय का मालिक हम लोगों के पास आया और हमारी खैरियत पूछने लगा, "मैं आप लोगों की और क्या सेवा कर सकता हूं?"

हमने साथ बैठने के लिए आमंत्रित किया.

"आपका काम तो ठीक चल रहा है न?" यों ही बात शुरू करने के लिए मैंने औपचारिक-सा सवाल उछाल दिया.

"ठीक कहां? खाने भर के लिए हो जाता है. कपड़े तक नहीं बन पाते." उसने बड़े विचित्र ढंग से अपनी मूंछें उमेठीं.

"काम कुछ मंदा है क्या?"

"काम तो बहुत है, पर फालतू के टैक्स भी तो लग गये हैं. पिछले साल चालीस डालर का मुनाफा हो गया था. उसमें से अट्ठाइस डॉलर तो वे ही ले गये."

"आपका परिवार कितना बड़ा है? और जमीन?"

"मेरी अपनी जमीन करीब एक एकड़ है. पर यह काफी

नहीं होती, उस पर जमींदार की बटाई इतनी ज्यादा होती है कि पूरी फसल वहीं चली जाती है. इतनी मेहनत के बाद भी अपने खाने के लिए यहां से एक दाना तक नसीब नहीं होता. इस सराय पर इतना ज्यादा टैक्स देता हूं. ऊपर से जमीन का लगान! हालात तो लगातार बिगड़ते ही जा रहे हैं. बड़े जमींदार कर्जों पर ब्याज की बड़ी ऊंची दरें ले रहे हैं. पिछले साल मेरा गधा मर गया था. नया खरीदने के लिए मेरे पास पैसे नहीं थे, इसलिए मुझे एक जमींदार से आठ प्रतिशत प्रतिमाह की दर से दस डालर लेने पड़े थे. साल भर में मूल और ब्याज मिलाकर पूरे बीस डालर हो जायेंगे."

"ब्याज की यह दर तो बहुत ज्यादा है." मैंने धीरे से कहा.

तभी दरवाजा जोर से खुला और एक लड़का झपटता हुआ वहां आ पहुंचा.

"पापा, जल्दी घर चलो, जमींदार के आदमी आये हैं. पिछले नववर्ष पर आपने पहाड़ पर पूजा करने के लिए जो पैसे उधार लिये थे, वही मांग रहे हैं." सराय का मालिक विदा मांगकर धीरे-धीरे कदमों से बाहर निकल गया.

शाम ढलने पर सराय के मालिक का वही लड़का आया और कांग पर अलसी के तेल का एक दीया रखकर चला गया.

▣

उसी समय बगल की दूकान के दरवाजे पर किसी के खटखटाने की आवाज सुनाई दी. फिर एक आवाज आयी, "तुम्हारे पास तेल होगा? हमें कुछ तेल दोगे?"

"हां, जरा रुको," इसके साथ ही दरवाजा खुलने की भी आवाज आयी, "इस समय तेल की क्या जरूरत आ पड़ी?"

"हम लोग सफेद बंदगोभी के गोदाम में अफीम पी रहे हैं."

"और कौन है?"

"कमांडर छ्यु के अफसर. किसी और के लिए तेल मांगने मैं क्यों आता?"

"क्या कमांडर वापस आ गये हैं?"

"अभी नहीं. क्या तुम्हारे पास हैडमेन सिगरेट का पैकेट होगा?"

"है, पर नकद पांच सौ लगेंगे."

"जल्दी दो, पैसे की चिंता मत करो."

फिर दरवाजा बंद होने, कदमों के दूर जाने की आवाज आयी.

"कमांडर नहीं है, मौके का फायदा उठायें?" मैंने काओ की ओर देखते हुए प्रश्न किया.

"क्या?" उसकी आवाज बहुत धीमी थी.

"छ्यु का छोटा भाई नॉरमल स्कूल में मेरे साथ था. मेरी उससे अच्छी पटती थी और मैं उनकी घर की हालत को को भी थोड़ा-बहुत जानता हूं. हम अपने आपको यात्री बतायेंगे और कमांडर की अनुपस्थिति में बैरकों में जायेंगे. वहां मौका देखकर उनकी राइफलों को उड़ा लेंगे. क्यों?"

"क्या यह बेहतर नहीं होगा कि हम पहले सफेद बंदगोभी के गोदाम में जाकर इन अफसरों की बंदूकों पर कब्जा कर लें?" लियू ने मेरी ओर घूमते हुए सुझाव दिया.

"नहीं," मैंने कहा, "अगर वे लोग वहां मौज-मस्ती के लिए आये हैं तो उनके पास बंदूकें नहीं होंगी और अगर होंगी तो इसका मतलब है उन्हें किसी गड़बड़ी की आशंका है. इस तरह तो हम आफत में पड़ जायेंगे." थोड़ा सोच लेने के बाद मैंने कहा, "हम वहां दिन में जायेंगे और दिखायेंगे जैसे हम कमांडर के दोस्त हैं. और जैसे ही हमें मौका मिलेगा, हम अपना काम कर डालेंगे."

"अगर कमांडर वापस आ गया तो?" काओ ने पूछा.

"इतनी देर तो हम रुकेंगे ही नहीं." लियू ने कहा, "वहां पहुंचने के बाद तो तीन-चार घंटे से ज्यादा लगेंगे नहीं. अगर मौका लगा तो चटपट काम निपटा देंगे, वर्ना लौट आयेंगे. जितनी देर कमांडर बाहर है, हम कुछ कर सकते हैं. हम अपना काम तभी करेंगे जब निश्चित होगा कि सफल हो ही जायेंगे."

▣

आठ तारीख की सुबह बहुत सुंदर थी. हमने नाश्ता किया. हैडमेन सिगरेट के दो पैकेट लिये और सराय से बाहर निकल आये. हमने नदी पार की और देवी के मंदिर तक पहुंचने के लिए पहाड़ी पर चढ़ने लगे.

बैरकों के दरवाजे बंद थे. वहां कोई संतरी नहीं दिखा.

"दरवाजा खोलो!" मैंने खटखटाते हुए जोर से कहा.

"कौन है?" भीतर से आवाज आयी.

"मैं हूं." मैंने दोस्ताना लहजे में जवाब दिया.

"किससे मिलना है?"

"कमांडर से."

"वे तो बाहर गये हैं." आवाज निकट आ रही थी.

"कब लौटेंगे?"

"आज शाम को, या ज्यादा से ज्यादा कल."

"मेहरबानी करके दरवाजा खोल दो. हम उनका इंतजार कर लेंगे. हमें उनके साथ कुछ जरूरी बातें करनी हैं."

"तुम कितने आदमी हो?"

"तीन."

"जरा रुको, मैं लैफ्टिनेंट से पूछ लूं." इसके साथ ही दूर जाती हुई कदमों की आवाज कहीं विलीन हो गयी. दो मिनट बाद हमें कुछ अधिक कदमों की आवाज अपनी ओर आती सुनाई दी. उन्होंने दरवाजे को हल्का-सा झटका दिया. फिर सांकल खोली और दरवाजा खोल दिया. ढीली-ढाली वर्दी पहने दो लोग कंधों पर बंदूकें अटकाये सामने आ गये थे.

"आप लोग कमांडर से मिलने आये हैं?" उनमें से एक ने पूछा जिसकी कमर पर मटियाले रंग का साफा बंधा था.

"हां," मैंने स्वीकृति दी.

"आप लोग हमारे कमांडर को कैसे जानते हैं?" दूसरे व्यक्ति ने पूछा. उसके कपड़े काले रंग के थे.

"हम लोग जनरल सु के अधीन एक ही साथ काम करते थे." मैं अभी कह ही रहा था कि एक तीसरा व्यक्ति भी बाहर निकल आया. उसकी काली कमीज के बटन खुले थे और उसके भीतर काली साटन की बनियान दिख रही थी. हमने आगंतुक को ऊपर से नीचे तक गौर से देखा.

"आइए, मैं आप लोगों का स्वागत करने के लिए जल्दी

——लू शुन की लंबी कहानी का एक अंश——

साबुन

"आज मुख्य बाजार में दो भिखारिनें भीख मांग रही थीं. उनमें से एक अठारह-उन्नीस साल की लड़की थी. इस उम्र में भीख मांगना कितना अनुचित है. फिर भी वह भीख मांग रही थी. उसके साथ लगभग सत्तर साल की एक बुढ़िया थी, जिसके बाल सफेद थे और अंधी थी. दोनों कपड़े की दूकान के बाहर बैठी भीख मांग रही थीं. बुढ़िया उस लड़की की दादी थी. जो कुछ मिलता, लड़की अपनी दादी को दे देती और खुद भूखी रह जाती. क्या तुम समझती हो कि ऐसी लड़की को दान देने में लोग पीछे रहते होंगे?" स. मिन ने पत्नी की आंखों में आंखें डालकर पूछा मानो उसकी बुद्धि परख रहा हो.

उसने कोई उत्तर नहीं दिया. बस उत्तर पाने की प्रतीक्षा में पति के चेहरे को घूरती रही.

उसे बोलते न देख पति ने खुद ही कहना शुरू किया, "मैं काफी देर तक देखता रहा. सिर्फ एक आदमी ने उसे तांबे का एक सिक्का दिया. बहुत से लोग उसके इर्द-गिर्द जमा थे, लेकिन सिर्फ खिल्ली उड़ाने के लिए. एक कह रहा था, 'इस पर चढ़े इतने मैल को देखकर निराश न होओ. बस साबुन की दो टिकिया सारा मैल उतार देंगी. और फिर इसमें से एक बढ़िया चीज निकल आयेगी.' अब तुम्हीं बताओ, कितने बद्तमीज लोग थे वे!"

पत्नी ने भुनभुनाकर सिर झुका लिया था. कुछ देर चुप रहने के बाद उसने सहज स्वर से पूछ लिया, "तुमने तो उसे पैसे दे दिये थे न?"

"मैंने? नहीं! वह कोई मामूली भिखारिन थोड़े ही थी कि उसे एक-दो तांबे के सिक्के देते मुझे शर्म न आती!"

"हूं!" उसकी बात खत्म होने से पहले ही वह उठकर रसोई में चली गयी. शाम के खाने का समय हो गया था. □

नहीं आ सका. इसके लिए क्षमा चाहता हूं."

"कर्नल, क्या मैं आपका नाम जान सकता हूं?" लियू ने अपनी सफेद बत्तीसी बाहर निकालते हुए पूछा.

"मेरा नाम किऊ है."

"ये हमारे लैफ्टिनेंट हैं." मटियाले साफेवाले ने बताया.

"क्षमा कीजिए, यह तो हमारे लिए सम्मान की बात है." हम तीनों ने लगभग एक ही स्वर में कहा.

"अभी तक मैं आप सज्जनों से परिचित नहीं हो पाया हूं, क्या आप लोग अपने बारे में कुछ बताकर मेरा ज्ञानवर्द्धन कर सकेंगे?" किऊ के इस संकेत पर हमने अपना-अपना परिचय दिया.

लैफ्टिनेंट किऊ हमें अपने कार्यालय में ले गये. इसका उपयोग वे सोने के कमरे के रूप में भी करते थे. वहां पहुंचकर जो चीज हमें सबसे पहले दिखाई दी, वह थी दीवार पर लटकी दो राइफलें और उनके साथ उनकी गोलियों की पेटी. लगता था, उन्हें वहां लटकाने के लिए पांच-छह क्लिप लगे थे. फर्श पर एक ताला लगा मटियाला बक्सा भी रखा था. कांग पर यूलिन के कालीन बिछे थे.

"ये कमांडर के चचेरे भाई और हमारे प्रशिक्षक श्री झांग हैं." लैफ्टिनेंट किऊ ने परिचय कराया.

चाय पीते हुए हमने बताया कि कमांडर छ्यु से हमारी कितनी 'घनिष्ट दोस्ती' है. धीरे-धीरे उनका संदेह दूर होता चला गया था और वे हमारा और अधिक सम्मान करने लगे थे. दोनों बंदूकधारियों ने अपनी बंदूकें अब एक ओर रख दी थीं और एक-एक करके कमरे से बाहर चले गये थे. लैफ्टिनेंट और प्रशिक्षक दोनों ही हमारे साथ खुल गये थे, जैसे हम उनके परिवार के लोग हों.

उनके साथ गप्पें मारते हुए हमने आंखों-आंखों में एक-दूसरे को इशारा किया और पेशाब करने के बहाने पेशाबघर में आ गये. वहां हमने तय किया कि हम उन्हें दोपहर के भोजन के समय बैठक से ले जायेंगे और अपना काम शुरू कर देंगे. यह हमने पता लगा लिया था कि कार्यालय के कमरे में रखी चार बंदूकों के अलावा दो भोजनालय में कांग के ऊपर दीवार पर लटकी हैं.

हम लोगों को बातें करते हुए तीन घंटे से ऊपर समय हो गया. तभी हमें सूचना मिली कि खाना तैयार है.

हम लोग जब भोजनालय में पहुंचे तो खाना मेज पर सजा हुआ था. खाना खाते-खाते हमने एक-दूसरे को आंखों में इशारा किया और पूरा खाना खत्म करने से पहले ही मैं उठ खड़ा हुआ, "आप लोग भोजन जारी रखिए. हम जरा आराम करेंगे." मेरे साथ ही बाकी दोनों भी उठ खड़े हुए.

"ठीक है, आप लोग अंदर जाकर सिगरेट पीजिए. हम भी जरा देर में वहीं पहुंच रहे हैं." लैफ्टिनेंट के मुंह में खाना भरा था और वह ठीक से बोल नहीं पा रहा था.

हम कार्यालय में चले आये. दीवार पर चारों राइफलें लटकी थीं. वहां पर और कोई नहीं था. काओ ने झपटकर एक जर्मन राइफल निकाली, उसमें गोलियां भरीं और लपककर भोजनालय के दरवाजे पर पहुंच गया.

"कोई अपनी जगह से न हिले. अपनी-अपनी बंदूकें हमारे हवाले कर दो. हम तुम्हें कुछ नहीं कहेंगे." उसने लात मारकर दरवाजा खोलते हुए कहा. मैं उसके ठीक पीछे खड़ा था. दरवाजा खुलते ही मैं लपककर कांग पर चढ़ गया और दीवार पर टंगी दोनों राइफलें अपने कब्जे में कर लीं.

"आप. . .आप. . .क्या आप हमें. . .मार डालेंगे?" लैफ्टिनेंट और प्रशिक्षक ने कांपती आवाज में पूछा. उनके साथ बाकी सिपाहियों ने भी हाथ उठा लिये थे. घबराहट से उनके चेहरे पीले पड़ गये थे.

"अगर तुम अपने हथियार बिना कोई झंझट किये चुपचाप हमारे हवाले कर दोगे तो हम तुम्हें नहीं मारेंगे." मैंने कहा.

एक राइफल मैंने उनकी ओर तान दी थी और दूसरी मेरे दूसरे हाथ में थी. गोलियों की पेटी मैंने अपनी कमर में बांध ली थी. फिर उनसे पूछा, "अब बताइए, कार्यालय में रखे बक्से की चाबी किसके पास है?"

कोई कुछ नहीं बोला.

"अगर आप लोग नहीं बतायेंगे तो हम एक-एक करके सबको गोलियों से भून डालेंगे!" मेरा स्वर कठोर हो गया था.

"म. . .म. . .मेरे पास है." प्रशिक्षक झांग ने कांपते हुए हाथों से जेब में से चाबी निकालकर मेरे हवाले कर दी. मैं भागता हुआ वापस कार्यालय पहुंचा. तब तक लियू ने वहां की सारी राइफलें और गोला-बारूद इकट्ठा कर लिया था. मैंने बक्से का ताला खोला. वहां कुछ खाते, दूसरी तरह के कागज तथा काफी रकम पड़ी थी. कुछ चांदी के डालर थे और कुछ बैंक नोट. उन्हें लेकर मैं वापस भोजनालय में आया.

"बक्से में रखे पैसे किसके हैं?" मैंने सिपाहियों से पूछा.

"तीन नोट तो रसोइये के हैं. बारह डालर अनाज खरीदने के लिए हैं, और बाकी परसों टैक्स के रूप में वसूल की गयी रकम है." लगता था कि प्रशिक्षक झांग को जवाब देने की ज्यादा ही जल्दी थी.

"तीन नोट और बारह डालर निकालकर मैंने कांग के कोने पर रख दिये और कहा, "हम न तो रसोइये के पैसे लेना चाहते हैं और न तुम लोगों के खाने के. ये उठा लो." किसी ने कुछ नहीं कहा. बस पीले चेहरे से टुकुर-टुकुर हमें देखते रहे.

"ये चालीस डालर और हैं. आप लोग पांच-पांच डालर आपस में बांट सकते हैं." कहते हुए मैंने यह रकम भी गिनकर कांग के कोने पर रख दी.

"आप बहुत दयालु हैं साहब."

"ये बंदूकें जनता की संपत्ति हैं और कोई भी इनका प्रयोग कर सकता है. हमें तुम्हारे पैसे की भी जरूरत नहीं है."

"कम से कम रास्ते के खर्च के लिए तो कुछ ले लीजिए." अब उनमें बात करने की हिम्मत आ गयी थी.

"मेरी बात सुनिए," मैंने जोर से कहा, "दोस्तो, हम लोग लाल सेना के सिपाही हैं और हमारा नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी करती है. हम गरीबों के लिए काम करते हैं और सिर्फ अत्याचारियों को मारते हैं. हम गरीब की एक सुई भी नहीं लेते. आप भी भूखे, बेरोजगार, शोषित हैं, इसलिए आपको नुकसान पहुंचाने का हमारा कोई इरादा नहीं है. अगर आप लोग आकर लाल सेना में भर्ती होना चाहें तो आपका स्वागत है, अन्यथा आप वापस जाकर अपने घर और खेतों पर काम कर सकते हैं. लेकिन जहां भी आप रहें, बुरे लोगों, जमींदारों और शोषकों के लिए कभी काम न करें."

"जरूर-जरूर. . ." समवेत स्वर में सबने स्वीकारा.

"अलविदा दोस्तो, हम अब जा रहे हैं."

"अलविदा, लाल सेना के दोस्तो!"

हमने आकाश की ओर तीन चक्र गोलियां चलायीं. उस छोटी-सी पहाड़ी का देवी का मंदिर भी हमारी विजय का उत्सव मना रहा था. □

● रूपांतर : सुरेश उनियाल

अजनबी की पुकार

▣ लू शुन्न

धायमां चांग ने मुझे एक कहानी सुनायी थी :

एक बार की बात है, एक अध्येता अध्ययन के लिए एक पुराने मठ में रहता था. एक दिन वह बरामदे में बैठा ठंडी हवा का आनंद ले रहा था कि उसने किसी को अपना नाम पुकारते सुना. उसने मुड़कर पीछे देखा तो दीवार के पीछे उसे एक सुंदर स्त्री का चेहरा दिखाई दिया. वह मुस्करायी और फिर गायब हो गयी. वह बहुत खुश था, पर यह खुशी अधिक देर तक कायम न रही. शाम को उससे मिलने के लिए एक बूढ़ा भिक्षु आता था. आते ही उसने बताया कि उसे अध्येता के मुंह पर 'नारी-सर्प' की छाया दिखाई दे रही है. 'नारी-सर्प' एक बुरी आत्मा होती है, जिसका चेहरा नारी का और शरीर सर्प का होता है तथा वह व्यक्ति का नाम लेकर पुकार सकती है. और अगर कोई उसकी बात का जवाब दे दे तो वह रात को खाने के लिए आ जाती है.

अध्येता की तो डर के मारे जैसे जान ही निकल गयी. पर भिक्षु ने उसे एक छोटी-सी पिटारी देते हुए कहा कि सोते समय इसे अपने सिरहाने रखकर वह मजे से निडर होकर सो सकता है.

उसने कहे अनुसार सब कुछ किया, फिर भी उसे नींद नहीं आ सकी. बाहर से हवा और वर्षा की-सी आवाजें आती रहीं. अभी वह डर के मारे कांप ही रहा था कि झन-झन की आवाज करती एक सुनहरी किरण उसके तकिये के नीचे रखी पिटारी से निकली. इसके साथ ही बाहर की आवाजें एकदम बंद हो गयीं और वह सुनहरी किरण वापस आकर पिटारी में समा गयी.

फिर क्या हुआ? भिक्षु ने बताया कि इसमें एक उड़नेवाला कनखजूरा था जो सांप का दिमाग चूस लेता है. इसने उस 'नारी-सर्प' को भी खत्म कर दिया है.

इस कहानी से हमें शिक्षा मिलती है कि अगर कोई अजनबी आवाज पुकारे तो हमें उस तरफ देखना नहीं चाहिए.

इस कहानी से मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि आदमी का जीवन कितने जोखिमों से भरा है. जब भी गर्मियों की शाम को मैं बाहर अकेला बैठा होता, चाहता कि काश मेरे पास भी एक ऐसी ही पिटारी होती. अक्सर यह सोचता-सोचता मैं अपने सौ गछिया बगीचे के किनारे तक पहुंच जाता. आज तक तो मुझे कोई ऐसी पिटारी मिली नहीं और न ही मेरा सामना किसी 'नारी-सर्प' से हुआ . हालांकि अजनबी आवाजें मुझे पुकारती रहती हैं. □

समुद्र का क्रोध जहां हर चीज को नेस्तनाबूद करने की क्षमता रखता है, वहीं उसकी विशालता हर क्षुद्रता को अपने भीतर समोकर उसे भी अपनी विशालता का एक अंश बना लेती है. गुआन युनहाई भी एक ऐसा ही व्यक्ति है जो अपने अधीनस्थ द्वारा भ्रमवश की गयी गलतियों को न केवल माफ कर देता है, बल्कि पुरस्कृत भी करता है.

समुद्र

• वांग जुंगहान

सामने वाली खिड़की बंद होते ही समुद्र का गर्जन तो कम हो गया था लेकिन अस्पताल के कमरों की घुटन और बढ़ गयी. उसने अपने पति की ओर देखा और संदिग्ध लहजे में शिकायत की, "जब से मैं यहां हूं, तुमको ठंडी सांसें लेते देख रही हूं, क्या बात है?" वह चुपचाप उसके डेस्क के पीछे जा खड़ी हुई देखा कि वह अपने तबादले के लिए आवेदन लिख रहा था.

"इयेशान, हमारी शादी हुए छह साल हो गये हैं और हमारे दो बच्चे हैं," पत्नी ने कहा, "लेकिन मुझे लग रहा है कि तुम मुझसे कुछ छिपा रहे हो." बिस्तर पर बैठते हुए उसने अपने पति की ओर हैरानी के साथ देखा. उसकी मानसिक स्थिति के बारे में एक डर ने उसे जकड़ लिया. "सेक्रेटरी गुआन को तुम्हारे खिलाफ क्या शिकायत है?"

"मैं तुमसे कोई बात कैसे छिपा सकता हूं?" अचानक इयेशान, ने कहना शुरू किया, "देखो वह आ रहा है!" जब उसका पति लपककर खिड़की के पास गया तो वह भी उसके पीछे-पीछे गयी. उन्होंने लगभग साठ वर्ष के एक व्यक्ति को टहलते हुए देखा. नाटा, पतला और भूरे बालोंवाला वह व्यक्ति कोई धुन गुनगुनाता हुआ जा रहा था.

"क्या यही सेक्रेटरी गुआन है?" पत्नी ने पूछा. उसे पहचानते हुए उसने कहा, "जब मैं पहुंची, तो वह मुझे मिलने आया था, उसने मेरे काम के बारे में और मेरे परिवार के बारे में मुझसे पूछा था और जो कुछ मैंने उसे बताया, उसने वह अपनी नोट बुक में लिख लिया."

"क्या उसने नोट्स लिये!"

"हां, इसमें क्या बुराई है?" पति की सहमी हुई दृष्टि ने उसे और भी उलझन में डाल दिया. वह भी चिंता करने लगी. "अगर उसने तुम्हारे रूममेट यांग जिन को बाहर बुलाया और मुझे यहां देर तक ठहरने के लिए कहा तो इससे क्या फर्क पड़ता है?. . ."

"अब चुप भी रहो! वहां वह दूसरी मंजिल पर जा रहा है. वह डॉ. ली को खोज रहा होगा." इयेशान खिड़की से हट गया और उसने अपने-आप से कहा, "कमाल है. काम के बाद बूढ़े ली को क्यों खोज रहा है? वे क्या बात करेंगे! शायद मेरा तबादला?"

"क्या तुमने अपना आवेदन पहले ही उसे दे दिया है?"

"हां, तुम्हारे आने से एक दिन पहले और कल मैं एक और दे दूंगा."

"क्या तुम नहीं जानती कि वह कभी किसी को क्षमा नहीं करता?" इयेशान ने धीमी आवाज में कहा, "वह अक्सर कहता है, 'मुझे गुआन युनहाई कहते हैं, क्योंकि मैं समुद्र को प्यार करता हूं.' (चीनी भाषा में हाई का अर्थ समुद्र होता है) वह सचमुच इसी तरह का है. जब उसे गुस्सा आता है तो वह समुद्र में तूफान की तरह होता है. पिछले वर्ष एक मीटिंग में जब हॉस्पिटल के स्टाफ से कहा गया कि सांस्कृतिक क्रांति के दौरान जिन्होंने दूसरों को नुकसान पहुंचाया, उन्हें कानून के हवाले करें, तो उसने शपथ खाकर कहा था कि जिसने हमारे हॉस्पिटल डायरेक्टर याओ को मारा है, उसका पता लगाऊंगा. एक आलोचनात्मक बैठक के दौरान उसे पीट-पीटकर मार दिया गया था. उसका कातिल उसका भाई चाओ, पब्लिक हेल्थ ब्यूरो का हेड था. जाओ तीन बार उसके पास जिरह करने के लिए उसके घर गया, लेकिन जब ओल्ड गुआन मीटिंग में बोला, उसने मेज को थपथपाते हुए दृढ़तापूर्वक घोषणा की, "चौकड़ी के अनुयायियों के विरुद्ध अपनी लड़ाई में हम हत्यारों को जिंदा नहीं छोड़ेंगे! कभी नहीं!" यदि उसने ब्यूरो के अध्यक्ष को भी नहीं बख्शा, तो मेरे बचने का अवसर ही कहां है?"

लेकिन इससे पहले कि वह बात पूरी करता, बालकनी की दूसरी मंजिल से एक आवाज आयी, "इयेशान'! इयेशान!"

"यह डाइरेक्टर ली है! वह मुझे बुला रहा है." इयेशान

खड़ा हो गया और एक घिरे जनवर की तरह देखने लगा.

"इयेशान," आवाज आती रही, "यहां आओ!"

उसकी पत्नी ने उसे एक धक्का दिया. वह चलकर खिड़की तक गया, उसे खोला और ऊपर देखने लगा. "डॉ. ली, क्या आप मुझे बुला रहे हैं?" उसने पूछा.

"क्या तुम क्षणभर के लिए ऊपर आ सकोगे?"

"अच्छा!" आहिस्ता से खिड़की बंद करते हुए इयेशान ने अपनी पत्नी की ओर देखते हुए कहा, "परसों उसने मुझसे सर्जिकल वार्ड छोड़ देने के लिए कहा था. वह एक इशारा था, अब संदिग्ध व्यक्तियों की छानबीन शुरू हो गयी है."

"तुम्हारे और उसके बीच समस्या क्या है?"

"अच्छा तो सुनो, बात कुछ ऐसे थी, आठ वर्ष हुए जब चौकड़ी समर्थकों ने याओ को यह स्वीकार करने के लिए जोर दिया कि वह गद्दार है और जब वह नहीं माना तो उसकी पिटाई शुरू कर दी. इतना मारा कि अगले दिन उसके पेशाब में खून आने लगा और वह उठ नहीं सका."

"क्या तुमने भी उसे पीटा था?"

"मैंने? मैं ऐसा नहीं हूं."

"तो फिर ठीक है."

"लेकिन गुआन ने प्रतिवाद किया था. "अगले दिन म्यूनिसिपल पार्टी कमेटी को एक खत लिखा, जिसमें कर्मचारियों के प्रचार दल पर यह आरोप लगाया गया था कि उन्होंने उसे पीटा है और गंभीर रूप से जख्मी किया है. अत: कर्मचारियों के प्रचार दल ने मुझसे उसका मुआयना करने और यह फैसला देखने के लिए कहा कि वह जख्मी था कि नहीं. उनके नेता ने मुझसे कहा, "हम एक पूंजीवादी रास्ते पर चलने वाले के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं. कौन जीतता है, यह तुम पर निर्भर है." मेरे मुआयने से यह स्पष्ट था कि गुआन सच बोल रहा है, उसके सारे शरीर पर, जिसमें गुर्दे भी शामिल हैं, घाव थे. लेकिन मैंने. . ."

"तुमने क्या किया?"

"चिकित्सा प्रमाणपत्र पर मैंने सख्त वृक्कशोथ लिखा."

"तुम ऐसा भला कर कैसे सके?"

"अपने को बचाने के लिए मैंने झूठ बोला था. गुआन ने मुझे घूरा था, और कहा था, "तुम डॉक्टर होने के काबिल नहीं हो." इयेशान ने उदासी के साथ अपना सिर हिलाया. "उसके बाद गुआन पर कर्मचारियों के प्रचार दल पर मिथ्या आरोप लगाने और क्रांतिकारी जनता का अपमान करने का दोष लगाया गया. उसे चार दिन तक ट्रक में बिठाकर गलियों में परेड करायी गयी, हालांकि वह सख्त बीमार था. सवाल यह है कि भविष्य में अब और क्या होगा. तुम क्या सोचती हो, ऐसी परिस्थिति में मैं यहां रह सकता हूं?"

"इयेशान! इयेशान!" डायरेक्टर ली ने फिर बुलाया.

"हां, मुझे जरूर जाना होगा," इयेशान ने अपनी पत्नी को देखते हुए कहा, "अपना हौसला बनाये रखो!"

उसकी पत्नी चिंतित हो गयी. पल-पल धीरे-धीरे गुजरता रहा, वह आधा घंटा पूरे एक दिन के बराबर लगा.

आते ही उसके पति ने धक्का देकर दरवाजा खोला.

चित्र : लियू ज़ोंगदे

शेर और लोमड़ी

एक शेर शिकार की तलाश में था. बहुत थक जाने के बाद उसे एक लोमड़ी दिखाई दी. वह उस पर झपटने ही वाला था कि लोमड़ी गुर्रा कर बोली, "हे शेर, देख, मुझ पर झपटने की गुस्ताखी न करना. स्वर्ग के राजा ने मुझे जंगल की नयी रानी नियुक्त किया है और तुम्हें मेरा अंगरक्षक. यकीन न हो तो चलो मेरे साथ और देखो कि बाकी जानवर मेरे सामने कैसे नतमस्तक होते हैं."

वही हुआ, जो भी जीव उन्हें देखता वही सिर झुकाकर प्रणाम करता. और शेर हमेशा के लिए अंगरक्षक बन गया. शेर को यह कभी पता नहीं चल पाया कि जानवर दरअसल लोमड़ी के सामने नहीं वरन शेर के सामने सिर झुकाते थे. □

वारिंग स्टेट्स का एक उपाख्यान (तीसरी-दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व)

हाथों में हाथ लिये वह कमरे से बाहर चले गये. दो इमारतें पार करके वे समुद्र की तरफ आये.

"मुझे बताओ."वह और अधिक अपने को रोक न सकी.

"देखो!" उसने सामने इशारा किया, "वह कौन है?"

उसने उसे एकदम पहचान लिया—"गुआन युनहाई!"

"हां! सचमुच वह समुद्र जैसा ही है.

"तो क्या उसे गुस्सा आया और वह तुम पर बरस पड़ा?"

इयेशान ने भावुक होकर कहा, "इसे गुस्सा कह सकती हो, लेकिन यह विशालता भी थी."

"इयेशान, तुम फिर पहेलियां बुझाने लगे."

"अस्पताल की पार्टी ब्रांच ने मुझे एक वर्ष के लिए शियांग मेडिकल इंस्टीट्यूट में 'चेस्ट सर्जरी' का अध्ययन करने के लिए भेजने का निर्णय लिया है."

इयेशान रुका और उसने फासले पर दूर जाती हुई गुआन की आकृति को देखा. "मैंने जो गलती की थी, उसके लिए अब और अधिक पछता रहा हूं. अभी-अभी मैं उससे क्षमा मांगने ही वाला था. लेकिन उसने जल्दी से बातचीत का विषय बदल दिया. उसने मुझसे कहा कि मैं तुम्हें इसके बारे में बताऊं और जाने के लिए तुरंत तैयार हो जाऊं.

पति-पत्नी एकदम मौन हो गये, अब वे गरजते हुए नीले समुद्र की ओर देख रहे थे. □

● अनुवाद : दयानंद पांडेय और सविता चड्ढा

चलो जापान, चलो जापान (तीसरी किस्त)

प्रो. सुजूकी, उर्दू और मिसेज सुजूकी

● मुज्तबा हुसैन

● नेपाल, कोरिया और सिंगापुर के प्रतिनिधियों के साथ लेखक

जापान में सुजूकी बहुत होते हैं. टोक्यो में हम पहली बार जिस टैक्सी में बैठे थे, उसके ड्राइवर का नाम भी सुजूकी था. जो मोटर वह चला रहा था, खुद उसका नाम भी सुजूकी था. उनकी एक मोटर साइकिल का नाम भी सुजूकी है. इन दिनों जापान में जो प्रधानमंत्री हैं, वह भी सुजूकी ही कहलाते हैं. जापान के महिला विश्वविद्यालय में जब हमारा स्वागत-सत्कार हुआ तो हमारी देख-भाल और हमारी अंग्रेजी का जापानी में अनुवाद करने के लिए जो महिला नियुक्त हुई, वह भी संयोग से मिसेज सुजूकी ही थीं. बहुत भली महिला हैं. हिंदुस्तान भी आ चुकी हैं. उनका जिक्र हम बाद में तफसील से करेंगे. बहरहाल, जापान में कदम-कदम पर आपको सुजूकी मिलेंगे.

और यह भी एक संयोग है कि जिंदगी में जिस पहले जापानी दोस्त से हमारी मुलाकात हुई थी, वह भी सुजूकी ही थे. हमारा मतलब है प्रोफेसर सुजूकी से, जो विदेशी अध्ययन की टोक्यो यूनिवर्सिटी में उर्दू विभाग के प्रोफेसर और अध्यक्ष हैं. 1973 में उनसे हमारी मुलाकात दिल्ली के जनपथ होटल में हुई थी. हमारे मेहरबान दोस्त हसनउद्दीन अहमद भी उस रात मौजूद थे. प्रोफेसर सुजूकी अपने शोध-प्रबंध के सिलसिले में कुछ दिनों के लिए हिंदुस्तान आये थे और उन्होंने हमें रात के खाने पर बुलाया था. हम और हसनउद्दीन अहमद साहब जब उनसे मिलने के लिए जनपथ होटल पहुंचे तो हिंदुस्तान की परंपरा के अनुसार अचानक बिजली फेल हो गयी. हमें अच्छी तरह याद है कि प्रोफेसर सुजूकी ने हमसे हाथ मिलाते हुए ठेठ जापानी लहजे में 'मीर' का यह शेर सुनाया था:

वो आये बज्म में इतना तो मीर ने देखा
फिर इसके बाद चिरागों में रोशनी न रही

हम उस वक्त तक जापान नहीं गये थे, बल्कि किसी जापानी से कभी मुलाकात ही नहीं की थी. एक जापानी के मुंह से 'मीर' का शेर सुनकर हमारे दिलो-दिमाग में रोशनी तो जरूर पैदा हुई थी, लेकिन दिलो-दिमाग की रोशनी से किसी का चेहरा तो नहीं देखा जा सकता था. दिल्ली में दस्तूर है कि जब बिजली चली जाती है तो बस चली जाती है, जल्द वापस आने का नाम नहीं लेती. प्रोफेसर सुजूकी के साथ हमारी वह रात अंधेरे में ही गुजरी थी. न उन्होंने हमें जी भर के देखा और न हमने उन्हें. जनपथ होटल के डायनिंग हॉल में हमने मोमबत्तियों की रोशनी में रात का खाना खाया था. प्रोफेसर सुजूकी ने खाने से पहले कुछ पेय पदार्थों का आर्डर देते हुए कहा था, "आज की रात खाने से पहले कोई न कोई शर्बत पीना जरूरी है, क्योंकि एक शर्बत, जिसे उर्दूवाले बहुत ज्यादा पीते हैं, वह आज हम पी नहीं सकते."

हमने पूछा था, "प्रोफेसर सुजूकी, आपका इशारा किस शर्बत की तरफ है?"

हंसकर बोले, "मेरा मतलब शर्बते-दीदार से है? बिजली को फेल हुए दो घंटे हो चुके हैं और मुझे यकीन है कि आज की रात न हम आपको देख सकेंगे और न आप हमें."

प्रोफेसर सुजूकी को दूसरे दिन सुबह के हवाई जहाज से हैदराबाद जाना था. वहां कुछ दिन रुककर गुलबर्गा जाना था. हमने प्रोफेसर सुजूकी से कहा था, "प्रोफेसर सुजूकी, आप उस जगह जा रहे हैं, जहां के हम निकाले हुए हैं. हैदराबाद में जिंदगी के बीस बरस गुजारे और गुलबर्गा तो हमारी जन्म-भूमि है, वहां भी अपनी जिंदगी का खासा वक्त बरबाद कर चुके हैं."

अंधेरे में ही मैंने उन्हें जनाब आबिद अली खान, एडीटर 'सियासत' और अपने बुजुर्ग दोस्त सुलेमान खतीब के पते दिये थे कि इन जगहों पर जाइए तो इन महानुभावों से जरूर मिलिए, आपकी रिसर्च ठिकाने लग जायेगी. बहरहाल, 1973 में प्रोफेसर सुजूकी से हमारी मुलाकात हुई थी. चार घंटों की महफिल के बाद जब हम जाने लगे तो प्रोफेसर सुजूकी ने अपना विजिटिंग कार्ड देते हुए कहा था, "मुझे अफसोस है कि मैं आपका दीदार नहीं कर सका. फिर भी मेरा

पिछले दो अंकों में आपने पढ़ा कि कैसे-कैसे मंजरों से गुजरते हुए जनाब मुज्तबा हुसैन जापान पहुंचे और शहंशाह के पड़ोसी होकर चैन की नींद सोये. अब प्रस्तुत है ढेर सारे सुजूकियों से उनके घिर जाने की अजीबोगरीब दास्तान.

विजिटिंग कार्ड अपने पास रखिए, कम से कम आपसे पत्र-व्यवहार तो होता रहेगा और क्या अजब कि कभी आप जापान भी आ जायें!"

हमें क्या पता था कि प्रोफेसर सुजूकी उस समय केवल एक औपचारिक शुभकामना प्रकट नहीं कर रहे थे, बल्कि हमारे हक में दुआ फरमा रहे थे. कोई सोच भी नहीं सकता था कि उनकी दुआ पूरे सात साल बाद कबूल हो जायेगी और हम यों अचानक जापान चले जायेंगे. हमने शिष्टाचार-वश उनसे विजिटिंग कार्ड ले लिया था और अपना विजिटिंग कार्ड इसलिए नहीं दिया था कि हमारा कोई विजिटिंग कार्ड ही नहीं था. जिंदगी में एक बार हमने अपने विजिटिंग कार्ड छपवाये थे और उन्हें लोगों में तकसीम भी किया था. इसके बाद हमें एहसास हुआ था कि बाज लोग विजिटिंग कार्ड को खामखाह गंभीरता से ले लेते. हैं. इन विजिटिंग कार्डों के कारण हमारे संबंधों का दायरा खामखाह विस्तृत होने लगा था. यों भी हमारी मित्रता का दायरा कुछ कम नहीं है कि हम इसे और विस्तृत करते. लिहाजा बाद में विजिटिंग कार्ड के खटराग में नहीं पड़े. हमारा उसूल यह है कि नये लोगों से जरूर मिलो, लेकिन उन्हें अपने घर का पता न बताओ. इससे जिंदगी बड़ी शांतिपूर्ण रहती है, मगर प्रोफेसर सुजूकी चूंकि विदेश के रहने वाले थे और जापान में उर्दू की खिदमत कर रहे थे, इसीलिए हमने हिंदुस्तानी परंपरा के अनुसार सिगरेट की डिबिया के एक टुकड़े पर अपना नाम और पता लिखकर उन्हें दे दिया था कि सनद रहे और वक्त जरूरत काम आवे.

शुक्रिया ही शुक्रिया

प्रोफेसर सुजूकी दूसरे दिन हैदराबाद चले गये. बाद में 'सियासत' में उनका एक इंटरव्यू भी नजर से गुजरा. गुलबर्गा से सुलेमान खतीब का खत भी आया कि जापान से प्रोफेसर सुजूकी गुलबर्गा आये थे, हमसे ज्यादा उर्दू जानते हैं और सूफियों के उपदेशों के बारे में भी हमसे ज्यादा जानकारी रखते हैं. (इसमें शको-शुबह की कोई गुंजाइश नहीं है.) प्रोफेसर भुजूकी उन दिनों सूफियों की उर्दू सेवाओं पर रिसर्च करने के लिए आये थे. बात आयी-गयी हो गयी, मगर प्रोफेसर सुजूकी की सच्चाई के हम उस वक्त कायल हो गये, जब उन्होंने जापान जाकर चारमीनार सिगरेट की डिबिया पर लिखे हुए हमारे पते पर शुक्रिया का एक खत भेजा. (जापानी बहुत संजीदगी के साथ शुक्रिया अदा करते हैं. हमने जापान जाकर देखा कि बेचारे जापानियों की जिंदगी का बड़ा हिस्सा सिर्फ शुक्रिया अदा करने में गुजर जाता है. इसके बारे में कभी अलग से लिखेंगे, शुक्रिया.)

यह एक हकीकत है कि जब हम जापान जाने लगे तो हमारे जहन में सिर्फ दो शख्सियत थीं. एक शख्सियत प्रोफेसर सुजूकी की थी और दूसरी मिसेज इंदु जैन की. मिसेज इंदु जैन जो हिंदी की कवयित्री हैं, दिल्ली टेलीविजन से भी संबद्ध रह चुकी हैं, पिछले दो बरसों से वह टोक्यो यूनिवर्सिटी में जापानियों को हिंदी पढ़ा रही हैं. उनका पता हमारे पास था, मगर प्रोफेसर सुजूकी के पते की ही फिक्र थी. हमें यह भी मालूम नहीं था कि प्रोफेसर सुजूकी अब भी सूफी संतों पर रिसर्च कर रहे हैं या खुद सूफी बन गये हैं. हमने ठान लिया था कि 'तुझे ढूंढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं'. चुनांचे टोक्यो पहुंचते ही पहली रात को हमने मिसेज आसानो से, जो कि हर मुश्किल आसान कर देती हैं, प्रोफेसर सुजूकी ताकेशी का जिक्र किया और कहा कि हिंदुस्तान में हम चूंकि उन्हें देख नहीं सके थे, अब जापान आये हैं तो लगे हाथों देख लेना चाहते हैं. बोलीं, "मैं प्रोफेसर सुजूकी को बहुत अच्छी तरह जानती हूं."

चुनांचे मिसेज आसानो ने दूसरे ही दिन फोन पर प्रोफेसर सुजूकी से हमारा संबंध स्थापित करवा दिया. प्रोफेसर सुजूकी की याददाश्त के हम उस वक्त कायल हो गये, जब हमने अपना नाम बताया तो दूसरी तरफ से बोले, "अरे मुज्तबा साहब! आप जनपथ होटल के अंधेरे में से उठकर टोक्यो की रोशनियों में किधर आ निकले! मुझे वह रात अब तक याद है. आपसे जल्द से जल्द कब मुलाकात हो सकती है, ताकि मैं शर्बते-दीदार पी सकूं."

हमने कहा, "आज टोक्यो में हमारा पहला दिन है. यूनेस्को के सेमीनार में आये हैं हम. कुछ पता नहीं कि हम कहां हैं और आप कहां हैं. जरा संभल जायें और यूनेस्को का प्रोग्राम मालूम हो तो फोन पर मुलाकात का वक्त तय कर लेंगे."

वह बोले, "टोक्यो यूनिवर्सिटी में हम आपका स्वागत-सत्कार करना चाहते हैं. पूरा एक दिन हमारे लिए खाली रखिए."

हमने उन्हें अपने होटल का पता और फोन नंबर दे दिया और जवाबन उनका फोन नंबर और पता ले लिया. बाद में मिसेज आसानो ने बताया कि प्रोफेसर सुजूकी का घर टोक्यो के एक उपनगर में है. यूनिवर्सिटी हालांकि बहुत करीब यानी तीस किलोमीटर के फासले पर है, मगर यह दिन के वक्त खुली रहती है और आपका सेमीनार भी उसी वक्त चलता है. लिहाजा आठ-दस दिन तक प्रोफेसर सुजूकी से मुलाकात की कोई संभावना नहीं है.

निराश होकर हमने फोन का सहारा लिया. बाद में प्रायः रोज प्रोफेसर सुजूकी फोन पर हमसे उर्दू बोलते थे और हम उनसे.

टोक्यो में हमें आये अभी तीन दिन ही हुए थे कि एक रात देर से होटल पहुंचे तो पैगाम मिला कि कोई साहब हीरोशी यागीता हमसे मिलने आये थे और हमसे मुलाकात न होने पर सरल उर्दू में अफसोस जाहिर किया था. दूसरे दिन हमने प्रोफेसर सुजूकी को फोन किया कि कोई साहब हीरोशी यागीता हमसे मिलने के लिए आये थे. हम तो उन्हें नहीं जानते. प्रोफेसर सुजूकी बोले, "मैं उन्हें जानता हूं. वह मेरे विद्यार्थी हैं. उर्दू में एम. ए. कर रहे हैं. कल रात मैं अपने विद्यार्थियों के साथ आपके होटल पर आया था, मगर आप गायब थे."

टोक्यो यूनिवर्सिटी में हमारा स्वागत-सत्कार बारह दिन बाद हुआ, मगर उस वक्त तक जापानी टेलीफोन पर खब उर्दू बोली गयी और एक दिन इसी टेलीफोनी उर्दू के कारण हम एक मुश्किल में फंस गये और बेहद शर्मिंदा हुए. बात दरअसल यह हुई कि टोक्यो पहुंचने के चार-पांच दिन बाद ही जापान की महिला यूनिवर्सिटी में हमारा स्वागत-सत्कार का कार्यक्रम तय हो गया और वहां हमारी अंग्रेजी का जापानी तर्जुमा करने की जिम्मेदारी मिसेज सुजूकी की थी, जो उसी यूनिवर्सिटी में पढ़ाती हैं. बहुत भली महिला हैं. महिला यूनिवर्सिटी में हम छह घंटों तक रहे, लंच भी लड़कियों के झुरमुट में किया. मिसेज सुजूकी ने हमें अपना पता और टेलीफोन नंबर दिया और इच्छा प्रकट की कि हम जल्द ही फोन करके उनसे मुलाकात का वक्त तय कर लें. जापान में हमारा नियम यह है कि हम उर्दू बोलने की चाह में सुबह उठकर प्रोफेसर सुजूकी को फोन करते हैं. लिहाजा दूसरे दिन सवेरे-सवेरे हमने प्रोफेसर सुजूकी को फोन करने की गरज से गलतफहमी में मिसेज सुजूकी का फोन नंबर मिला लिया. दूसरी तरफ से एक महिला की आवाज आयी तो हमने अंग्रेजी में पूछा, "आप कौन बोल रही हैं?"

दूसरी तरफ से अंग्रेजी में जवाब आया, "मैं मिसेज सुजूकी बोल रही हूं." हमने अपना परिचय दिया तो बेहद खुश हुई, बोली, "मैं आपके फोन का इंतजार कर रही थी."

हम थोड़ी देर के लिए हैरान रह गये कि प्रोफेसर सुजूकी की बीवी को हमारे फोन का इंतजार क्यों था. फिर सोचा, शायद प्रोफेसर सुजूकी ने अपनी बेगम साहिबा को हमारी आमद के बारे में बताया होगा. बातचीत जारी रही. मिसेज सुजूकी ने पहले तो हमारा हाल पूछा, तबीयत के बारे में सवाल किया, यह भी पूछा कि रात आपको नींद बराबर आयी या नहीं, कोई तकलीफ हो तो बताइए, मैं उसे दूर किये देती हूं. और फिर यह बताइए कि आपकी हमारी मुलाकात कब होगी. आप जानते हैं कि हम बड़े शरीफ आदमी हैं. दोस्तों की बीवियों से ज्यादा बातें नहीं करते. जब हमारी जात में मिसेज सुजूकी की दिलचस्पी बढ़ने लगी तो हमने सीधे-सीधे कहा, "मिसेज सुजूकी, आप से मुलाकात तो जरूर होगी, लेकिन जरा पहले अपने पति से हमारी बात करवाइए. यूं भी हम उर्दू बोलने के लिए बहुत बेचैन हैं."

मिसेज सुजूकी जरा परेशान होकर थोड़े अंतराल के बाद बोलीं, "मेरे पति! मेरे पति से बात करके आप क्या करेंगे?"

हमने कहा, "एक जरूरी बात करनी है. फिर उर्दू भी बोलनी है."

मिसेज सुजूकी बोलीं, "मगर वह तो उर्दू नहीं जानते."

हमने कहा, "मिसेज सुजूकी, अब मजाक छोड़िए. आप अपने पति को नहीं जानतीं."

मिसेज सुजूकी बोलीं, "मैं मजाक नहीं कर रही हूं. सच कह रही हूं. वह उर्दू नहीं जानते, बल्कि वह आपको भी नहीं जानते."

हमने कहा, "क्या बात करती हैं आप भी. उनसे हिंदुस्तान में हमारी मुलाकात हो चुकी है. टोक्यो आने के बाद हम रोज उनसे फोन पर बात करते हैं."

मिसेज सुजूकी बोलीं, "अगर यह बात थी तो कल जब महिला यूनिवर्सिटी में आपसे हमारी मुलाकात हुई थी तो आपने इस राज को क्यों पोशीदा रखा. जरा रुकिए. मैं अपने पति को अभी बुलाती हूं." अपने पति को बुलाने के लिए जब फोन का रिसीवर उन्होंने रखा तो अचानक हमें एहसास हुआ कि यह वह मिसेज सुजूकी हैं, जिनसे कल महिला यूनिवर्सिटी में हमारी मुलाकात हुई थी. सुजूकियों की बहुतायत में हमने फोन का नंबर गलत मिला लिया था और बेचारी मिसेज सुजूकी को परेशान कर रहे थे. मगर अब क्या किया जा सकता था. लाचार होकर फोन का रिसीवर पकड़े रहे. दो मिनट के वक्फे के बाद फिर फोन पर मिसेज सुजूकी की आवाज आयी. उन्होंने घबराये हुए लहजे में कहा, "मिस्टर हुसैन, इस वक्त तो मेरे पति बाहर गये हुए हैं, मगर इससे पहले कि आप मेरे पति से बात करें, मैं आपसे मिलना चाहती हूं."

हमने बेहद शर्मिंदगी के लहजे में कहा, "मिसेज सुजूकी, हमें माफ कर दीजिए. हम वायदा करते हैं कि आपके पति से कभी बात नहीं करेंगे. असल में हमसे गलतफहमी हो गयी है. हम टोक्यो यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर सुजूकी को फोन मिलाना चाहते थे, मगर गलती से आपका नंबर मिला बैठे. डायरी में मिस्टर और मिसेज की तरफ ध्यान ही नहीं गया. मुसाफिर हैं. टोक्यो में नये-नये आये हैं. सुजूकियों की अधिकता से परेशान हो गये हैं. खुदा के लिए हमें माफ कर दीजिए."

मिसेज सुजूकी ने फोन पर इत्मीनान की लंबी सांस लेकर पहले तो जोरदार कहकहा लगाया. फिर बोली, "चलिए, इस गलतफहमी में आपसे बात तो हो गयी. मगर सच तो यह है कि मैं बहुत परेशान थी कि आप न जाने मेरे पति से क्या बात करना चाहते हैं?"

फोन का रिसीवर रखकर हम इतने शर्मिंदा हुए कि बड़ी देर तक अपनी ही पेशानी पर पसीने के कतरे पोंछते रहे. बाद में प्रोफेसर सुजूकी को इस हादसे की सूचना दी तो वह बहुत खुश हुए, बोले, "आपके हक में यह हादसा नाखुशगवार होगा, मगर मेरे लिए तो खुशगवार है!"

क्रमशः

● अनुवाद : लक्ष्मीचंद्र गुप्त

इतिवृत्त

•जगदंबा प्रसाद दीक्षित

रेखांकन : रणबीर सिंह बिष्ट

▣ धारावाहिक उपन्यास : चौथी किस्त

. . .तीसरी किस्त तक

हम जानते हैं कि हमें हमेशा खुश रहना चाहिए, फिर भी हम उदास ही क्यों रह जाते हैं! —इस संदर्भ में अब तक आपने पढ़ा कि पिता के मरणासन्न होने की खबर पाकर स्टेशन पर उतरने के के बाद किस प्रकार पहले एक इक्केवाला उसे बस्ती में छोड़ गया और फिर वह एक ट्रक में सवार हो गया! —अब आगे पढ़िए कि सुखबतिया चाहे कहीं भी क्यों न हो, अंततः क्यों चली जाती है घर छोड़कर इसी तरह . . .

इस समय गाड़ी बायें टकराने जा रही थी. बनवारी ऊंघ रहा था. पता नहीं कहां से एक नदी साथ-साथ चलने लगी थी. कहीं-कहीं उसका पानी चमक जाता था. मुझे याद आ गया. . .यह वही नदी थी जो अक्सर सूख जाती थी. मैं इतने दिन इसे भूला क्यों रहा? कुछ चिराग दिखायी दे रहे थे. ड्राइवर कह रहा था, "सो गवा रे?"

"नाहीं! जागत हौं!"

"यह कउन गांव है रे?"

"गांव नहीं है मामा! रमजा बाबा का थान है."

"रमजा बाबा का थान?. . .अद्धा-पौवा कुछ मिलैगा?"

क्लीनर बड़बड़ाता है, "गाड़ी तो सम्हलती नहीं. अउर चढ़ाओगे तो रेता लोड करके सबेरे लउटोगे कइसे?"

लेकिन ड्राइवर ट्रक रोक देता है और इंजन बंद कर देता है. चारों तरफ खामोशी है. ड्राइवर कहता है, "बनवारी! "जा, देख. . .मिले तो एक अद्धा लै आ!"

बनवारी उतर जाता है. मुझे सरदी लग रही है. ड्राइवर कहता है, "तुम्हारे गांव का राम बरन है कि चला गवा?"

"कई साल में आया हूं. मालूम नहीं, है कि चला गया. . ."

ड्राइवर बड़बड़ाता है, "राधेलाल. . . परमेश्वरी दीन. . . सीताराम. . .सब चले गये . . . एक हम रह गये हैं. यू साला ठेकेदार नहीं होता. . .तो हम भी चले जाते. . ."

वहां कुछ चिराग टिमटिमा रहे थे. कुछ झोपड़े थे और शायद एक मूर्ति थी. . .या समाधि थी. यह ठिकाना पहले नहीं था. मालूम नहीं, कब बन गया और कब लोगों ने चिराग जलाने शुरू कर दिये. बनवारी अंधेरे में किसी को आवाज दे रहा था. अचानक मैं पूछता हूं, "सब लोग कहां चले गये?"

"जिसको जहां रस्ता मिला. . .चला गवा. कोई बंबई चला गवा तो कोई कलकत्ता. जो नहीं गये हैं. . .ऊ भी चले जायेंगे. हियां कउन तो रहेगा अउर अपनी मइया. . .न काम न धंधा. खेती-बारी में कुछ धरा नहीं है. जब देखो, ससुर सूखा पड़ता रहता है. . .यू साला ठेकेदार. . ."

इस समय कुछ कुत्ते भौंकना शुरू कर देते हैं. दड़बों में बंद मुर्गियां फड़फड़ाने लगती हैं. लेकिन पत्थरों से बंधे गधे उसी तरह ऊंघते रहते हैं. मैं अंदाज लगाता हूं, शायद कंजड़ों का डेरा है. कोई जागकर किसी और को जगाता है और कोई ढिबरी जला देता है. अब कुछ लोग बातें कर रहे हैं और बनवारी लौट आता है.

"बड़ी मुस्किल में दिहिस. पौवा है. बोला. . .सब खतम है."

"चल. . .पौवा है तो पौवा सही. चना-चिखौना नहीं है कुछ?. . .लेव मास्टर. . .तुमहूं चखौ थोड़ा. . ."

समाधि के चबूतरे पर बैठकर शराब पीता है ड्राइवर. क्लीनर आगे-पीछे से गाड़ी की जांच करता है. मैं अंधेरे में चारों तरफ देखने की कोशिश करता हूं. फिर मुझे चलते-फिरते लोग दिखायी देने लगते हैं. . .

. . .गोरे इलाके का डाक्टर नहीं आया. लेकिन इंजीनियर साहब की मेहरबानी थी. जीप में बैठकर एक और डाक्टर आया था. उसने जांच की थी और मियादी बुखार बताया था. इंजीनियर साहब और डाक्टर साहब ने काफी कोशिश की थी. हम लोग एक अस्पताल में पहुंच गये थे. अस्पताल बहुत बड़ा था और वहां बहुत भीड़ थी. पेट की बीमारियों ने सारे इलाके को दबोच रखा था. अस्पताल के फाटक के बाहर भी भीड़ थी और मुझे लगा था कि बहुत-से मरीज सड़क के दोनों तरफ पड़े हुए हैं.

बाबू सिंह ने कहा था, "जरा हाथ लगाओ."

वहां सफेद चादर में लिपटी दो लाशें जमीन पर पड़ी थीं और एक लाश को गाड़ी पर चढ़ाया जा रहा था. कुछ लोग आसपास खड़े हुए रो रहे थे. इस समय मुझे डर लगने लगा था. मैंने एक बार अपने बीमार पिता के चेहरे की तरफ देखा था. मुझे लगा था कि कहीं यह सच न हो जाये. लेकिन डरने का वक्त भी नहीं था. हमने बिस्तर समेत मरीज को उठाया तो बेहोशी के बीच उसने अचानक आंखें खोल दीं और आसपास के लोगों को पहचानने की कोशिश की. लेकिन सारे चेहरे अजनबी मालूम हुए. बहुत जल्द उसने फिर आंखें बंद कर लीं और दो लड़कों ने स्ट्रेचर उठाकर चलना शुरू कर दिया. हम लोग एक बहुत बड़ी भीड़ के बीच से गुजरने लगे. आउट पेशेंट डिपार्टमेंट में लंबी-लंबी कतारें थीं और सैकड़ों लोग इधर-उधर खड़े हुए थे. बहुत-से मरीज बैंचों पर पड़े थे और बहुत-सी आवाजें एक साथ गूंज रही थीं. हम लोग सीढ़ियां चढ़कर एक हॉल में पहुंचे थे. यहां हर जगह बिस्तर लगे हुए थे. पलंगों के बीच फर्श पर मरीज पड़े हुए थे. रास्तों के किनारे भी मरीजों को फर्श पर लिटा दिया गया था. कुछ लोग कराह रहे थे. कुछ के ऊपर बोतलें लटक रही थीं. कुछ लोग बीमार लोगों के पास बैठे हुए थे. कुछ मेहतर सफाई कर रहे थे और मरीजों को डांट रहे थे.

पिता को फर्श पर पड़े एक बिस्तर पर डाल दिया गया था. कहीं से आकर एक डाक्टर ने उन्हें सुई लगायी थी. दर्द से तिलमिलाकर उन्होंने एक बार फिर आंखें खोल दी थीं. फिर समझ में नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है. उन्होंने फिर आंखें बंद कर ली थीं. एक आदमी को इतना बेबस और असहाय मैंने पहले कभी नहीं देखा था. . .

मेरी बचैनी फिर बढ़ जाती है. मैं पूछता हूं, "अढ़ाई-तीन कोस और बाकी होगा. . . क्यों?"

क्लीनर अंधेरे में शायद मेरी तरफ ताकता है. कहता है, "हां मास्टर! मगर पइदल न जाना. टैम बहुत खराब है. दुई-दुई रुपैया के वास्ते कतल हो रहे हैं." फिर मुझे समझाता है, "पौवा खतम होय में देर न लगिहै. अबहीं चल पड़ेंगे. मामा!. . .मामा!. . ."

लेकिन झोपड़े में से कोई बाहर निकल आया है.

"राम राम मामा!"

"का रे भांजा! साला दारू दिहिस है कि ठंडा पानी. पौवा चढ़ा गया हूं. जौन कुछ हूता सो भी उतर गवा. . ."

"नाहीं मामा! बढ़िया चीज दिया है तुमका. कल्है चुनाया रहा. इत्तै बचा रहा. . .बस्स!"

"तुम साले झूठ बोलता है. ठेकेदार के वास्ते दुसरा माल . . .हम लोगन के वास्ते दुसरा . . . कहां गवा वो ससुर ठेकेदार?"

एक और झोपड़े में चिराग जल जाता है. धीरे-धीरे कई और लोग आकर बैठ जाते हैं. सरदी काफी है, लेकिन किसी को नहीं लग रही है. तंबाकू और चिलम की बात शुरू हो रही है. चारों तरफ वही कहानियां है. इस साल फिर वही हुआ. भरे भादों में बूंदाबांदी होती रही. खेत-हार में काम नहीं निकला. लोग भाग-भागकर कहीं और चले गये. ईंट के भट्ठों में कुछ काम मिला. लेकिन . . .अंधेरे में किसी की आवाज गूंजती है, ". . . का कहें मालिक. दिवारी पर पचास रुपैया पकड़ा दिहिस. अब होरी तक यही में गुजारा करो. . . का करैं, किहसे कहैं, लड़िका बच्चा लैके कहां जायें?"

इस समय जरूर एक बजा होगा. मामा की आंखें झंपी जा रही हैं. . .लेकिन आवाज जारी है. . . "दारू चुवा

चुवा के खूब पइसा बनाया तुम लोग. हम सब जानते हैं... बनवारी! ...अबे ओ बनवारी! इस्टार्ट कर गाड़ी..."

लेकिन बड़ी देर तक गाड़ी स्टार्ट नहीं होती. सिर्फ बातें चलती रहती हैं. ये बातें एक वक्त की हैं, जो बहुत बुरा है. ये बातें बहुत पुरानी हैं. हर वक्त मैं इन बातों को सुनता रहा हूं. हमेशा लोग पहले के वक्त की बातें करते रहे हैं. यह पहले का वक्त हमेशा बहुत अच्छा रहा है. लेकिन अब जमाना खराब हो गया है. कत्ल और डाके आम हो गये हैं..."अमुक गांव में दिन-दहाड़े फलाने का खून हो गया. सब देखते रहे. अमुक गांव में डाका पड़ गया. डकैत एक-एक चीज ढो ले गये. गांव-गांव तमंचे बन रहे हैं. बात-बात पर छुरी-चाकू चल रहे हैं. जो रह सकते हैं... रह रहे हैं. बाकी लोग भाग रहे हैं. जमीन में वह कस नहीं रहा. जहां इतने मन अनाज होता था... वहां अब मुश्किल से इतना होता है."

मैं चुप हूं. मैं शायद इन तमाम चीजों के आखिरी सिरे पर आ पहुंचा हूं. मैं उस आदमी के बारे में सोच रहा हूं, जो इन तमाम चीजों से गुजरकर आखिरी सिरे पर पहुंच गया है. यहां तक सब कुछ आता है. इसके बाद चीजें आगे बढ़ जाती हैं और आदमी रुक जाता है. जब तक नहीं रुकता है...लड़ता जाता है. जब रुक जाता है...तब भी लड़ता रहता है... मैं किसी को पुकारना चाहता हूं. किसी का नाम लेना चाहता हूं. किसी की आवाज सुनना चाहता हूं. लेकिन कुछ नहीं होता. कोई आवाज नहीं आती. कोई नाम सुनायी नहीं देता. मैं वही सोचने लगता हूं... जो सोचना नहीं चाहता...

इस अस्पताल की रातें काफी डरावनी होती थीं. मरीजों के बिस्तरों पर अंधेरा हो जाता था. सिर्फ थोड़ी-सी बत्तियां जलती रहती थीं. बाद में उनको भी बुझा दिया जाता था. जब सब बत्तियां बुझ जाती थीं, तो सिर्फ ड्यूटी रूम की बत्ती जलती रहती थी. सफेद कपड़े पहने हुए डाक्टर लड़कों और नर्सों का जमघट होता था. कभी-कभी कुछ नर्सों के खिलखिलाने की आवाज सुनाई देती थी. बीच में कभी-कभी वहां खबर आती थी कि कोई मर रहा है...या किसी की हालत बहुत नाजुक है...या कोई दर्द से बहुत ज्यादा छटपटा रहा है. तब हंसी की आवाजें थोड़ी देर के लिए बंद हो जाती थीं. कुछ लोग चले जाते थे. मगर फिर जल्द लौट आते थे.

बेहोश पिता के पास जमीन पर लेटा हुआ मैं सो नहीं पाता था. लोग लगातार कराहते-रहते थे. अंधेरे में तरह-तरह की आवाजें आया करती थीं. मैं बेहोश पिता की बंद आंखों की तरफ देखा करता था. एक मरीज के पास एक औरत लगातार जागती रहती थी. मैं कभी-कभी उसकी आवाज सुनता था. एक रात हिम्मत कर मैंने उससे उसके मरीज के बारे में पूछा था. थकी हुई आवाज में उसने कहा था, "न मरै में है...न जिये में. जो कुछ जमा-पूंजी थी... सब स्वाहा हो गयी. गहना-गुरिया बिक गया..."

एक और मरीज से मैंने पूछा था, "बाबा! तुमको क्या तकलीफ है?"

कराहकर उसने कहा था, "थोड़ा... पानी...!"

कुछ लोग मरीजों को अस्पताल में छोड़कर चले गये, फिर लौटकर नहीं आये. ऐसे मरीजों को अस्पताल में मरने नहीं दिया जाता था. एक बार बड़ी रात गये मेरी आंख लग गयी थी. लेकिन थोड़ी ही देर बाद अचानक खुल गयी. कोई आदमी रो रहा था और गिड़गिड़ा रहा था. मैंने उस अंधेरे में देखने की कोशिश की थी. दो वॉर्ड ब्वाय एक बूढ़े आदमी के कपड़े उतार रहे थे. बूढ़ा भर्रायी आवाज में कह रहा था, "तुम्हारे पांव पड़ते हैं... हमको मत निकारो...हमरी हालत ठीक नहीं है. हम... हमसे उठा नहीं जाता है... हमको...सूझता नहीं है...गनेशी! अरे ओ गनेशी! ...तू कहां चला गवा...हमका... छांड़िके...?"

मैं देखता रहा. धीरे-धीरे अस्पताल के सारे कपड़े उतर गये. इस समय तक कुछ और लोग जाग गये थे. अस्पताल के लड़कों ने उस बूढ़े कंकाल को उसके अपने कपड़े पहना दिये. एक मैली धोती और एक फटी बंडी. मैंने किसी से पूछा था, "इसको क्या तकलीफ है?"

"क्या मालूम! कुछ आंत-वांत जिगर-बिगर खराब है. दिन-रात बिस्तर गंदा करता रहता है. छै-सात दिन हुआ... कोई डाल के चला गया..."

अब दो लड़के मरीज को स्ट्रेचर पर डालकर ले जा रहे थे. कराहने की आवाज अब दूर चली गयी थी. एक नर्स बिस्तर की चादर बदल रही थी. इस समय सुबह होने वाली थी. वॉर्ड की खिड़कियों के उस पार कहीं-कहीं हलका उजाला दिखायी देने लगा था. मुझे सड़क पर पड़े मरीजों का खयाल हो आया था. मैंने अपने बेहोश पिता की ओर देखा था. अचानक मुझे डर महसूस हुआ था...

उस समय तक मैं यही समझ रहा था कि हम लोग सच-मुच लौट आयेंगे. आज जब ये तस्वीर गुजर रही हैं...तो मुझे लगता है कि हम लोग बस इसी तरह लौटेंगे. लौटते-लौटते कभी न लौटने का समय आ जायेगा. यह धरती इस समय अंधेरे में डूबी हुई है...लेकिन मैं इसकी हर चीज को पहचानने की कोशिश करता हूं. जब हम लोग एक जगह से दूसरी जगह भटकते रहे...तो सिर्फ इसलिए कि एक दिन यहां लौट सकें...इस तरह कि यहां से जाने की फिर जरूरत न हो. इस धरती पर लौटकर एक सीधी-सादी जिंदगी बिताने का सपना हर जगह देखते रहे. हर जगह हमने यहां की हर चीज को याद किया. यहां के तमाम आदमियों को याद किया, जिन्हें हम पीछे छोड़ गये. हमने सोचा कि हम जहां कहीं हैं...परदेसी हैं. वहां के आदमी हमारे लिए परदेसी हैं. हमारा देश कहीं और है. सिर्फ वहीं के लोग हमारे अपने लोग हैं. बहुत दिनों तक हम सिर्फ यही सोचते रहे थे. लेकिन वे दिन धीरे-धीरे गुजरते चले गये. हम अब कुछ और सोचने लगे थे.

इस समय ट्रक चल रहा है और मामा चिल्ला रहा है, "बनवारी...ऊ सामने कउन गांव है?"

बनवारी चिल्लाता है, "रमुआ का टोला..."

इंजन की आवाज जारी है..."चल साले! रमुआ का

टोला उहां नहीं है, रमुआ का टोला तो पीछे छूट गवा."

बनवारी चिल्लाकर कहता है, "वही रमुआ का टोला है!"

ड्राइवर मान लेता है, "अच्छा...तो जोखन का अड्डा तो खुला होगा अबै?"

बहुत थक गया है बनवारी, "रेता लोड करके सबेरे लउटना है...कि रात भर यहै अद्धा-पौवा करते रहोगे?"

लेकिन ड्राइवर कोई जवाब नहीं देता. अब हम कच्चे रास्ते की तरफ मुड़ गये हैं. मैं कुछ परेशानी महसूस करता हूं. आसमान की दूसरी तरफ पतला-सा चांद निकल आया है. मैं अपने सामने कुछ दूर पर एक टीला देखता हूं. बहुत छुटपन में हम लोगों ने कभी-कभी इस टीले को देखा था. यह टीला हमें बड़ा डरवाना लगता था. हमें लगता था...जैसे बेताल पचीसी का बेताल यहीं रहता है. आज इस टीले को देखकर मुझे लगता है कि यह काफी छोटा हो गया है. इसका बेताल भी इसे छोड़कर कहीं चला तो नहीं गया...

अब सामने रोशनी दिखायी दे रही है. सपाट मैदान में दूसरे सिरे पर गैस जल रही है और भीड़-सी लगी है. हम लोग पास पहुंच जाते हैं. ड्राइवर चिल्लाकर कहता है "जोखन! "जोखन!...जोखन गुरु! हम भी आ गये."

यहां रंडी का नाच हो रहा है और चारों तरफ भीड़ लगी है. बीच में बोतल खुली है और कुछ लोग पी रहे हैं. एक लड़की है...काली और कुछ मोटी. होंठ पान से काले पड़ गये हैं. आवाज बेसुरी है. गाती है. गाते-गाते घूम जाती है... मैं चुपचाप देखता रहता हूं...बहुत-बहुत पहले...कई साल बाद हमारा बाप घर लौटा था. हमें खुशी हुई थी. लेकिन बहुत जल्द हम डरने लगे थे. हमें खास तौर पर रातों से डर लगता था. हम चाहते थे कि रात न हो. मगर रात हो जाती थी. हम अपने बाप की आवाज सुनते थे—"अब जादा सती-सावित्री न बनो. हमको मालूम है...जब हम नहीं होते हैं तो यहां क्या होता है. दुनिया की आंखिन में धूल झोंक सकती हो...हमारी आंखिन में नहीं झोंक सकतीं..."

अब मां चिल्ला रही है...खब गालियां दे रही है. गुस्सा सम्हलता नहीं. अब रो रही है. सिसिकियां भर रही है. बीच-बीच में बोलती जाती है, "...अरे... कहते तुम्हारी जबान न गल गयी...हम पर अंगुरी उठाते हो...तुम्हारा नास होगा...परमात्मा देखेगा...!" फिर सिसकियां... "तीन बच्चे लैके पड़े हैं...दिन काट रहे हैं...कभी पइसा है...कभी नहीं...अपना पेट काट के बच्चन का पेट भरते हैं...हुआं तुम गुलछर्रे उड़ाय रहे हो...सराब... रंडीबाजी...अउर हमको बोलते हो...अरे तुम्हारा कभी भला नहीं होगा...!"

...रंडी का गाना रुक गया है. गिड़गिड़ा रही है, "नहीं मालिक! अब हमका जाय देव. तुम्हारे पांव पड़ते हैं."

"नहीं!...अबै नहीं जायेगी तू...!"

मैं देख रहा हूं...यह गांव की रंडी है. नटों और कंजड़ों की छोकरियां ऐसी ही रंडियां बन जाती हैं. ठाकुरों के छोकरे, तथाकथित ढेडों, चमारों और नीच जात वालों की छोकरियों

"अब ज्यादा सती-सावित्री न बनो. हमको मालूम है... जब हम नहीं होते हैं यहां तो क्या होता है. दुनिया की आंखिन में धूल-झोंक सकती हो...हमारी आंखिन में नहीं!"

को उड़ा ले जाते हैं. कुछ दिन बाद ये छोकरियां लौट आती हैं. रंडी अब भी गिड़गिड़ा रही है, "हमार महतारी बिमार है. दवाई लैके जाते रहीं..."

एक तरफ अलाव जल रहा है. बनवारी आवाज देता है, "का बे रजुआ? तेरा फसल-उसल का कटाई हो गवा?"

रजुआ आग के सामने ऊंघ रहा है.

"का बे, सुना नहीं? फसल-उसल का कटाई हो गवा? कुछ माल-पानी बना कि नहीं?"

रजुआ एक लंबी उबासी लेता है.

"फसल?...फसल का कटाई हो गवा... फसल के साथ हमारा भी कटाई हो गवा ..."

बनवारी बीड़ी निकालकर आग पर जलाता है, "तुम लोग का साला यही है. एक बरस पानी नहीं पड़ा तो भागे. हियां गिट्टियों में कुछ कमा लेते हो कि नहीं?...बीड़ी पियोगे मास्टर?"

रजुआ अपनी कहानी सुना रहा है—'फसल का क्या है... बच भी जाती तो यही होता. गिट्टी तोड़ते या लैन पर जाकर काम करते. खेतों की मजूरी से छह महीना भी गुजारा नहीं होता. औरत भाग गयी है. तीन बरस की छोकरी छोड़ गयी है"... अलाव की लपटें चेहरे पर आंख-मिचौनी खेल रही हैं... "बहुत पता लगाया...मगर पता नहीं लगा. कोई बोला कि हरगंज में किसी के पास है. फिर कोई बोला कि बालापुर में है. वहां पहुंच गया. जहां जो बताया...वहीं गया. तीन बरस की बिटिया को छाती से लगाये यहां से वहां भटकता रहा. फिर कोई बोला कि फूलमऊ में मारवाड़ी पंसारी के घर में है तेरी औरत. वहां भी पहुंच गया. पैर पकड़ लिये मारवाड़ी के...गिड़गिड़ाया...'हमारी मेहरिया लउटा देव. नहीं तो या बिटिया मर जायेगी...नहीं बचेगी...!'

मगर औरत नहीं मिली. पास में जो कुछ जमा-पूंजी थी ...खतम हो गयी. अब यहां लल्लन ठेकेदार के यहां गिट्टी तोड़ते हैं और छोकरी मड़ैया में पड़ी रहती है. बीमार है. सरदी...खांसी...बुखार. मर जायेगी. बचेगी नहीं. फसल...बेफसल...सब बराबर!"

...क्रमशः

अगले अंक में

सुखबतिया ने घर क्यों छोड़ा? ...उन तथाकथित छोटी जाति की लड़कियों के हिस्से में आखिर वेश्यावृत्ति ही क्यों आती है? और उसके पिता उसे किस हाल में मिले?

टोला उहां नहीं है, रमुआ का टोला तो पीछे छूट गवा."

बनवारी चिल्लाकर कहता है, "वही रमुआ का टोला है!"

ड्राइवर मान लेता है, "अच्छा. . .तो जोखन का अड्डा तो खुला होगा अबै?"

बहुत थक गया है बनवारी, "रेता लोड करके सबेरे लउटना है. . .कि रात भर यहै अद्धा-पौवा करते रहोगे?"

लेकिन ड्राइवर कोई जवाब नहीं देता. अब हम कच्चे रास्ते की तरफ मुड़ गये हैं. मैं कुछ परेशानी महसूस करता हूं. आसमान की दूसरी तरफ पतला-सा चांद निकल आया है. मैं अपने सामने कुछ दूर पर एक टीला देखता हूं. बहुत छुटपन में हम लोगों ने कभी-कभी इस टीले को देखा था. यह टीला हमें बड़ा डरवाना लगता था. हमें लगता था. . .जैसे बेताल पचीसी का बेताल यहीं रहता है. आज इस टीले को देखकर मुझे लगता है कि यह काफी छोटा हो गया है. इसका बेताल भी इसे छोड़कर कहीं चला तो नहीं गया. . .

अब सामने रोशनी दिखायी दे रही है. सपाट मैदान में दूसरे सिरे पर गैस जल रही है और भीड़-सी लगी है. हम लोग पास पहुंच जाते हैं. ड्राइवर चिल्लाकर कहता है "जोखन! "जोखन!. . .जोखन गुरु! हम भी आ गये."

यहां रंडी का नाच हो रहा है और चारों तरफ भीड़ लगी है. बीच में बोतल खुली है और कुछ लोग पी रहे हैं. एक लड़की है. . .काली और कुछ मोटी. होंठ पान से काले पड़ गये हैं. आवाज बेसुरी है. गाती है. गाते-गाते घूम जाती है. . . मैं चुपचाप देखता रहता हूं. . .बहुत-बहुत पहले. . .कई साल बाद हमारा बाप घर लौटा था. हमें खुशी हुई थी. लेकिन बहुत जल्द हम डरने लगे थे. हमें खास तौर पर रातों से डर लगता था. हम चाहते थे कि रात न हो. मगर रात हो जाती थी. हम अपने बाप की आवाज सुनते थे—"अब जादा सती-सावित्री न बनो. हमको मालूम है. . .जब हम नहीं होते हैं तो यहां क्या होता है. दुनिया की आंखिन में धूल झोंक सकती हो. . .हमारी आंखिन में नहीं झोंक सकती. . ."

अब मां चिल्ला रही है. . .खब गालियां दे रही है. गुस्सा सम्हलता नहीं. अब रो रही है. सिसकियां भर रही है. बीच-बीच में बोलती जाती है, ". . .अरे. . .कहते तुम्हारी जबान न गल गयी. . .हम पर अंगुरी उठाते हो. . .तुम्हारा नास होगा. . .परमात्मा देखेगा. . .!" फिर सिसकियां. . . "तीन बच्चे लैके पड़े हैं. . .दिन काट रहे हैं. . .कभी पइसा है. . .कभी नहीं. . .अपना पेट काट के बच्चन का पेट भरते हैं. . .हुआं तुम गुलछर्रे उड़ाय रहे हो. . .सराब. . . रंडीबाजी. . .अउर हमको बोलते हो. . .अरे तुम्हारा कभी भला नहीं होगा. . .!"

. . .रंडी का गाना रुक गया है. गिड़गिड़ा रही है, "नहीं मालिक! अब हमका जाय देव. तुम्हारे पांव पड़ते हैं."

"नहीं!. . .अबै नहीं जायेगी तू. . .!"

मैं देख रहा हूं. . .यह गांव की रंडी है. नटों और कंजड़ों की छोकरियां ऐसी ही रंडियां बन जाती हैं. ठाकुरों के छोकरे, तथाकथित ढेढों, चमारों और नीच जात वालों की छोकरियों

"अब ज्यादा सती-सावित्री न बनो. हमको मालूम है. . . जब हम नहीं होते हैं यहां तो क्या होता है. दुनिया की आंखिन में धूल-झोंक सकती हो. . . हमारी आंखिन में नहीं!"

को उड़ा ले जाते हैं. कुछ दिन बाद ये छोकरियां लौट आती हैं. रंडी अब भी गिड़गिड़ा रही है, "हमार महतारी बिमार है. दवाई लैके जाते रहों. . ."

एक तरफ अलाव जल रहा है. बनवारी आवाज देता है, "का बे रजुआ? तेरा फसल-उसल का कटाई हो गवा?"

रजुआ आग के सामने ऊंघ रहा है.

"का बे, सुना नहीं? फसल-उसल का कटाई हो गवा? कुछ माल-पानी बना कि नहीं?"

रजुआ एक लंबी उबासी लेता है.

"फसल?. . .फसल का कटाई हो गवा. . . फसल के साथ हमारा भी कटाई हो गवा . . ."

बनवारी बीड़ी निकालकर आग पर जलाता है, "तुम लोग का साला यही है. एक बरस पानी नहीं पड़ा तो भागे. हियां गिट्टियों में कुछ कमा लेते हो कि नहीं?. . .बीड़ी पियोगे मास्टर?"

रजुआ अपनी कहानी सुना रहा है—'फसल का क्या है. . . बच भी जाती तो यही होता. गिट्टी तोड़ते या लैन पर जाकर काम करते. खेतों की मजूरी से छह महीना भी गुजारा नहीं होता. औरत भाग गयी है. तीन बरस की छोकरी छोड़ गयी है". . . अलाव की लपटें चेहरे पर आंख-मिचौनी खेल रही हैं. . . "बहुत पता लगाया. . .मगर पता नहीं लगा. कोई बोला कि हरगंज में किसी के पास है. फिर कोई बोला कि बालापुर में है. वहां पहुंच गया. जहां जो बताया. . .वहीं गया. तीन बरस की बिटिया को छाती से लगाये यहां से वहां भटकता रहा. फिर कोई बोला कि फूलमऊ में मारवाड़ी पंसारी के घर में है तेरी औरत. वहां भी पहुंच गया. पैर पकड़ लिये मारवाड़ी के. . .गिड़गिड़ाया. . .'हमारी मेहरिया लउटा देव. नहीं तो या बिटिया मर जायेगी. . .नहीं बचेगी. . .!'

मगर औरत नहीं मिली. पास में जो कुछ जमा-पूंजी थी . . .खतम हो गयी. अब यहां लल्लन ठेकेदार के यहां गिट्टी तोड़ते हैं और छोकरी मड़ैया में पड़ी रहती है. बीमार है. सरदी. . .खांसी. . .बुखार. मर जायेगी. बचेगी नहीं. फसल. . .बेफसल. . .सब बराबर!"

. . .क्रमश:

अगले अंक में

मुखबतिया ने घर क्यों छोड़ा? . . . उन तथाकथित छोटी जाति की लड़कियों के हिस्से में आखिर वेश्यावृत्ति ही क्यों आती है? और उसके पिता उसे किस हाल में मिले?

अगला अंक

हमारी पीढ़ी—प्रताप, शिवाजी, गांधी, नेहरू, आजाद, भगतसिंह और सुभाष के पदचिह्नों पर चलने की बजाय जयचंद और विभीषण की राह पर क्यों बढ़ रही है?

दशहरे के अवसर पर राम-रावण के संदर्भों में एक ताजा सवाल और इसके अनदिखे पहलुओं का मनोवैज्ञानिक जायजा लेतीं—

गिरिराज किशोर, ख्वाजा अहमद अब्बास, मनमोहन सरल, संजीव, नीता श्रीवास्तव और अपर्णा टैगोर की सशक्त कहानियां.

इतिवृत : जगदंबा प्रसाद दीक्षित

जब आदमी हंसना चाहता है तो हंस नहीं पाता और जब रोना चाहता है तो रो नहीं पाता!—हंसने और रोने के सामाजिक और आर्थिक संसार से साक्षात्कार करवाती धारावाही उपन्यास की अगली किस्त.

चलो जापान, चलो जापान!

हंसते-हंसाते, मीठी चुटकियां ले-लेकर घर बैठे जापान की सैर करवाते **मुज्तबा हुसैन** के सफरनामे का चौथा पड़ाव.

प्रीति इतनी पायी है कि आत्महत्या भी न कर सका!

'आवारा मसीहा' के अन्वेषी प्रख्यात साहित्यकार **विष्णु प्रभाकर** से साहित्य, दिल और दुनिया के अनेक सवालों पर **से. रा. यात्री** की लंबी बातचीत.

सारिका

१ अक्तूबर, १९८१

गुस्ताखियां

प्रकाश पंडित की हरदिल अजीज खट्टी-मीठी यादों का पिटारा!

संस्मरण

- अपनी ही अटारी में किराये का चायघर : भगवत शरण उपाध्याय.
- विमान में वह भय का भूत: राजेंद्र अवस्थी.

चित्रकथा

दिल तो दिल है!

मृत्यु से जूझते एक स्वीडन निवासी छायाकार हृदय रोगी द्वारा अस्पताल में अपने बिस्तर और कमरे से कैमरे में कैद किये गये अस्पताल की दिनचर्या को दर्शाते जीवंत छाया चित्र.

हलचल

प्रेमचंद जयंती समारोह, लखनऊ में पढ़ा गया **अजित कुमार** का विवादास्पद आलेख और नितांत दो भिन्न नजरियों में लिखी गयी समारोह की गतिविधियों के संदर्भ में साहित्य और साहित्यकारों के परिवेश को उजागर करती सचित्र रोचक रपटें.

जरिया-नजरिया, पाठकों का पन्ना, लघुकथाएं, गजलें, आसपास बिखरी कहानियां, पखवारे की पुस्तकें आदि स्थायी स्तंभों सहित.

'सारिका'

जिसे न पढ़कर आप अपना नुकसान करते हैं!

श्रद्धांजलि

विलियम सरोयां को सलाम!—जीवनपर्यंत संघर्षरत रहे जाने-माने अमरीकी कथाकार, जो 18 मई, 1981 को हमारे बीच से उठ गये, उनकी स्मृति को ताजा करती हुई तीन विशिष्ट रचनाएं—

- **रोजगार : विलियम सरोयां की कहानी**
- **विलियम सरोयां ने कहा था : सरोयां के उत्कृष्ट कथन**
- **अपनी लड़ाई आप लड़ो!—उनके जीवन और रचनाधर्मिता से विस्तृत परिचय करवाता देवेंद्र इस्सर का जानकारी पूर्ण आलेख.**